

अभिनव रामायण

‘सतयाल’

अनुवादक

सोमेश्वर पुरोहित



नवजीवन प्रकाशन मन्दिर

मुद्रक जीर प्रकाश
जीवनजी शास्त्राभाद देसाई
नवजीवन मुद्रणालय अहमदाबाद-१४

© नवजीवन ट्रस्ट १९६५

प्रथम संस्करण ३०००

जुलाई, १९६५

दो शब्द

भारतमें जो चार महापुरुष धर्म-संस्थापकों के रूपमें प्रसिद्ध हैं वे क्रमशः इस प्रकार हैं (१) राम, (२) कृष्ण, (३) महावीर और (४) बुद्ध। इनमें सबसे प्राचीन महापुरुषों के नाते प्रथम नाम भगवान् रामका जाता है। रामका जीवन चरित्र ही रामायण है।

‘अभिनव रामायण’ कोई महर्षि वाल्मीकि अथवा गोस्वामी तुलसीदासजीकी रामायणका अनुवाद नहीं है। यह सबधर्म-संस्थापक अनुरूप रामायणका रूपांतर है। फिर भी रामायणके मूल भावकी भलीभांति रक्षा करके यह रूपांतर किया गया है इसलिए इसमें प्राचीन संस्कृतिमय भारतके पवित्र अंगोंके सातत्यकी रक्षा हुई है। इसी प्रकार इसके बाह्य कलेवरमें युगके अनुरूप परिवर्तन भी हुए हैं। कहना चाहिये यह है कि इसमें सातत्यकी रक्षा और परिवर्तनशीलता दोनों पहलुओंका निर्वाह करनेका प्रयत्न किया गया है इसलिए इसका नाम ‘अभिनव रामायण’ रखा गया है। और यह नाम पाठकोंको साधक लगे बिना नहीं रहेगा।

पौराणिक कालमें भय लाभ और चमत्कारोंकी त्रिवेणीका महत्त्व लोगोंमें था। इस पौराणिक युगमें अब हृदय-परिवर्तन, समाज धर्म और चरित्र निष्ठाकी त्रिवेणी लोगोंमें प्रतिष्ठित होने लगी है। इस अभिनव युगमें जिन महात्मा गांधीके व्यक्तित्वगत चरित्र तथा विश्व-व्यापक कार्योंका बहुत बड़ा हाथ है उन गांधीजीका उपास्य मन भी राम था। वे रामायणके राजा हरिश्चंद्रसे सत्यता सीखे थे और मन वाचा तथा कमस उद्दान सत्यकी आराधना की थी—और वह भी केवल व्यक्तिगत जीवनमें नहीं किन्तु सामाजिक और राजनीतिक क्षेत्रोंमें भी। इसका कारण यह है कि गांधीजी केवल सत्यको ही ईश्वर मानते थे। उन्होंने वचनसे ही ‘राम’ के मंत्रसे समयकी आराधना की थी। इस आराधनाके परिणाम-स्वरूप जब उन्हें मृत्युका उपहार मिला, तब उनके अन्तिम शब्द हैं ‘राम’ ही थे। वे ‘रामराज्य’ के अभिलाषी थे।

ये मानते थे कि सत्यरूपी महान धर्ममें अखिल विषयका समावेग हो जाता है। राज्य भी उसीका एक अंग है। राज्यका अर्थ है विशाल समाज। विशाल समाजकी व्यवस्थामें स राज्यका जन्म होता है। इसी प्रकार समाजका जन्म है विशाल परिवार। इस तरह साचें तो परिवारकी एक छोटी इकाईमें स ही विशाल परिवाररूपी समाज बनता है। जस छोटे परिवारमें पुरुष स्त्री और सन्तानका समावेग होता है उसे गृहस्थाश्रममें सम्पत्ति माता पिता पुत्र-पुत्री पति-पत्नी भाई-बहन सास-ससुर देवराना जितानी सौतली माता सौतला सतान आदिका समावेग होता है, वस ही इस विशाल परिवारमें सयम स्वायत्त्याय आदि सदगुणका समावेग आवश्यक हो जाता है। इस दृष्टिसे वर्णाश्रम — जो भारतीय समाजका मूल आधार है — के समस्त धर्म कर्मोंका सुन्दर और मागन्ध्याय पान रामायणसे हमें अपने आप मिल जाता है। इस प्रकार सारी दृष्टियोंसे रामायण और राम जीवन प्ररक्ष और प्रिय बन सकत ह क्योंकि उनमें व्यक्ति परिवार समाज राज्य विश्वराज्य आदि सार विषय आ जात ह।

आज जब भौतिक विज्ञानने संपूर्ण विश्वको बाह्य दृष्टिसे निकट ला दिया है समूचे विश्वकी मानव-जाति विश्वजातिक लिए तरस रही है तथा युद्ध उसे अप्रिय और मित्रता प्रिय लगती है तब आंतरिक दृष्टिसे भी विश्वको निकट लानकी बहुत बड़ी आवश्यकता है। ऐसे समय इस प्रकारका साहित्य अनिवार्य हो जाता है ज्ञा सार विश्वकी मानव जातिको एक मंच पर एकत्र कर सके और उसे मन्त्रीभावका अनुभव करा सके। इस प्रकारके साहित्यमें रामायणका ध्येष्ट स्थान है। वह विश्वक काव्योंमें भी आत्किाव्य है।

ऊपरी दृष्टिसे विचार करे तो इस 'अभिनव रामायण से यदि लोकतन्त्रका लोकलक्ष्मी बनानकी यानी केवल चुनावोके समय ही नहीं परन्तु दैनिक राजकीय जीवनमें लोगोंके मागन्ध्याय राज्यक लिए अनिवार्य बनानकी लोगोंकी स्वय ही सत्य प्रेम और 'यायकी त्रिवेणी स्वाकार करनकी तथा राज्यके स्तर पर अखिल विश्वमें लोकतन्त्रको सब राष्ट्रव्यापी बनानकी प्रेरणा मिले तो मुम बहुत बड़ा सन्तोष होगा।

जनाने इस दामें गहनमें गहन विचार करके भूतकालमें उस आचरणमें उतारा है। उठाने भी भगवान रामको भगवानके रूपमें देखा है और इस सम्बन्धमें अपनी परिभाषामें लिखा है। यह भी इसका एक प्रमाण है कि रामका जीवन सर्वप्रिय है।

आज जब विश्वसेवाका क्षेत्र खुल गया है तब विश्वके राष्ट्राकी प्रजा भारतक सामने इसक लिए एकटक देख रही है। भारतके सबके ऐसे सत्सृष्टि-मनस्वयके महासमुद्रमें कूदें उससे पहले यह आवश्यक है कि वे अपनी आध्यात्मिक दृष्टिको स्थिर और मजबूत बनायें। इस खयालमें भी गीता और रामायणका पठन चिन्तन और प्रत्येक क्षेत्रमें तदनुरूप आचरण ढाना आवश्यक है।

दम-न्यारह वष पूर्व भालनल्काटाके प्रयोगमें लगे हुए सबका और भविकाआके समस्त गीता और रामायणका अभिनव दृष्टिस रसप्रद अध्ययन चल रहा था उस समय यह कल्पना भी नहीं थी कि 'विश्व वात्मल्य' में रामायणका स्पातर इस रूपमें लिखा जा सकेगा और इसका प्रकाशन बापूके साहित्यका प्रकाशन करनेवाली नवजीवन संस्था ही करेगी।

इसक संपादनमें नये किन्तु भक्तिप्रिय लखक भाई मनु पंडितने अच्छा रस लिया है।*

‘सतबाल’

सपादकीय

मनुष्य प्रवृत्तिके बिना रह नहा सकता है। इस प्रश्न पर अनेक प्रकारके पिष्टपषण हुए हैं। सब काद यह मानते हैं कि प्रवृत्तिका बदलवानमें प्रवृत्तिका बड़ा हाथ होता है। फिर भी हम यह जानते हैं कि प्रवृत्तिका जन्म बलितम होता है और वृत्तिका निमाण विचारम होता है। इसलिए अन्तमें ता मनुष्य अपन विचारासे जगनका सज्जन करता है और जहा ऐसा नहीं होता बहा वह कल्पनाक गगन विहारमें — मानसिक जगनमें — लीन रहता है।

इसलिए विचाराकी शुद्धताका अर्थ हुआ विश्वशुद्धि। विचारामें जय विकार उत्पन्न होता है तब हम उन् शुचिविचार वृत्त ह और व हमें स्वाय तथा सम्पत्तिक संप्रहर्ष माग पर घसाट ल जाते हैं। मन्विचाराम नीलगा जन्म होता है। और यह नील जब हृदयक माय मग्न होता है तब चाहे जस मनुष्यके मनमें आ सहानुभूति उत्पन्न किय गिना नहीं रहता। नीलके लिए यदि हम भादका कल्पना कर, ता भक्ति उसकी बहन है। नील और भक्ति जब एकमात्र मनुष्यमें प्रवेश करत हैं तब आसक्ति भस्मीभूत होकर उड जाती है। इस नील और भक्तिकी आर मनुष्यको आरपिन करे वह मत्माहिय है। ऐम साहित्यमें रामायणका स्थान बहुत ऊचा है।

आज जगनमें मौनिक विज्ञान आध्यात्मिकताकी आर जनापाम यड रहा है और भारतमें घुमी हुई व्यक्तिगत स्वामित्वकी भूत स्वाय पूरा भावना समाज तथा समष्टि माय मुमल साधनेका प्रयत्न कर रही है। ऐम अनुकूल समयमें यह 'अभिनव रामायण' प्रकाशित हो रहा है यह भी एक शुभ चिह्न माना जायगा।

हमार विश्ववास्य'क पाठवासी आगम मुनि मनवाल्जीक गमन यह माग आई थी कि "जाय रामायणक बारमें स्वतंत्र विचार प्रकट करनवाला कुछ लिखिये।" मनवाल्जीने हम सबकी माग स्वाकार का

गया, ता उनकी पश्चात्तापपूर्ण मन स्थितिको समझा जा सकता है। वे समाजका क्या मुह दिखाना? इसीलिए गौतम ऋषि उनसे कहत ह

अहल्या, मुने आगा थी कि एक बार खड़ी होकर तुम मर मामन देखोगा। परन्तु एमा नहा होना था। अब म अतिम विदा लेता हू और तुम्हारी मूलके लिए तुम्ह क्षमा करता ह। मर पश्चात्तापने मुझे गुद कर दिया है। तुम मुने क्षमा कर दागी इसका मुने विश्वास है। परन्तु तुम्हे खड़ी करने जितनी गक्ति आज मुझमें नहीं रही। बिना समय तुम्ह तुम्हारा मन्त्रा उद्धारक अवश्य मिटेगा ऐसा मान कर म गतन्य स्थानको जाता हू। (पृ० १९)

इसी प्रकार बालि और सुग्रीवके युद्धके समय भगवान रामचन्द्र गुप्त रीतिम वपटस बालिका महार करत ह तब लेखक बालिस जा वचा कहलात ह व हमारी भक्तिको तीक्ष्ण बाणाके समान लगत ह। अब जरा हम कहाका चित्र देखें

‘बालिने नीतिको तो पहलेसे ही एक ओर रख दिया था। अब युद्धके सामान्य नियमाका भी वह उल्लंघन करने लगा। कुछ दूर विश्राम करके स्वस्थ होनेकी सुग्रीवकी भाग बालिन स्वीकार तो कर ली परन्तु उसकी अभावधानीका लाभ उठानके लिए उसने अचानक अपनी गदा उठाई।’ (पृ० १३३)

किन्तु रामस यह नियम-भंग कैसे सहन हाता?

जन्में जब बाणि निष्पक्ष रघुवीरको सुग्रीवके पक्षपाती ठहराता है, तब राघव उत्तर देते हैं

“जब तुमन सामान्य युद्ध नियम भी ताड़नका प्रयत्न किया, तभी मुझे यह कदम उठाना पडा। तुमने मुझे पक्षपाती कहा यह एक प्रकारसे सच है। सत्य और न्यायका पक्षपाती म ममान रहा हू और आगे भी रहूंगा।’ (पृ० १३५)

इसी प्रकार राज्यनशकी स्थिरताके आधार-स्तम्भके समान चार दल साम, दाम, दण्ड और भेद आंतरिक और बाह्य दोनों ही रूपमें सबका नूतन अधर्म हमारे सामने जात ह

‘सामका अर्थ है आत्मीयताके साथ प्रजाका सम्पर्क साधना। दामका अर्थ है एक ओर राज्यके कर्मचारियोंका समुचित वतन देना और दूसरी ओर प्रजाक सामान्य लागाका भारी न मालूम हो। ऐसे धाँ और हलके करास ही शासन चलाना। दण्डना अर्थ है प्रजानो हानि पहुँचानेवाला भाग पर अपानका या भलस लग हुए लागाको परवाना हो। ऐसी परिस्थिति उत्पन्न करना। और भदका अर्थ है इस तरहका प्रयत्न करनेका वा भी कुछ ऐसे लोग प्रजामें रह जाय तो उन्हें समाजसे अलग करके रखना और सुधारनका मौका देना। इनकी बात जानकर बगाने वारेमें हुई।

बाह्य बलाने सम्बन्धमें सामना अर्थ है भीड़ आन्तर राष्ट्रीय सम्बन्ध स्थापित करना। दामना अर्थ है अन्य देशका गोपण न करना तथा अपन देना साधन न होने देना। दम रणाक बोध हानेवाला आर्थिक करार हो कहा जा सकता है। दण्डका अर्थ है जो राष्ट्र हमारा राष्ट्रक वारमें गलतफहमी रखन हो उनको गलतफहमी दूर करना। और भदका अर्थ है मिडाल भन्ने कारण जयका साधनाका आर्थिक कारण जिन राष्ट्रके साथ हमारा राष्ट्रका मेल न साथ उन राष्ट्रान साथ अपन राष्ट्रका सम्बन्ध घटा देना। (पृ० १४४-४५)

स्वतन्त्रनगरी स्वका अर्थ मानका नगरा कहा परन्तु एमा नगरी है जिनार निवासियोंका स्वयं अयत्न प्रिय है।

स्वान्न स्वान्न पर मुनि था मन्त्रालयका गणरा वृत्ति नया अर्थ घना कर हमारा बड़िक साथ उमका मल बढा देना है। आज तर हमारा नानि व्यक्ति-व्यक्ति रही है। अर नम गुण व्यक्ति बनानका सम्पद आ गया है। गांधीजी हमें यह ना एक नई निति दी है।

हमारा दण्ड लागामें एक आत्मा बलपना अनास्था आन पना है। वह है रामराजका कलना। एमा क्या है? कारण यह कि हमारा हमारे आज भा राजा राम बढ है। परन्तु हमारा

नई पीढ़ी इस आध्यात्मिक पूजीको धीरे धीरे खोती जा रही है। इसके फलस्वरूप आज सबत्र नतिक दारिद्र्य दिखाई पड़ता है। स्व० महादेव देसाईन ठीक ही कहा है कि

रामायणका क्यामून तो बालकको माताके दूधक साथ ही पीनेका मिलना चाहिये। माताके दूधक साथ पीनको न मिले तो जबसे बालक पिताका गानमें बैठकर कहानिया सुननेका रसिया बने तबसे रामायणकी क्याआक माध ही उसका शिक्षाका शुभ आरम्भ होना चाहिये। परन्तु एमे माता पिता आज तो गुजरातमें और भारतमें भी बहुत कम ह।

मुनि श्री सतबालजी द्वारा रचित यह अभिनव रामायण गांधी युगका प्रतिबिम्ब है। लेकिन बहुत दूर हम प्रतिबिम्बमें भी मूल वस्तुका पहचान करने ह। यह प्रतिबिम्ब किमी रामभक्तको गांधी-युगका राम-चरित रचनेका प्रेरणा दे तो इसमें अधिक सुन्दर और क्या हो सकता है ?

वात्सल्यधाम
मन्त्री (मूर्ख)

मनु पंडित

२५ मायावी भूग	
२६ सीता-हरण	
२७ गृध्रराज जटायु	७८
२८ रावणक जत पुरमें	८२
२९ सीताकी शाघकी चिन्तामें	८५
३० जटायुकी मुक्ति	८७
३१ कवचस भेंट	९१
३२ रामभवन गवरी	९५
३३ मधुर सक्न	९९
३४ सुग्रीव और हनुमान	१०२
३५ सुग्रीवकी मिथता	१०९
३६ लक्ष्मणकी मानदष्टि	११३
३७ बालिकी कथा	१२०
३८ सुग्रीवका राज्यारोहण	१२३
३९ लक्ष्मणकी अङ्गुलाहट	१२६
४० अधाधधी और पश्चात्ताप	१३८
४१ सीताकी क्षोधमें	१४१
४२ हेमा	१४३
४३ एक विचित्र महाप्राणी	१५०
४४ अहिंसान मूढम स्वप्नमें	१५६
४५ सीताजीकी बन्दी	१५९
४६ विभीषण	१६१
४७ त्रिजटा	१६३
४८ मन्त्रिका तो रामकी है।	१६६
४९ लक्ष्मण	१६८
५० लक्ष्मणका स्वप्न	१७०
५१ मन्त्रिकारा मथन	१७३
५२ उमिन्ना और मायवी	१७६
५३ पुत्राका स्मरण	१७९
	१८२
	१८५

८३ रामका अयोध्यामें प्रवेश	२९१
८४ इनमें राम कहा ह ?	२९३
८५ अपवाह और मनामयन	२९६
८६ सीताका त्याग	३०२
८७ लक्ष्मण अयोध्या लौट	३०८
८८ वाल्मीकि-आश्रममें सीता	३११
८९ वाल्मीकिवा वात्सल्य	३१५
९० प्रजा राज्यसे बड़ी है	३१८
९१ लव और कुश	३२३
९२ स्वर्णरी सीता	३२५
९३ यमका अश्व पकड़ा गया	३२८
९४ लव-कुशका पराक्रम	३२९
९५ पिता-पुत्रका परिचय	३३४
९६ सीतानी पृथ्वीमें समा गई	३३६
९७ लक्ष्मणकी जल-समाधि	३४१
९८ भरतको उपदेश	३४४
९९ विभीषणस	३४७
१०० जाम्बवन्तस	३५०
१०१ कुशको राजगद्दी	३५२
१०२ अंतिम सन्देश	३५४

८३ रामका अयोध्यामें प्रवेश	२९१
८४ इनमें राम कहा ह ?	२९३
८५ अपवाह और मनोमन्थन	२९६
८६ सीताका त्याग	३०२
८७ लक्ष्मण अयोध्या लौट	३०८
८८ वाल्मीकि आश्रममें सीता	३११
८९ वाल्मीकिका वात्सल्य	३१५
९० प्रजा राज्यसे बड़ी है	३१८
९१ लव और कुश	३२३
९२ स्वर्णकी सीता	३२५
९३ यज्ञका अरव पचड़ा गया	३२८
९४ लव-कुशका पराक्रम	३२९
९५ पिता-पुत्रका परिचय	३३४
९६ सीताजी पृथ्वीमें समा गई	३३६
९७ लक्ष्मणकी जल-समाधि	३४१
९८ भरतको उपदेश	३४४
९९ विभीषणस	३४७
१०० जाम्बवन्तस	३५०
१०१ कुशको राजगद्दी	३५२
१०२ अन्तिम सर्ग	३५४

अभिनव रामायण

शिव-उमा सवाद

शिव और उमा आपसमें बातें करने हुए चले जा रहे हैं। एकाएक घन जंगलमें किसीके विलापका वरण स्वर उन्हें सुनाई पड़ता है। भगवान् शिव विलाप कर रही उमा मानव मूर्तिके पास दौट कर जान ह और उसके चरणोंमें गिर कर वन्दन करने ह।

उमा आश्चर्यचकित हो जाती ह। यह क्या? ये मेरे पति देवाके भी देव — महादेव प्रणाम करते ह और वह भी अपनी पत्नीके विरहमें पागल बने हुए एक साधारण मनुष्यके चरणोंमें? उमाके मनके भावाको शिवजी ताड़ जात ह और कहत ह 'ये राम ह। सारा ससार जिनके चरणोंमें नम्र प्रणाम करता है ऐसे देवाके भी देव राम।' उमाके मनमें शका उठती है व साचती ह देखू तो सही बस ह ये राम। लेकिन इनकी परीक्षा बस की जाये?'

शकवार्ताश्रममें कहा जाता है कि जहरकी परीक्षा नहीं होती। मतलब यह कि परीक्षक बनना आसान है परन्तु परीक्षकमें यदि परीक्षा करनेका योग्यता न हो तो वह मुसावतमें फस जाता है और परीक्षककी भी परीक्षा हो जाती है।

*

पड़ाके एक सुन्दर झुरमुटमें सीताका रूप लेकर एक सुन्दर रमणी खड़ी थी। उसकी तिरछी जालें रवि किरणकी तरह धरती पर झुकी हुईं थ। और उसके मुह पर भीठी मुसकान खेल रही थी।

लक्ष्मण अपने उग्र स्वभावके कारण पलमरके लिए भ्रममें पड़ गये, परन्तु निर्विकार और एकपत्नी-भरायण राम बस भ्रममें पड़त? उहाने गतिंस विचार किया और व वस्तुस्थितिका समझ गये 'महा देव-पत्नी उमाके सिवा ऐसा साहम करनेकी हिम्मत दूसरी किस शक्तिमें हो सकती है? परन्तु ।

उमा जसी महासती बिना करे और वह भी इस प्रसारा ?
साहस और बिना दोनोमें मर्यादा ही साया सी है। उसी क्षण
बोध प्रकट करनेवे बदले म म मुसकाने हुए राम बोले

सौम्य भूर्ति, सन्तानि कहा ह ? आप अकेला यहां क्या भ्रम
रही ह सती ? दसक-याकी मुसकान गायर हो गई। मुह बग हो
गया। बिना बहुत मढ़गा पड़ गया। ब लज्जित हावर कहात चलती
बना और भिक्कीव पास पहुची। भिक्काने पूछा 'बन्धन दर गी
दवी' तुम कहा गई थी ?'

'प्रभु रामक दान करन सबुचाते हुए उमा बोला।

'सीताका रूप देखर ठीक है न ?' कहते कहते भिक्कीका
चेहरा थोडा अधिह गभीर हो गया। कुछ क्षण ब चुप रह। उनके
मनमें चितने ही विचार घूम गये।

जो अब करत सती मन प्रीती।

भितर भगति प्रभु हाइ अनीती॥

उन्हां उमाने बन्धन तुम सी जानती हो कि राम मर
पूज्य ह म उनका पुजारी ह। मे मरे लय ह, म उनका दोस्त ह।
रूप बदल कर तुम सीता बनी यह लोताकी दृष्टिमें भल ही सामूली
बात हो परन्तु लोग उनके मूढमस मूढम आचरणका भी अनुकरण
करत ह उन मेरे और तुम्हारे जन गणक लिए ता यह बहुत बड़
बात है। जानस म तुम्हारा पूजक रूपा प्रणयी नहीं। तुम्हे म
मानाके स्थान पर श्रद्धा पत्नीके स्थान पर नह।'

नहीं नहीं ऐसा न कहिये। मेरी भूलका प्रायश्चित्त आप
करगे ? और वह भी इतना भारी ?' सतीन कहा।

प्रणयन पूजाका स्थान क्या छोटा है ?

'शक्तिधरके लिए शक्ति पूजाके स्थान पर शोभा नहीं पाती,
परन्तु प्रणयन स्थान पर ही शोभा पाली है।

यह कथन मके सत्य हो परन्तु पूजारहित प्रणयन विकारका
निवार हो जाता है।

“परन्तु मुझे आपकी प्रणयिनी बन कर रहना है स्वामिनी बन कर नहीं।’

‘ता महाशक्ति, तुम भी तपस्या करके पावन बना। तपके बिना शक्ति पागुलमें बदल जाती है।’

‘बहुत अच्छा। परन्तु तपस्याका समय कितना होगा?’

‘दूसरे जन्ममें मिलना।’ कह कर शिवजी तपस्यामें लीन हो गये। उमा विचारामें डूब गई। एक विचार उनके मनमें यह आया कि ‘विनोदका फल ऐसा हानिकारक होता है। प्रत्येक क्रियामें विवेक होना चाहिये।’ दूसरा विचार यह आया कि ‘रामकी परीक्षा लेनेमें स्वयं मेरी ही परीक्षा हो गई। तीसरा विचार यह आया कि ‘सन्ताका विनोदपूर्ण वचन वज्रलेपने समान होता है, असत लावो सौगंध लायें तो भी उनका वचन बया होता है।’

मेरे स्वामी सन्त ह। उनका वचन पूरा हा और जगतको इस उदाहरणसे पाठ सीखनको मिले, तो मेरे एक जन्मका बलिदान कोई बड़ा नहां कहा जायेगा। लेकिन प्रभुस पूछ तो देखू कि मेरी जीवन साधनामें कौनसा ग्लेप रह गया है।’

सती ‘दूसरे जन्ममें आपको पतिक रूपमें प्राप्त करनेमें अब कौनसे तत्त्व बाधक ह प्रभु?’

‘नकर ‘स्वमानकी अतिशयता और मेरा स्थूल आकृतिकी ममता।’

शकरकी यह बात सतीके गले नहीं उतरी। इतनी भारी तपस्या और शिवगुणाका इतना चिंतन होनके बाद भी ये दोष मुझमें रह गये ह, इस पर सतीको विश्वास नहीं हा रहा था। परन्तु गहरी पठी हुड भूले इतनी आसानीसे थोड़े ही समयमें जाती ह? वर्षोंका समय बीन गया। एक प्रसंग आया। दम्पने महायन आरम्भ किया था। उसमें सबको आमन्त्रण मिला। केवल दम्पके मामाताको नहीं मिला, और इसलिए दशपुत्रीको भी नहां मिला। सतीका इसका पता चला। वे शिवजीके पास आई। बाली “देव, पिताके यहां ऐसा महत्त्वका अवसर उपस्थित हा, तब किस पुत्रीका मन पीहर जानेका न होगा?”

अभिनव रामायण

देवी यह परीक्षाका अवसर है। अपमानका कड़वा घूट पी सको तो भले जाओ। लेकिन अपमानको सहना तुम्हारे लिए कठिन होगा। शिवजीन उत्तर लिया।

सतीसे रहा न गया। वे पीहर पहुँची। परन्तु गावमें किसानों उनका भाव न पूछा। वे यज्ञभूमि पर गई। परन्तु न तो किसीने उनका स्वागत किया न किसीने उनसे बात की। सती शोधस आग बूला हो उठी। बसल उनकी माताका मन न माना। उन्होंने प्रभसे सतीका आलिंगन किया। सतीकी दूसरी बहनें तो आम्रवण पाकर आइ थी। माताके आलिंगनक बाद वे सतास मिली जरूर परन्तु उनका मजाक उड़ाते उड़ाते।

सतीको बस दुःख हुआ। विचार आया अपन अपमानका कड़वा घूट तो मैं गलेज नीचे उतार लू परन्तु पतिका अपमान कस सहो जाय? कुछ देरमें वे स्वस्थ गान्त हुई। उन्होंने दंड निश्चय किया और वही यज्ञजालामें कूँ कर प्राण विसर्जन कर लिय।

*

तपस्यासे गान्त और पवित्र बनी हुई दशमुता जब हिमालय मुता बना। उस रूप मिला था गुण भी मिले थे। एक बार नारद मुनि पवनराज हिमालयके पास पहुँचे। कन्याको देखकर उन्हें अपार आनन्द हुआ। माता पिताके सूछनसे नारदजीन कहा

आमु नाम सुमिरि सतारा।
पतिव्रत चर्हहि तिय असिधारा॥

(यह कन्या ऐसी निकलेगी) जिसका नाम याद करके स्त्रियां इन समारमें एकपति-व्रत धारण कर सकेंगी। इसे ऐसा पति मिलेगा, जिसे स्त्रोत्तर सत्र लोग डर जायें।

हिमालयकी नारदजीकी बात सुन कर बड़ा दुःख हुआ। पाव तीरी माता तो नारद मुनिका यह वचन सुनते ही मूर्च्छित हो गई। लेकिन पावकीन माता पितासे कहा आप दोनों दुखी न हो। मेरे

पतिमें गुणाका सुंदरता होगी, तो नावृत्तिकी कुरूपतास कुछ बिगड़ने-वाला नहीं है।'

नारदजी हस पड़े और उहान पावतीक पतिका नाम बता दिया। पावतीको पूवजमकी स्मृति ताजी हो गई। वह तपस्यामें लान हो गई। शकर और पावतीकी कथा समान हो गई तथा दोनोंकी आत्मामें विवाह-बन्धनमें वध गइ। पावतीका नाम परमेश्वरस भी पहल रखा गया और द्वन्द्व समाप्त बना 'पावतीपरमेश्वरी।' लगनके मगल महपमें आज भी शकर-पावतीके गीत गायें जात ह।

नारदजीका वचन सत्य सिद्ध हुआ। जो जिसका नित्य चिन्तन करता है वह उसे अवश्य प्राप्त करता है।

*

महाप्रभु शिव घबलगिरिका शिला पर पद्यासन लगाकर ध्यान मग्न बठ थें। रात्रि बीत रही थी। चंद्र किरण शिवजीक मुख पर नाच रही थी। भगवान चंद्रमौलिकी प्रसन्न मुखमुद्राका दर्शन करती करती उमा मन्द गतिसे प्रभुके समीप आ रही था। मन्द सुगंधित पवन बह रहा था। वह माना पावतीका दूत बनकर आया था। शिवजीने आसोकी पलके खाली तो सामने पार्वती आता दिखाई दा। उमापतिके मुख पर मन्द हास्य थिरक रहा था। आज उमाका भगवान शिव और दिनाकी अपेक्षा अधिक प्रसन्न दिखाई दिये। उमाके मुखसे सहज निपल गया

"प्रभु आज आप कुछ अधिक सान्त और प्रसन्न दिखाई देते ह।'

कुछ क्षण आर्से मूढ़ कर मुसकराते हुए शकरने उत्तर दिया
"आज मेरे प्रभुका अवतार दिन है।

थोड़ी देरक लिए उमा स्तब्ध बन गइ। देवाधिदेव महादेव, त्रिलोकके स्वामी किम अपना प्रभु मानत हामे? और यह अवतार-दिन क्या है?

इतने ही में उहे पूवजमका स्मरण हो आया। आहा ये प्रभु तो राम ह! सोनाका रूप लेकर की हुई रामकी परीक्षा, उसके फल-

अभिनव रामायण

स्वल्प हुई स्वयं अपनी अग्नि-परीक्षा तपका उत्कट साधना पुनर्जन्म
—य सब दुःख एक-एक बाद एक पावताके स्मृतिपट पर धूम गये।

उद्धान पूछा देव क्या आप रामकी बात कह रहे हैं ?
हां वही मेरे महाप्रभु हैं। उनका रटन निरन्तर मर मनमें

चला करता है। ससार-सागरके दीन-दुःखियाक नाथ पतिताके तारन
हार सीता वल्गु रामकी छवि आज मर चित्त दूर नहीं होती।
जिनके केवल नामकी महिमासे अनन्त भक्त इस ससारमें अमर-पदको
प्राप्त हुए करोड़ा लोग जिनके नाम-स्मरणसे अपन सब दुःख भूल कर
अपार शान्ति अनुभव करते हैं उन घट-घटमें रमनवाले रामना स्मरण
करके मेरा मन क्या पुलकित नहीं होगा ?

प्रभु क्या आप मुझ भी इस रसका अनुभव नहीं करावेंगे ?
इस जन्ममें तो मैं आपको पूरी तरह समझ लूँ। फिर आपमें और
राममें भेद ही कहा है ? इसलिए कृपा करके आप मुझ भगवान रामका
चरित्र और उनका अवतार-नाय विस्तारस समझाइय।

जिनकी महिमाका गान करते हुए हृदय कभी थकता ही नहीं
एसे रघुवन् शिरोमणि भगवान रामचन्द्रजीका अवतार-नाय अत्यन्त
भक्तिभावसे सुनन और समझनकी इच्छा रखनवाली पावताजीको
साकर भगवान विस्तारपूर्वक सारी घातें समझाइय।

जिस चरित्रको सुनन और समझनके लिए उमान हिमालय-मुताका
अवतार लिया उस अत्यन्त पवित्र और अपार शान्ति देनेवाला भग
वान रामके अवतार-नायको समझनके लिए हम भी अपन हृदयमें भक्ति
भाव उत्पन्न करें।

रामजन्म

पृथ्वीकी वह कसी करण बढ़ना थी। भोगवादी और निरबुद्ध सत्तावादी भौतिक सस्कृति पृथ्वीका अपने पाशमें जकड़ रही थी। राक्षसकी सहार-लीला दिनादिन बढ़ती जा रही थी। ऋषि-मुनि यग-यागादि जैसे पवित्र धार्मिक काम भी नष्ट कर पाते थे। समस्त विश्वकी प्रजायें भयसे पीड़ित थी। नव अन्य प्राणियाँ और पशुआका ता गान्ति मिल ही कस सकती थी? अभी रामस चढ़ जायेंगे, अभी आकर वे हमारा बच कर डालेंगे — इस प्रकार सारी सचराचर सृष्टि हिंसाके भयसे काँप रही थी।

जब जब धर्मकी ग्लानि होती है, तब तब अधर्मका नाश करनेके लिए साधुताकी प्रतिष्ठाके लिए दुष्टताके विनाशके लिए और धर्मकी पुनः स्थापनाके लिए महान गतिंगाली भगवत्-तत्त्व एक स्थान पर केन्द्रित होना है और किसी विभूतिका जन्म होता है।”

भारतकी पवित्र भूमिमें जो विश्वकी महान सस्कृतिका धाम है क्या नष्ट हो रहा है? ऐसे समय ब्राह्मण और क्षत्रिय, जो एक ही ज्योतिषके भिन्न रूप हैं भी एक-दूसरेके तेजको सहन नहीं कर सकत। ऋषियाँ भी कर लिया जाये बालि और सुग्रीव जैसे महोदरोंके बीच गस्नाधान हा तथा अपहरण जैसे जघानाचार और अत्याचारसे स्त्रियाँ शील और सतीत्व सुरक्षित न रह तो क्या इससे भी अधिक बड़ी कसौटी पर मानव-जातिकी चढ़ानेकी आवश्यकता रहती है? यही उमरी बड़ीसे बड़ा कसौटी नहीं मानी जायेगी?

भगवान शंकरका मन जन्म लेनवाली उस परम विभूतिका प्रार्थना करते करते अनायास बाल उठा है दीनानाथ। जरा इस बार भी देखिये

अभिनव रामायण

वाढ खल बहु चोर जुआरा ।
ज लपट परधन परदारा ॥
मानहि मातु पिता नहि दवा ।
साधुन्ह सन करवावहि सवा ॥

और जब

अतिसय दखि धम क ग्लाना ।
परम समीत घरा अकुलानी ॥
गिरि सरि सिन्धु भार नहि माही ।
जस मोहि गळ्ळ एक परखोही ॥

तब आपन यह नही कहा था कि आप कोशलपुरमें दशरथ-कौशल्याक घर प्रकट हाय ?

और जब चित्रकूटस आग जाते हुए हटियाका ढर देखकर अति दयाद्र भावन आपन पूछा और आपके प्रश्नके उत्तरमें आपसे कहा गया कि निसिचर निकर सकल मुनि राय तब क्या आपकी आत्मानें आसू नही आ गय थ ?

और उसी क्षण क्या आपन हाथ उचा उठा कर निसिचर हीन करउ महि की प्रतिज्ञा नही की थी ? इस प्रकार आपके न्यि हुए आत्मासनकी प्रतीक्षा पथ्वी अत्यन्त उत्सुकतासे कर रही है ।

*

इतनमें ही रामजन्मक समाचार प्राप्त हुए ।

जसी धरती वसा घाय । उस महासत्वन साकेतकी भूमि और सरयू नदीका तट पसन्द किया । राजावामें अत्यन्त पवित्र नीतिमान सूर्यवामें जन्म लनवाल महाराज दशरथका दरबार पसन्द किया । कुमनि कपट अथवा कुचालस सबया अनभिग माता कौशल्याकी कोखको सुगोभित किया । उस परम विभूतिनी मर्यादाकी रक्षाका उत्सुधन नही करना था इसलिए निन भी वसा चुना ? नगरमें तो क्या वनमें भी क्रमुराज वसन मुक्त मनस अपन यौवनक उत्सुधसना चारो ओर विपार रहा था । चन मामनी (गुल्म पत्र) चाटनी थी । नवमीकी तिथि थी ।

इसके उपरान्त भगवान् अकेले नहीं परन्तु अपने चतुर्विध रूपमें पृथ्वी पर उतरे। अब तीन रूप थे लक्ष्मण भरत और शत्रुघ्न।

सारे राज्यमें रामजन्मका हृष और उल्लास छाया हुआ था। सारा नगर ध्वजाभ्युत्थाजोसे शोभायमान हो रहा था। नगरके माग अत्यन्त साफ-स्वच्छ और पानीक छिड़कावसे जाह्लादक बन गये थे। चौराहा पर और बाजारामें नगारे और सहनार्ई बज रही थी। आर-ण्यक और ऋषि मुनि रामजन्मके शुभ समाचार सुनते ही राजा दशरथको जाशीवाद देनेके लिए अयोध्यामें आ पहुँचे। रामजन्मस सार विश्वके धनीभूत जघकारमें मानो प्रकाशकी ज्वालि फल गई।

अश्वमेध यज्ञ और पुत्रेष्टि यज्ञसे परितृप्त हुए राजा दशरथके मनमें अनेक प्रकारकी आशाएँ जन्म लेने लगी। कौशल्याका दुलारा दशरथकी आखाका तारा और प्रजाका प्यारा राम सबको आनन्दित पुलकि और उल्लसित बनाने लगा।

ग्यारह दिन पूरे हुए। बारहवें दिन प्रातःकाल ही दशरथने गुरु वशिष्ठको पुत्रोकी नामकरण विधिके लिए बुलवाया। बालकोकी जन्म कुडलिया तयार करवाई। राजाने गुरु वशिष्ठसे पुत्राकी नामकरण विधि करनेकी प्रार्थना की।

गुरु वशिष्ठ जन्म-कुडलिया देखते जाते थे और माता पिताको समझाते जाते थे। कौशल्याके पुत्रका नामकरण हुआ राम। क्योंकि वह समस्त नगरजना और तापसाको त्यागिया और रागियाको देखते ही आनन्दमग्न कर देता था। आनन्दमें रत करनेवाला और रत रहने वाला ही हमारा राम है।

विलकुल बचपनके जन्मजात सस्कारा और चेष्टाओंको देखकर सुमित्राके ज्येष्ठ पुत्रकी दृष्टि वेधक मालूम होती थी। उमका लक्ष्य केन्द्रित रह सक्ता था। ऐसे परम लक्ष्यमूर्तिका नाम सुनने लक्ष्मण रखा।

कन्येकी पुत्र भी वैसा ही प्रभावशाली था। गुरु वशिष्ठको लगा कि वह प्रजाका पालन-पोषण अत्यन्त विवेकपूर्वक करेगा। सुख और दुःखके चढ़ाव उतारमें स्थितप्रज्ञ रहेगा। इसलिए उसका नाम गुरुने भरत रखा।

सुमित्राके ज्येष्ठ पुत्रका नाम लक्ष्मण घोषित हो चुका था। परन्तु उसके दूसरे पुत्रका नामकरण अभी बाकी था। वह गुरुको अत्यन्त पराक्रमी लगा। 'यायके' शत्रुजाना सहार करनेवाले और विघ्नामें अडिग रहनेवाले इस दूसरे पुत्रका नाम वणिष्ठजीन शनुष्मन रखा। चारा राजपुत्राके सारे सस्वार गुरु वशिष्ठके शागिध्यमें ही सम्पन्न होते थे। उनका उपनयन-सस्वार भी हा गया। चारा भ्राता गुरु वशिष्ठके आश्रममें विद्याभ्यास करने लग।

३

श्रुति-याचना

श्रुति विस्वामित्रन दासा लेकर यज्ञका आरम्भ किया। परन्तु ज्या ही यज्ञका काय आरम्भ होता त्या ही राक्षस लोग उसमें कोई न कोई विघ्न खड़ा कर देते थे। कभी वे रक्त और मांसकी वर्षा करके यज्ञभूमिको अपवित्र बना देते थे ता कभी यज्ञकी सामग्री उठा कर ले जाते थे। विस्वामित्र बहुत चिढ़ जाते लेकिन कुछ कर नहीं पाते थे। क्योंकि वे यज्ञका दीक्षा लिये हुए थे। ऐसी अवस्थामें किसीका गाप ता लिया ही नहीं जा सकता था। कारण यदि गाप देते ता उसमें नोय उत्पन्न होना कायस समोह होता और समाह स्मृतिभ्रमरा कारण बन जाता। और स्मृतिभ्रमका अर्थ होता बुद्धिनाश — सबनाश। यज्ञकायमें आनवाली इन विघ्न-बाधाआसे बचनका एक ही माग था। तुरन्त विस्वामित्रका यह विचार सूझा कि यज्ञकी रक्षा करनेवाले बीर और विवेकशाल ब्रह्मचारियाकी सहायता का जाय। जयाध्याने रघुवंशी राजा दशरथ बचनका पालन करनेवाले और नीतिवान ह। और, उनके पुत्र अत्यन्त पराक्रमी ह, पराक्रमी होनेके साथ वे ज्ञानी भी ह। इस यज्ञकी रक्षाके लिए उनके पुत्र मिल जायें तो ही यह यज्ञ पूरा हो सकेगा।

विश्वामित्र राजा दशरथके दरबारमें पहुँचे। राजाने आदरपूर्वक उनका स्वागत किया और कुशल-क्षेम पूछा तथा आगमनका हेतु बतानेकी ऋषिसे प्रार्थना की।

विश्वामित्र बोले “राजन मने दीक्षा लेकर यज्ञका आरम्भ किया है। परन्तु मारीच और सुबाहु नामक राक्षस जो इच्छित रूप धारण करनेकी शक्ति रखते हैं, यन्में विघ्न डालते हैं और यज्ञकी समाप्ति नहीं होने देते। मैं निरत्साह होकर तुम्हारे पास आया हूँ। तुम मेरा काम करोगे?”

राजाने कहा “गुरुश्रुत आप यह क्या कहत हैं? यह तो हमारे रघुकुलकी परम्परासे चली आई रीति है। इन्द्राकुके वंशजोंने कभी किसीको निराश नहीं किया है। आप बिना किसी सकोचके आना कीजिये।

“तो सुनो। मैं तुम्हारे दो पुत्र राम और लक्ष्मणको मेरे साथ ले जानेके लिए यहाँ आया हूँ। दोनोंको तयार करके मेरे साथ भेज दो।

विश्वामित्रकी यह भाग सुनते ही राजा दशरथ स्तब्ध हो गये। लेकिन कुछ ही क्षणमें स्वस्थ और शान्त हो कर कहने लगे

“ऋषिराज मैं स्वयं आपकी सेवामें चलनेका इसी समय तयार हूँ। अयोध्याकी वीर शक्तिशाली सेना आपकी सेवाने लिए तत्पर है। केवल रामको, मेरी आखोंके तारे, मेरे प्राण रामको मैं अपनेसे अलग करनेमें असमर्थ हूँ।” इतना बोलत बोलत राजा दशरथका कंठ रुक गया आँखें छलछल आइ। कुछ दूर वाद जासू पाठ कर राजा आगे कहने लगे “मैं जानता हूँ कि दानवाका त्रास पृथ्वी पर बहुत बढ़ गया है। राक्षसकी स्त्रियाने भी हाहाकार मचा लिया है। दैवी और मानवी शक्तियाँ जहाँ तहाँ अपमानित हो रही हैं। परन्तु इन सबके सामने राम किस गिनतीमें है? और उसकी आयु भी अभी बितनी है? अभी तो उसके दूधके दान भी नहीं गिरे हैं। मुनिवर आप अपना यह वचन लौटा लेनेकी दया कीजिये। राम और लक्ष्मणना छान्ड कर जाय जो भी वह मैं आपकी सेवामें प्रस्तुत कर दूँगा। कहत कहते राजा दशरथ विश्वामित्रके चरणोंमें मस्तक रख कर लाट गये।

अभिनव रामायण

नम्रता क्षत्रियों का भूषण है। परन्तु दारुण भावनाओं का होना क्षत्रियों का बड़ा बड़ा नाप है। मुद्गार जस त्यागधारण नहीं बात सुनने की या इस तरह मित्रता हानकी भाव नहीं रखता भी नहीं थी। वस्तु बहुत राजपि विवामित्र पुण्य प्रमाण काय उठ। पांडो दरुण लिख वानावरण क्षत्र ह्रा गया। समयका पहचानकर बगिच्छ अधिन बीचमें पड़कर कहा

रामपिता स्वस्थ न जाओ। तुम तो अब वानप्रस्थ आश्रम जाय हो। राजपि विवामित्रका आज ब्रह्मचर्याश्रम की रात्री जरूर पड़ा है। उक्त मनारी आकाशना ना है। उक्त तो मनारहित सा पतिरा आकाशना है। वस्तु मिरास भी उनका काम नहीं चलगा उक्त तो मिरास रख चाहिये। य राजपि बबल रागमारा सहार ही नहीं चाहते य तो दानव रत्नाश्रमों से मानवना रख दूँ निवृत्तना मनारम रखन हं। और राम रामा जायुरी और तुम मन दत्ता श्रम। अमनक सम नहीं हाने। उसका छाटासा झरना भी बग हाना है। सात्विकताकी आयु अथवा सत्याक सामन नहीं बेला जाता। इनका कहकर बगिच्छत्री राजपि विवामित्रक मुहकी तरफ दृष्टन लग। राजपिका रजागुणकी राग मिट गई थी। विवामित्र बगिच्छन सात्विक भावाक सामन पराजित हो चुन य ऐसा कहनेकी अपक्षा यह कहना अधिक उपयुक्त हागा कि रजागुणक सर्वोत्तम आग पर सात्विकताका रग बन गया था। विवामित्रन कहा राजगुर य आपका प्रणाम करता हूँ। मेरे हृदयको आपन पड लिया है और साथ ही धममूनारा निष्कप भी निवाल कर रख लिया है। धन ह जाय।

नहीं नही उत्तम धनवादने पात्र तो जाय ह। मन बबल दारुण जस राजाभावा प्ररित किया है जब कि जाय तो राम जस प्रजा हृदयक नताका प्ररित करनेका सामर्थ्य रखते हं। सात्विकता भीठी तो हाता है परन्तु जन तक वह रजागुणकी कसौटी पर न चढ़ी हो तब तक यह निश्चित करना कठिन है कि उस मिठासके पीछ विष छिपा है या अमृत। छोट क्षत्रमें धूमनवाल हमारे जस ब्रह्मपियाकी अपक्षा आपक जस विनाल क्षत्रमें विहरनवाले राजपियोंकी बाहरी दृष्टिस दिखाई देन

वाली छोटी छोटी क्षतियाँ लोह दखा कर ताँ उसमें प्रजा का कल्याण नहीं है। बस आप भले मेरी प्रशंसा करें और अपनी छोटीसी घुटिका भी पहाड़ के जसी मानें। यह नम्रता ही आपको शोभा देती है।”

दोना के मस्तक झुक गये हृदय भीग गये। वातावरण सुगन्धित बन गया। दण्डरथ जाग्रत हो गये। आत्म निराक्षण करनेवाले व्यक्ति किस सहृदय को हिला नहीं देते? दण्डरथ बाल उठे मुक्षस भूल हुई राजपि! क्षमा करिये गुण्डेव! आपके इस उपकार का किन गानों में बर्णन करूँ? प्रभु प्रमादीक रूप में प्राप्त हुए राम को मने आन्तर-दृष्टि से नहा देखा। राम भले मरा पुन हो, परन्तु उस पर मेरी अपेक्षा समाज का ही मुख्य अधिकार है। आप ताँ समाज के रक्षक और मागदशक ह। इसलिए आपका अधिकार सबसे ऊँचा है। अहा ससार का विषय कसा जटिल है! जा मनुष्य इसमें जरा भी माहमें पड़ा वह गिरा। गुरु के बिना स्वयं जागनवाले इस सारमें कितन मनुष्य ह? म समझा, अपने कर्तव्य का अच्छी तरह ममन गया।”

इतनमें राम और लक्ष्मण दाना बहा आ पहुँच। दाना का आशीर्वाद देने हुए पिता दण्डरथन कहा जाओ बेटा राजपि के साथ जाओ। इन वचनों पर श्रद्धा रखना और इनके बताये माग का अनुसरण करना। म तो इस बात का भूल गया था परन्तु तुम कभी न भूलना। पुत्रो वचन ही मानव-कुल की बड़ीम बड़ी सम्पत्ति है। प्राण जाय वर वचन न जाई।

यज्ञकी रक्षा

आग आगे ऋषि विश्वामित्र चलत थे और उनके पीछे राम लम्पण दोनों भाता चल रहे थे। विश्वामित्र दोनोंको विपुल वनधीकी पहचान बगन जाते थे साथ ही उन्हें कुछ मन्त्रविद्यार्थे भी सिखाते जाते थे। सबसे प्रथम ऋषि उनसे बला और अतिबला नामके मन्त्र सिखाये जो सबसे विजय लानेवाले थे।

चलने चलने मार्गमें गया गया आई। नाकमें बैठकर तीनान गया पार की। थोड़ी दूर जान पर गया और सरयूका संगम लिखाई लिया। स्वर्ण गया पृथ्वी पर उतारनेवाले राजा भगीरथकी और सगर-पुत्राका क्या ऋषि राजपुत्राको सुनायी। सरयू नदीका परिचय लिया। सरयू हिमालयक मानस सरावरमें से निकलकर यहां गया मिलती है यह बताया और संगमक अत्यन्त रमणीय और पवित्र स्थान पर तीनान स्नानविधि पूरा की।

बनाने उहान ताटक वनमें प्रवेश किया। ताटक वनका नाम मुने ही लम्पण बाल उठे गरदब इस वनको सब ताटक वन क्यों कहते हैं ?

दस वामें ताटका (ताटका) नामकी महामायायिनी राक्षसी रहती है। यह मूख स्वर्णकी अप्सरा थी परन्तु पापक कारण उसकी यह स्थिति हो गई है। विश्वामित्र यह बात आरम्भ ही का थी कि इनमें एतादृश घृणा जाया जाए। हम आधास मन्त्र आगे भिन्न गये। ऋषि बता तुमों सावधान हो जाना। वहां ताटका आता लगा है। गया वन इतना प्रसन्न कि जंग जहां बढ़ जाती है वहां वहां घृणा जाया उठनी निरता है।

राम-लम्पण घनपरा टरार का। परन्तु एत स्त्राया इस प्रकार पथ करना उन्हें स्त्रिन् नग लगा। इनमें ता ताटकान अपना ताटक आरम्भ कर लिया। उनसे पंचरात्रा क्या गन् कर दी।

विश्वामित्र अधिक समय तक इसे सहन नहा कर सके। उन्होंने रामको आना दी कि तुम्हें ताड़काका वध करना है। चलाओ तीर। और रामके धनुषसे सर्रररर करता तीर छूटा। तीरने ताड़काके प्राण तो हर लिये परन्तु उसे मोक्षकी गति प्राप्त हुई। उसका शाप छूट गया और वह पुनः अप्सराका रूप धारण करके आकाश मार्गसे स्वर्गको चली गई।

जब वे विश्वामित्रके सिद्धाश्रमकी सीमामें पहुँच गये थे। वाश्रम वासियाने दाना राजकुमाराका हार्निक स्वागत किया।

दूसरे दिनसे यज्ञका आरम्भ हुआ। विश्वामित्रन राजकुमाराको सारी सूचनायें दे दा और यह भा कह दिया कि यज्ञ चलेगा तब तक मेरा मौन ही रहेगा, मैं यज्ञकायमें लगा रहूँगा, इसलिए बीचमें तुम्हारी कोई सहायता नहीं कर सकूँगा।

रामने ऋषिको निभय करनेके लिए कहा गुरुदेव, आप निश्चित हो जायें। सत्यकी शक्तिके सामने दूसरी कोई शक्ति भला टिक सकती है? आप समाजके कल्याणके लिए यज्ञ करते हैं, इसलिए समाजमें बसा हुआ सत्यरूपी देव क्या हमारी सहायताको नहीं जायेगा?'

यज्ञ आरम्भ होते ही रामसाने अपनी मूल प्रवृत्ति शुरू की। राम लक्ष्मण समक्ष गये। दोनों दस्त्रामे सज्ज होकर सावधानीमें यज्ञभूमिका पहरा देने लगे। इतनेमें ही आकाशमें भयंकर गड़गड़ाहट सुनाई देने लगी और प्रचण्ड आधी चढ़ आई। मारा आकाश भानो काले घने अंधकारमें घिर गया। देखते ही देखते रक्तकी वर्षा गुरू हो गई। रामने धनुष पर बाण चढ़ाया और इम मायावी जालका काट दिया। मायावी सेनापति मारीच सौ योजन दूर जा गिरा। उसी दिन यज्ञका पूर्णाहुति हुई। यज्ञ निर्विघ्न समाप्त हुआ। इससे विश्वामित्रको अपार आनंद हुआ और उन्होंने दोनों राजकुमाराको हृदयसे आशीर्वाद दिया।

घात घातमें विश्वामित्रजीने उस गिब धनुषकी घात कह सुनाई, जा परशुरामने राजा जनकको दिया था। ऋषिने उस धनुषक पराक्रमके अनेक वृणन राजकुमारोंका सुनाये। इससे राम-लक्ष्मण आश्चर्य-चकित हो गये। आज तब ऐसे किसी धनुषके बारेमें उन्होंने सुना

अभिनव रामायण

परतु वे उठ न सता। गुरुमें तो मनुष्यक हाथमें अपनी लगाम हानी है
 लेकिन बादमें ऐसे क्षण उसका जीवनमें आत है जब लगाम उसका हाथ
 छूट जाती है वह नाचे गिर जाता है और फिर चाहन पर भी वह
 उठ नहा पाता। जहाँ मनुष्यात्मा विवर्तन अविवर्तनमें जाना अग मर्तिन
 होता है उसा प्रकार एका बार अविवर्तन भाग पर लग जानका बाद
 उनका विवर्तन भाग पर चटना भी बटिटा होता है।

*

विश्वामित्र ऋषिक पीछ पीछ दाना राजकुमार आश्रममें चल
 जा रहे थे। रास्त पर ही पत्थर जसी कोई चीज पड़ा हुई था। उस
 रामक चरणकी ठोकर लगा मुरन्त वृषिपत्नी अटका खाड़ा हा गई।

परसत पर पावन साक नसावन प्रगल्भ भई तपपुत्र सही।
 लेखत धुनायक जनमुखायक मनमरा हाइ कर जाति रही॥
 अति प्रेम अजीरा पुलक सरीरा मल तहि जाक वचन बहा।
 अतिसय बडभागा चरनहि लागी जुगल नयन जलधार बहा॥

थोड़ी देर तो राम आश्चर्यचकित होकर अहल्याक सामन ताक
 हा रहे। ऋषि विश्वामित्रन मारा पूव दतिहास राजपुत्रको वह सुनाया।
 विश्वन भले ही अहल्याके इस उद्धारको चमत्कार माता परन्तु राम
 भारी मनामनमें पड गया। मनिन वचन सत्य सिद्ध हुए इसस मुनि
 पत्नीका महामुखका अनुभव हुआ। पापका प्रक्षालन उत्साहका संचार
 और पतिका पुण्य-स्मरण — इन सबका परस्पर रूप उत्पन्न हुए जल्लास
 और आनन्दन अहल्या गन्गद होकर रामक चरणामें लाट गई। आभार
 और स्तुतिके जासुआसे अहल्यान रामके चरणका धो डाला।
 राम बोले गुरुपत्नी आपके चरणामें हम क्षत्रियाने मस्तक
 ही गोभा दत है।

सत्त्वगुण ही गुरु-स्थान पर हो सक्ता है कोई वष अथवा वष
 गुरु-स्थान पर नहां हो सक्ता अहल्यान उत्तर दिया।
 विश्वामित्रन सवाका अत करते हुए कहा मनिपत्नीका वचन
 सत्य है। स्त्री-सम्मानके प्रखर समयक और दूसराके दोषाकी अपेक्षा
 दूसरोके गुणो पर अधिक दृष्टि रखनवाले रामचन्द्र आपका चरण-स्पर्श

विश्वामित्र अधिक समय तक इसे सहन नहीं कर सके। उन्होंने रामका आना दी कि तुम्हें ताड़काका वध करना है। चलाओ तीर। और रामके धनुषसे सरसरर करता तीर छटा। तीरने ताड़काके प्राण तो हर लिये परन्तु उसे मोक्षकी गति प्राप्त हुई। उसका शाप छूट गया और वह पुनः अप्सराका रूप धारण करके आकाश मार्गसे स्वर्गका चली गई।

अब वे विश्वामित्रके सिद्धाश्रमकी सीमामें पहुँच गये थे। आश्रम वामिमाने दोनों राजकुमाराका हार्दिक स्वागत किया।

दूसरे दिन यज्ञका आरम्भ हुआ। विश्वामित्रने राजकुमाराका सारी सूचनायें दे दी और यह भी कह दिया कि यज्ञ चलगा तब तक मेरा मौन हा रहेगा मैं यज्ञकायमें लगा रहूँगा, इसलिए बीचमें तुम्हारी कोई सहायता नहीं कर सकूँगा।

रामने ऋषिको निभय करनेके लिए कहा 'गुरुदेव आप निश्चित हा जायें। सत्यकी शक्ति सामने दूसरी कोई शक्ति भला टिक सकती है? आप समाजके कल्याणके लिए यज्ञ करने ह। इसलिए समाजमें बसा हुआ सत्यरूपी देव क्या हमारी सहायताका नहीं आयगा?'

यज्ञ आरम्भ होने ही राक्षसाने अपनी मूर्ख प्रवृत्ति शुरू की। राम लम्पट बन गये। दाना शस्त्रासे सज्ज हाकर सावधानीसे यज्ञभूमिका पहरा देन लगे। इतनमें ही आकाशमें भयंकर गड़गड़ाहट सुनाई देने लगी और प्रचण्ड आधी चढ़ आई। सारा आकाश भाना काले घने अंधकारमें घिर गया। देखते ही देखते रक्तकी वर्षा शुरू हो गई। रामने धनुष पर बाण चढ़ाया और इस मायावी जालको काट दिया। मायावी सेनापति मारीच से योजन दूर जा गिरा। उन्ही दिन यज्ञकी पूणाहुति हुई। यज्ञ निर्विघ्न समाप्त हुआ। इससे विश्वामित्रका अपार आनन्द हुआ और उन्होंने दाना राजकुमाराका हृदयसे आशीर्वाद दिया।

बात बातमें विश्वामित्रजीने उस शिव धनुषकी बात कह सुनाई जो पराशुरामन राजा जनकको दिया था। ऋषिने उस धनुषके पराश्रमके अनेक वृणन राजकुमाराको सुनाये। उससे राम-लम्पट आश्चर्य-चकित हो गये। आज तक ऐसे किसी धनुषके बारेमें उन्होंने सुना

अभिनव रामायण

परन्तु वे उठ न सरी। घुम्में तो मनुष्यक हाथमें अपनी लगाम होना है लेकिन बाटमें एत क्षण उत्सव जीवनमें आा ह जब लगाम उगव हाथछ छू जाती है वह नाव गिर जाना है और फिर चाटन पर भी वह उठ नहा पाता। अल्य मनुष्याता विवासे अविश्वमें जाना अछ बडिन होता है उमी प्रकार एव बार अविश्वक माग पर लग जाना आ उनका विवरक माग पर रङ्गा भी बडिन होना है।

*

विश्वामित्र ऋषि पौछ पौछ दाना राजकुमार आश्रममें बाल जा रहे थ। रास्त पर ही पत्थर जती थोई चात्र पडो हुई थ। उन रामक चरणका ठावर लगी तुरन्त नमिपत्नी अहल्या राडो हा गई।

परसत प पावन सार सावन प्रण्ट भई तपपुज सही।
दल्लत रघुनाथक जनमुक्ताथक सनमुख होइ कर जागिर रही॥
अनि प्रम जपीरा पुल्ल सरीरा मुख नहि आवइ बचन पठी।
अतिसय बडमागी चरनहि लागी जुगल नयन जलधार बही॥

थोडी दर तो राम आश्चयचरित हारर अहत्यान सामन सामन ही रहे। ऋषि विश्वामित्रन सारा पूव इतिहास राजपुत्राको बट सुनाया। विद्वान भले ही अहल्यान इस उद्धारको चमत्कार माना परन्तु राम भारी मनामयनमें पड गय। मुनिने बचन सत्य सिद्ध हुए इसछ मुनि पत्नीका महामुखका अनुभव हुआ। पापका प्रक्षालन उत्साहना सार और पतिका पुण्य-स्मरण—इन सबके फलस्वरूप उत्पन्न हुए उल्लास और आनन्दने अह्या गन्ग होकर रामने चरणामें लग गई। आभार और स्तहवे आनुआस अहत्यान रामने चरणामें धो डाला। राम बोले 'गुरुपत्नी आपन चरणामें हम क्षत्रियाके मस्तक ही साभा दते ह।

सत्वगुण ही गुरु-स्थान पर हो सकता है कोइ वण अथवा वग गुरु-स्थान पर नहीं हो सकता अहल्यान उत्तर दिया।
विश्वामित्रन सवादका अंत करते हुए कहा मुनिपत्नीका कथन सत्य है। स्त्री-सम्मानने प्रखर समयक और दूसरोने दापोनी अपेक्षा दूसरोक गुणो पर अधिक दृष्टि रखनेवाले रामचंद्र, आपका चरण-स्पर्श

ऐस अनक लोगको तारनेमें समय है। इस दृष्टिसे आप जिनके उद्धारक ह, प्रभु ह उनके सिर आपक चरणामें हा, इसमें कुछ अनुचित नहीं है।”

जहल्या अपने जाथममें गई और विश्वामित्र तथा राम-लक्ष्मणने आगे प्रस्थान किया।

६

सीता-स्वयंवर

“जाओ धारा उद्यानका सौन्दर्य देख आओ। समय पर लौट आना दर मत लगाना।” माताका वात्सल्य बरमाते हुए ऋषिराजने दाना कुमाराका विदा दी और बहुत दूर न निकल गये तब तब दानाको एवटक देखने रहे।

*

‘सखियो, मैं आई तो हू पावनी माताके पास वरदान मागने, परन्तु हृदयमें कुछ अगम्य संवेदन हुआ करता है। शील और पवित्रताकी रक्षा करनेका ‘गकिन’ सिया देखीसे और क्या मागा जा सकता है?’ साताने कहा।

सीताके इस मनोमयनका उत्तर देनेके बजाय एक सखी बोली उठी ‘हम तो ‘सुन्दर वर देना ऐसा वरदान भी माग लें दवीसे। दवासे छिपानेकी यौनसी बात हा सकती है?’

अरी, जनक महाराजकी प्रतिज्ञाका क्या होगा?’ दूसरी बोली।

“वीरता और सुन्दरता दानाका मेरा वर हो सकता है?” तासरा सखीने प्रश्न किया।

साताने हृदय खोला “मुझे तो गार्हिवता, वीरता और सुन्दरता सीताका मंगल चाहिये।’

उसी क्षण उद्यानके पुष्पकुजामें से राम-लक्ष्मणका जोड़ी सामनस जाता निसाई दी। राम और सीताके नव क्षणभरके लिए आपसमें मिल और दोहाके हृदयामें एव-दूरकी छवि अंकित हो गई।

अभिनव रामायण

भेंट सौगात रखी। मानो हाथसे आग छू गई हो, इस तरह चौंकर
दूतान क्या किया यह रामायणकारके सपने ही देखिय

कहि अनौति ते मूर्ति बाना।
धरमु विचारि सजहि सुगु माना॥

दूतान कहा अरर यह अनौति होगी। धमनिष्ठ महाराज
आप हमें क्षमा कर। यह भेंट हम स्वीकार नही कर सकते। मिथिला
हमें भरण-पोषणके लिए पर्याप्त दती है। हमन हृदय राज रामकी
आपकी या अयोध्याकी नही परन्तु हमार कतव्यकी सेवा की है।
कतव्यका बदला पससे नही परन्तु कतव्यसे चुकाया जाना चाहिय
तभी समाजकी नीति टिक सकती है। पत्न्यका विनिमय पदायस हो
सकता है परन्तु धमका विनिमय पदायस नही हो सकता। आज इस
जानन्दके अवसर पर आपको खुश करनेके लिए हम भेंट-सौगात ल
ल तो कल हम इसका मोह लग जाय। परसो जिससे पसा मिले
उसीकी हम प्रशंसा करन लगे। जीर चौध दिन जो न द उसका हम
निला करन लगे। सेवक न रहकर लटरे बन जायें। लटरास निरे गुड
बन जाय। जीर दूतसे दत्त बन जायें। आप तो चतुर ह बुद्धिमान
ह। हमें विश्वास है कि हमार इस व्यवहारको आप हमारी उद्धतता
समझकर अपना अपमान तो स्वप्नम भी नही मानग।
मिथिलाके दूताक इन गपदान समस्त जतपुर सहित सबको
जिव जानन्ति कर दिया। धमके और नय सम्बन्धके दोहरे सुखने
बाराक साथ मिथिलाके राजदूताकी उच्च नीतिमत्ताकी मीठी सुगंध
फल गई।

ऐसे अनेक लगाका तारनेमें समथ है। इस दृष्टिसे आप जिनके उद्धारक ह प्रभु ह उनक मिर आपके चरणमें हा, इसमें कुछ अनुचित नहीं है।”

अहल्या अपने आश्रममें गई और विश्वामित्र तथा राम-लक्ष्मणने आगे प्रस्थान किया।

६

सीता-स्वयंवर

‘जात्रा वीरो, उद्यानका सौन्दर्य देव आभा। समय पर लौट आना दर भन लगाना। मानाका चात्मल्य बरमान हुए श्रुपिराजन दाना कुमाराना विना दा और बहुत दूर न निकल गय तब तक दानाका एषटक दखन रह।

*

सखियो, म आई तो हू पावनी माताक पास धन्यमान मागने, परन्तु हृदयमें कुछ अगम्य सबन्ध हुआ करता है। शील और पवित्रताकी रक्षा करनेका शक्ति किवा देवासे और क्या मागा जा सकता है? ” सीताने कहा।

सीताने इस मनोमयनका उत्तर दनक बजाय एक सखा बाल उठी ‘हम ता ‘मुन्दर कर दना’ एमा बरमान भी माग लें दवीस। देवासे छिमानेकी कौनसी बात हा मकती है?

अरा जान महाराजका प्रतिनाका क्या हाता? दूसरी बानी। बारता और मुन्दरता दानाका मेल कम हा सकता है? ” सीतरा मखीने प्रश्न किया।

मानाने हृदय खोला ‘ मुझ ता मात्त्वकता, बारता और मुदरता तानारा सगम चाहिय।’

उसी क्षण उद्यानक पुष्पकुजामें स राम-लक्ष्मणका जाही मामनत जाना दिनाई दी। राम और सीताने नत्र क्षणभरक लिए आपसमें मिल और दानाके हृदयमें एक-दूसरेकी छवि अविन हा गई।

अभिनव रामायण

भेंट-सीगात रखी। मानो हाथस आग छू गई हो इस तरह चीत्तर
दूतान क्या किया यह रामायणकारके सामने ही दगिय

नहि अनीति त मूर्खि नाना।
धरमु निचारि सगहि सुनु माना॥

दूतान कहा अरर यह अनीति होगी। धमपिष्ट महाराज
जाप हमें क्षमा कर। यह भेंट हम स्वीकार नहा कर सरने। मिथिला

हमें भरण-शोषणर लिए पर्याप्त दती है। हमन हृदय राज रामरा
आपकी या जया-ज्याकी नहा परन्तु हमार कतव्यरी सवा की है।

कतव्यका बाला पमने नहा परन्तु कतव्यम चुकाया जाना चाहिय

तभी समाजकी नीति टिक सनती है। पनायरा विनियम पनायस हो

सकता है परन्तु धमरा विनियम पनायस नहा हो सकता। आज इस

मानन्दने अवसर पर आपको खुग बनने लिए हम भेंट-जौगान ल

ल तो बल हमें इसरा मोह लग गाय। परमा जिसस पसा मिले

उसाकी हम प्रशंसा करन लगे। और चौथ तिन जो न दे उसकी हम

मिन्दा करन लग। सेवक न रहकर लटरे बन जायें। लटरोसे निरे गुड

बन जायें। और दूतसे दत्य बन जायें। आप ता चतुर ह बुद्धिमान

ह। हमें विश्वास है कि हमारे इस व्यवहारको आप हमारी उदत्तता

समझकर अपना अपमान ता स्वप्नमें भी नहा मानेंगे।

मिथिलाक दूताक इन सैनिक समस्त अत पुर सहित सबका
अधिक आनदित कर दिया। धमके और नय सम्बन्धके दोहरे सुखको

जन्म दिया। सारी अयोध्यामें रामके विद्याह-सम्बन्धके सुख समा
चारोंके साथ मिथिलाके राजदूताकी उच्च नीतिमत्ताकी भीठी सुगंध

फर गई।

राज्यका उत्तराधिकारी

‘अहा यह क्या ? मृत्युका दूत आ पहुँचा ! और मैं ?

नीशेमें दखकर बाल सवारते हुए राजा दशरथको सिरके सफेद बाल दिखाई दिये और तुरन्त ही उनके मुहस ऊपरके शब्द निकल पड़े। कुछ ही क्षणमें उनके मस्तिष्कमें अनेक विचार घूम गये — क्या करेयीं तुम्हें छोड़कर वही भी जानका मन नहीं होना। अब सत्यास लू तो वह दाभा भी क्या दगा ? और वनमें आकर भी भ्रम क्या करना है ? चार चार पुत्रा और पुनः वधुआकी जोड़िया आलाको कसी शांति और सतोष दती हूँ। परन्तु मरे रामको राजगद्दी पर बठाकर अपना प्रजाकीय कर्तव्य तो मैं पूरा कर ही दूँ।’ अन्तिम विचारने बड़ा तेजीसे राजाके मन पर अधिकार जमा लिया। जैसे बने वैसे यह काम तुरन्त पूरा कर डालनेके लिए दशरथ अधीर हो उठे। अब इस विचार पर गुप्त वशिष्ठकी स्वाकृतिकी मुहर लगनी ही बाकी थी।

उस जमानेमें व्यक्तिगत बातोंमें भी निःस्पृही गुरुकी प्रेरणा और आशीर्वादका आशा रम्यी जाती थी। सामाजिक और राजनीतिक विषयोंमें तो जबूज रूपमें उनकी प्रेरणा और आशीर्वाद प्राप्त किये जाते थे। साकेतकी प्रजाका राम जैसे राजा मिले, तो उसमें वशिष्ठ गुरु आत्माकानी क्या करते ? उन्होंने अपनी स्वीकृति ही नहीं दी दशरथको उसके लिए धर्मवाद भी दिया और थोड़ा नी बिलम्ब किये बिना यह काम पूरा करनेकी सलाह दी। दशरथकी आन्तरिक इच्छाका इससे बड़ा प्रोत्साहन मिला। उनका आनन्द अब हृदयमें समाता नहीं था।

परन्तु कुदरतकी गति अगाध है। उसका रहस्य बड़ा गहन है। कोई सवथा निर्लेप व्यक्ति ही उस रहस्यको समझ सकता है। किसी वस्तु या व्यक्तिके प्रति रह प्रेममें जरासी भी राग अथवा मोहकी गंध पड़ी कि उसकी प्रतिभिया हुए बिना नहीं रहती। जिस मनुष्यको जल्दी उबारना हो उस पर कुदरतकी प्रतिभिया जल्दा हाती है। जिस कबेयीके

अभिनव रामायण

राम सिर चुकाकर खड़े रहें। इस मौनको मानकर गुरुन समझा कि मेरा धमकाय पूरा हुआ और वे रामसे मित्र होकर दूसरे कायमें लग गये।

९

मन्यराका पड़्यन

आपके चारा जोर आग लगी हुई है और आप सोई हैं। ताना सोना जोर राजाना दासत्व करना — इससे सिवा और भी कुछ आपको जाता है? मयरा न कबोसे कहा। मयरा थी ता दासी ही परन्तु कनेयाको मयरा दासी पर बड़ा प्रेम था। प्रेमको न पचा सकन बाँठ व्यक्ति पर केवल प्रेम ही उठला जाय और विवेकपूर्ण सावधानी न रखा जाय ता प्रेममें मज्जितता जानकी और प्रेमपात्रके उद्धत बन जानकी सभावना अवश्य रहती है। मयरा न उक्त गदामें निरी उद्धतता था लेकिन कबयाका तो इन गदामें आत्मीयता ही माहूम हुई।

बाँठ पगली तू क्या कहना चाहता है? जरा साफ साफ कह द न। कनेयाक य गानुनकर मन्यराको लगा कि इस समय अपना जात पगानका पूरा मौका है। वह आगे मल मलकर ऐसा डाग करने लगा माना रा रहा हा। कनेयान उसक सिर पर हाथ पर कर उस अपनी गानुनमें उ लिया। लम्पणन ता तेरी मरम्मत नका का न? कनेकर बाण दन ता कनेमी मन्यरान साथ मजाक करता रहा परन्तु जय गननर बन्ध मयरा मिमवती ही रही तो रानान गभायतापूर्वक उगग रानरा कारण पूछा और उगग मनवा बाण मुननरा क अंधार हा गन। मयराकी हिचकिया खता हा नहीं था उधर कनेमीरा त्रिपासा प्रतिगण बन्धनी थी। उसन अपीर होकर पूछा बन्धन जका बाण। यागिर आ क्या है?

अब मयरा न अपनी बातका जरा और चिक्की चपली बनाना शुरू किया। रानान पूछा रानाजा आका लाटला भगत कहा है?

राज्यका उत्तराधिकारी

अहा यह क्या ? मृत्युका दूत जा पहुँचा । और म ? '

क्षान्तिमें देखकर बाल सवारत हुए राजा दण्डवत् मित्रों के मर्देद दाल दिखाई दिये और तुरन्त ही उनके मुहम ऊपरके गद्द निकल पड़े । कुछ ही क्षणमें उनके मस्तिष्कमें अनेक विचार घूम गये — ककयी, ककयी तुम्ह छाड़कर कहीं भा जानेका मन नहीं होता । अब सयास रू ता वह क्षान्ति भी क्या देगा ? और वनमें जाकर भी मला क्या करना है ? चार चार पुत्र और पुत्र-वधुआकी जाटिया आत्माएँ कैसी गानि और सन्ताप देता ह । परन्तु मेरे रामको राजगद्दी पर बठाकर अपना प्रजाकीय कर्तव्य ता म पूरा कर ही दू । अन्तिम विचारने बड़ी तेजीस राजाके मन पर अधिकार जमा लिया । जैसे बने वन यह काय तुरन्त पूरा कर डाग्नक लिए दण्डवत् अवीर हा उठे । अब इस विचार पर गुरु बणिष्ठनी स्वाकृतिका मुहर लगना हा बाकी था ।

उस जमानमें व्यक्तिगत धानामें भी निस्पृही गुरुनी प्रेरणा और आगीर्षादकी आगा रखा जानी थी । सामाजिक और राजनीतिक विषयामें तो अबूक रूपमें उनकी प्रेरणा और आगीर्षाद प्राप्त किये जान थे । साकेतकी प्रजाको राम जैसे राजा मिलें ता उसमें बणिष्ठ गुरु आताबानी क्या करत ? उन्होंने अपना स्वीकृति ही नहा दी दण्डवत् का "सके लिए धर्मवाद भी लिया और बाडा भी बिलम्ब नियो बिना यह काय पूरा करनकी मला दी । दण्डवत्की आन्तरिक इच्छाका इससे बग प्रात्माहन मिला । उनका आनन्द अब हृदयमें समाना नहा था ।

परन्तु कुत्ररतकी गति अगाध है । उसका रहस्य बडा गहन है । कोई सवया निरूप व्यक्ति हा उस रहस्यको समथ सकना है । किसी वन्तु या व्यक्तिव प्रति रह प्रथमें जरामी भी राग अवका माहरी गंध पैठी कि उसका प्रतिनिध्या हुए त्रिना नगा रहनी । जिस मनुष्यको जल्दी उबारना हा, उस पर कुत्ररतकी प्रतिक्रिया जल्दी हानी है । जिस कवेयाके

राम सिर झुकाकर सहे रह। इस मौनको रामकी स्वावृत्ति मानकर गुह्य समझा कि मेरा धमकाय पूरा हुआ और व रामस बिना होकर दूसर काममें लग गय।

९

मन्यराका पड़पन

‘आपके चारा बार आग लगी हुई है और आप सीढ़ें हैं। खाना सोना और राजावा दासत्व करना — इसके सिवा और भी कुछ आपका जाना है? मथराने ककेयीसे कहा। मथरा थी तो दासी ही परन्तु ककेयीको मथरा दासी पर बड़ा प्रेम था। प्रेमको न पचा सकन वाले व्यक्ति पर केवल प्रेम ही उड़ला पाय और विवेकपूर्ण मावधानी न रही जाय ता प्रेममें मरिचिका जानेकी और प्रेमपात्रके उद्धत मन जानकी सम्भावना अवश्य रहती है। मथराक उपरोक्त गानमें निरी उद्धतता थी, लेकिन ककेयीको तो इन गानमें जात्मीयता हां मालूम हुई।

बोल पगली तू क्या कहना चाहती है? जरा साफ साफ कह दे न।’ ककेयीके ये शब्द सुनकर मथराको लगा कि इस समय अपना जाल फलानका पूरा मौका है। वह आखें मल मलकर ऐसा दाग करने लगा माना रा रहा ही। ककेयीने उसके सिर पर हाथ फेर कर उसे अपनी शान्ति ले लिया। रुदमणने तो तरा मरम्मत नहीं की न? कठकर थोड़ी दूर ता ककेयी मथराके माथ मजाक करती रही परन्तु जब हसनक बदले मथरा गिंसवती ही रही तो गनीय गभीरलापुवक उसस रानेका कारण पूछा और उसक मनकी बात सुननेको वह जधीर हो गइ। मन्यराकी हिचकिया स्वता ही नहीं थी, उधर ककेयीकी जिज्ञासा प्रतिक्षण बढ रहा थी। उसने जधीर होकर पूछा बटन, जल्दा बोल। आम्बिग हुआ क्या है?’

अब मथराने अपना बातको जरा बार चिक्की चुपड़ी बनाना शुरू किया। रानासे पूछा राजाजी आपका लाइनर भग्न कहा है?

“दोना भाई तो अपने ननिहाल गये ह मौज करने। मेरा प्यारा राम और लक्ष्मण मेरी सेवाके लिए ह ही।’ मथराको अपनी बाजी बिगडती दिखाई दी। जासू पाछकर रानीके सामने दखने हुए वह बोली “लेकिन भरतके क्या समाचार ह यह आप जानती ह?” “मन्थरा, क्या बात है? कुछ बुर समाचार ह? ऐमा हो तो अयोध्यामें बाजे क्या बज रह ह? क्या किसीको इस बातका पता नहीं है? कबया मथरा पर नाटकका प्रयोग कर रही हा इस प्रकार उसकी आर ताक कर पूछने लगी। भरत और दानुध्नको ननिहाल भेजकर यहा जा नाटक हानेवाला है उसका यह प्रथम प्रवेग ही है। अभी देखिये ता सही जागे क्या क्या होता है।’ मथराका एक भी शब्द ककेयी समझ नहा पा रही थी। उसने कहा ‘तू क्या कहती है म बिलकुल नहा समझ पाती।’ ‘रानीजी, आप राजा राजा कहकर अपना मुह सुखाती ह लेकिन आपका राजा तो ढागका पुतला है। और वह कौशल्या गठोकी सरदार है। और राम? उसे अयोध्याकी राजगद्दी लेनी है राजगद्दी। अब कुछ समझा आप?’ मथराकी बाणीकी बरतत चल रही थी। इन तीनोंने एक घडपत्र रचा है। भरत दानुध्नका अयोध्यासे बाहर भेज दिया। आप एक-दो दिनक लिए ही स्वतंत्र ह ऐसा समझिये। तीसरे दिनसे कौशल्याके पैर दवायेंगी ता ही आपको खाना मिलेगा बना जेल तयार ही है।

मथरा अट्टहास करती हुई जागे बोली ‘अयोध्यामें जो बाजे बज रहे ह वे इसी बातके बज रहे ह।’ ककेयीका मन थोड़ी देरके लिए ता मथराकी बात माननेका तैयार न हुआ। परन्तु उसके हृदय पर चोट लग चुकी थी। इर्ष्या जहर धीरे धीरे उसकी रग रगमें फैलने लगा था। मनमें विचाराकी हलचल मच गई ‘मुचे बताया भी नहा और अयोध्यामें रामके राज्याभिषेककी खुशीके बाजे बजने लग गये। महा रानने तो इतन दिनमें मुझे कुछ भी नहा बताया। कौशल्याका भा रख आजबल कुछ बदला हुआ लगता है। और राम बातामें तो ‘मेरा भरत, मेरा भरत’ कहता है परन्तु भरतकी अनुपस्थितिमें राज्याभिषेकका मुहूर्त भी न मालूम कब देख लिया और राजगद्दी पर बैठनेको भी

"दोना भाइ ता अपने ननिहाल गये ह मौज करन। मेरा प्यारा राम और लक्ष्मण मरी सेवाके लिए ह ही। मथुराको अपनी वाजी विगदती दिवाइ दी। आमु पाछवर रानाके सामने दबत हुए बह वागी 'लेकिन भरतके क्या समाचार ह यह आप जानती ह?' मथुरा, क्या बात है? कुछ बुरा समाचार ह? ऐसा हा तो अयाध्यामें बाजे क्या बज रह ह? क्या किसीको इस बातका पता नही है? कबेयी मथुरा पर घाटकेका प्रयाग कर रहा हो इस प्रकार उसकी आर ताक-कर पूछने लगी। भरत और गनुधनका ननिहाल भोजवर यहा जो नाटन हानेवाला है उसका यह प्रथम प्रवण ही है। अभी देखिये ता सही आग क्या क्या हाता है। मथुराका एक भी गन्ध कबेयी समझ नही पा रही थी। उसने कहा तू क्या कहती है म विलकुल नही समझ पाती। रानीजी आप राजा राजा बहवर अपना मुह सुनानी ह लेकिन आपका राजा ता ढागका पुतला है। और वह कौगल्या गठोकी मरलार है। और राम? उस जयाध्याकी राजगद्दा लना है राजगद्दी। अब कुछ समझा आप? मथुराकी घाणीकी बरबत चल रही थी। इन तीनान एक पड्यन रचा है। भरत गनुधनका अयाध्यासे बाहर भेज लिया। आप एक-दो दिनके लिए ही स्वतंत्र ह, ऐसा समझिये। तीसर तिनसे कौगल्याके पर दगायेंगी तो ही आपका साना मिला। बर्ना जेठ तयार हा है।'

मथुरा जट्टहाम करती हुई आगे बाला "अयोध्यामें जा बाजे बज रहे ह वे इमा बातके बज रहे ह।' कबेयीका मन थोड़ी देरके लिए ता मथुराकी बात माननेका तयार न हुआ। परन्तु उसके हृदय पर चोट लग चुकी था। ईर्ष्याका जहर धीरे धीरे उसकी रग रगमें फलन लगा था। मनमें विचाराकी हलचल मच गई मुझे बताया भी नहा आर अयाध्यामें रामके राज्याभिषेककी खुशीके बाजे बजने लग गये। महा राजने ता इतने दिनमें मुझे कुछ भा नही बताया। कौगल्याका भी इस आजकल कुछ बन्ला हुआ लगता है। और राम बातामें ता 'मरा भरत मरा भरत' कहता है परन्तु भरतकी अनुपस्थितिमें राज्याभिषेकका मुहूर्त भी न मालूम कब देख लिया और राजगद्दी पर बठनेको भी

गया। उम भी मन अब अच्छा तरह समझ लिया है। आप तीनापा पत्रयत्र मुझसे छिपा नहीं रहे सना।

यह सुनकर तो महाराजका मूच्छा आ गई। कुछ दर वाज स्वत्य हान पर उहान सोचा कवेयाक सामन उपदन व्यय है। जत्र शवाना जाच्छादन मन पर छा जाता है और अश्रुदाके वाज मिर आत ह तब सत्यवा मूय जयचारमें डूब जाय यह स्वाभाविक है। कवेयी बोलो तुम क्या चाहती हो? राजान सीधा प्रश्न किया।

जब आपकी य चिन्ता चुपडी बातें मुझ भुलावमें नहा डाल सकता समय गय महाराज।

कुछ अन्त करणवाले दशरथसे अब नहीं रहा गया। बाल कवेया यह सब तुम सच कह रहा हो? मजाकमें तो क्या स्वप्नमें भी कवेयी ऐसा बोल सकती है इस पर मेरा विश्वास नहीं होता। और यदि तुम हृदयसे मानती हो कि हमन कोई पठयत्र रचा है तो म रामनी शपथ खाकर कहता हू कि तुम जो चाहो वही म करने लिए तयार हू।

ठीक अवसर देखकर कवेयीन मधराका सिखाया हुआ दाव पका अभी तब मुझ दिय हुए दो वचन आपन पूर नहीं किय ह। जब उहीकी बात आप कभी याद नहा करते तो नय वचनकी तो बात ही क्या की जाय?

दशरथन किसी तरहकी जानाकाना किय बिना कहा उन दो वचनाके साथ और भी जो कुछ तुम चाहो वह सब दशरथ इसी समय पूरा करनेकी तयार है। बोलो तुम क्या चाहती हो?

दली दली आपनी तयारी। कहते कहते कवेयीन वाणी और नन दोनाके कटान एवसाथ राजा पर पड़े। दशरथ इस प्रहारसे धायल हो गय उह रोमाच हो आया।

कुछ दर वाज कवेयीन पूछा रामकी शपथ आपन सोच विचार कर लाई है न? म जो मागूगी वह आप दे सकेंगे? म केवल दो ही वस्तुएं मागूगी तीसरी नहीं।

दशरथ जब बाग बाग हा चुके थे। उन्होंने ककेयीके हाथ पर हाथ मारकर वचन लिया अपना सबस्व निछावर करके भा म तुम्हारा इच्छा पूरी करूंगा।

ककयान फिर यात्रा लिया। दक्षिण फिरसे विचार कर लीजिये। वचन दना तो सरल है परन्तु वचन पालना कठिन होता है।"

भाला ककेयी म रघुकुलका राजा है। प्राण भल चल जायें, परन्तु मेरा वचन नहा टल सकता।

रघुकुल रीति मन्त्र चला जाइ।

प्राण जाय वर वचन न जाई॥

तो मुनिय म सुनाती हू।'

रानाके बान और जायें दोनों ककेयीकी आर एकाग्र हो गय।

मुनहु प्रातिप्रिय भावत आ का।

देहु एक वर भरतहि टाका।

मेरा भरत १४ वष तक अयोध्याका राज्य करे। यह है मेरा पहला वचन।

ककेयीकी बात सुनकर दशरथ उलझनमें पड़ गय — 'राम प्रथम पुत्र है। राम प्रजा हृदयमें सबसे अधिक प्रिय है। रामके राज्याराहणका निश्चय हो चुका है। अब इस समय रामके स्थान पर भरतका राजगद्दी पर बठाना क्या कठिन है। रामका इममें काद आपत्ति नहा होगी। क्या तो यहा चान्ता था। गौतल्यानो भी इससे हप ना हागा। परन्तु प्रजाका और गुरु वशिष्ठका क्या समझाया जाये? खर, १४ वष तो दक्षत दक्षत बीत जायेंगे। कभी भी कठिनाइका सामना करके यह वचन तो पूरा करना ही पन्गा।'

इम अन्तिम विचारसे दशरथ स्वस्थ हो गये। बाल 'यह तो ठीक है। अब बनाया तुम्हारा दूसरा वचन क्या है?'

पहले वचनमें ही मने माप लिया कि आप रितने पानामें ह। म पूठना चाहती हू कि राम ही आपका प्रिय पुत्र है भरत तो नहीं है न? "

जरी पगली मन थान विचार किया इतनमें ही तुम अधार हो गई? म सुधीसे तुम्हारा पहला वचन पूरा करूंगा। वोठो अब दूसरा वचन क्या है?

दूसरा वचन और क्या हो सकता है? इतना ही कि मरा भरत १४ वष तक सुप्तसे राज्य कर मक् दसक लिए राम १६ वष तक तापस वश धारण करके वनमें रहे।

इस दूसरे वचनसे दशरथके हृदय पर बरस प्रहार हो गया। उनके होश-हवास गुम हो गया। अग प्रत्यग गिधिल पड़ गया। राजा जमीन पर निडाल होकर गिर पड़ा।

११

माताकी सीख

[ककयी निवासमें राम जागीर्बान लेन आते हैं। वहा उन्हें कुछ दूसरा ही दृश्य लिखाई देता है। दशरथ राजा मूर्च्छित होकर धरती पर लुटक गये हैं। राम पिताजी सेवा करने लगते हैं। ककयी मातासे पिताकी मूर्च्छाका कारण पूछते हैं। ककयी अपन माग हुए दो वचनाका कारण बताती हैं।]

सम्यक् दृष्टि और मिथ्या दृष्टि

माता माता तुम्हारे इन दो वचनासे पिताजीको इतना भारा दुःख क्या होता चाहिये? मरा प्यारा भरत १४ वष अयोध्याका राज्य चलायगा और मम गानिसे वनमें जानका सौभाग्य भिन्नेगा। वाह! क्या सुन्दर योग? अनजान वन प्रवेशमें तापस वश धारण करके धूमनम अनोख अनुभव होगा। ऋषि मुनियोंका ज्ञानामत पान करनेका अवसर मिलेगा। भीलाकी आपत्तियोंका स्वागत नसाव होगा। कलकल नाच करते शरन मिलेग उछलते-कूलन हरिण मिलेग कुदरतका अपार मौल्य देनका मुयोग प्राप्त होगा। इससे अधिक भला और मरा क्या हो सकता है?

राम तुम जानते हो न कि तुम्हारे पिताजीका तुम पर अत्यधिक माह है? ककेयीने वाणीका तज बाण छाड़ा।

‘माताजी मैं अच्छी तरह जानता हूँ। मर पिताजी सूर्यवर्णके महारथी हूँ। वतव्यकी बेदी पर सवस्वकी आहुति दे देना तो रघु कुलका जावन मन्त्र है। हरिश्चन्द्र शिवि आर दिलीप जस राजा जिसक पूवज हौ उस वंशके वंशजका पुत्रका माह वतव्यसे भ्रष्ट कैसे कर सकता है? इहा पिताजान विश्वामित्र ऋषिके घरणामें हम दाना भाइयाको जपण कर दिया था। अभी कलका ही यह बात है। जोर माता, तुम्हार जसा प्रेरणादायिनीके सामन पिताजी मोहवश हो सकते ह इस पर मैं कैसे विश्वास करूँ?’

रामके एक एक गन्से अमन भर रहा था। कुछ देरमें राजा दशरथ स्वस्थ हो गये और प्रेममूर्ति रामके गलेसे लिपट गये। सारा मातावरण प्रेममय बन गया। केवल ककेयी ही उससे अलिप्त रही। राजमाता बननेका उसका मनारथ न मालूम उसे कहा खीच ल जाने वाला था? सच है हृदय जब स्वार्थाभि बन जाता है तब वह पत्थरकी कठोरताको भी शरमा देता है।

वतव्यकी विजय

[कौगल्या माता रामको आगीर्वाण बनके लिए तयार खड़ी थी। वहा राम सीताके साथ जाये।]

“भरे लाल, मुन्त बीतनको आया। इतनी दर तुम्ह क्या लगा? महाराज कहा ह? ककेयी माता सकुशल तो ह न?” इतना कह कर मातान रामके मुह पर हाथ फेर कर उनक कपालका चम लिया और बल्या ली।

कुछ ही क्षणामें रामन मानाको सारी बात समझा दी। कहा तो राजगद्दीनी तयारिया और कहा बन प्रयाण। चौन्ह चौन्ह वर्षों तक रामका वियोग! यह सब वात्मल्यमयी मानाके लिए असह्य था। परन्तु जब उहान जाना कि इसने पीछ महाराजका वचन और ककेयी माता का मन्तोष है, तब व तुरन्त ही बोली जाओ बेटा, खुशीसे जाओ।

अभिनव रागायण

तुम्ह मेरे जन्मरक् जासीर्वाणि ह। मरी कोयको निपानवाल कुल्पापन
 आज मेरे राम रोममें हृष व्याप्त हो रहा है। अयाध्याना प्रजापति
 तुम्हारी अनुपम्विनि सल नही ऐसी कुल्पास मरा भरत राजकाज
 चलायगा। हम तीना मातायें ईश्वरस तुम्हार कुल् मगलनी प्रापना
 करणी। हमारे गुरनेव वणिष्ठने जासीर्वाणि और शम कामनास सवत्र
 आनन्द रहेगा। तुम निश्चिन्त होकर जाओ और बचन-पालन करके
 सकुल लौट जाओ।

सीतास कौल्पापन बटा

सीता तुमस म क्या बहू बटा? राम तो तुम्ह मरी सवामें
 छोड जानका आग्रह करता है। उसका यह आग्रह उसकी दृष्टिस ठीक
 है। मिथिलाकी राजकुमाराको वनमें भजते हुए मेरा हृदय बाप उठता
 है। परन्तु उठी वतव्य पालनका तुम्हारी लयन देखकर तुम्ह रावत
 हुए मुझ सनोच हाता है। फिर रामकी आर मडकर उहोन कहा
 तात जायनारीकी पतिभक्तिरा विचार करके म कहती हू कि सीता
 को तुम अपन माय ही ल जाओ। इसके साथ आनसे तुम्हारी कठिनाय्या
 बडेंगी जरूर परन्तु जानकाका साथ तुम्हारी विश्व माधनाका सर्वोच्च
 गिलर पर पहुचा दगा। जाओ दाना एक-दूसरेका जनन करना और
 एक-दूसरेको सहाय देना।

सुमित्राकी सील

मा रामना आज्ञा मुझ मिल गई है। कतयव वातिर राम
 और सीता दाना वनमें जा रहे ह। म भी इन दानोकी सेवाका
 काम उठाना चाहता ह। अयाध्यामें भरत रहेगा और राजकाज चला
 यगा। भाई शत्रुघ्न ना यहा रहेगा। मा तुम मय जाना दागी न?
 कहन कहने जमार लम्भण गणग हा गय।

उग कान जमागिनी मा अपन पुत्रको कतयपय पर जानसे
 राकेगा? प र तु सुमित्राकी वाणी वद हा गई और ब
 देर तक लम्भणकी ओर निहारती रही। एक गहरा निश्वास उनके
 मुहम निकल गया।

माता, क्या तुम मुझमें कोई कमी देखकर ऐसा कर रही हो ?

लक्ष्मण इतने जधीर न बनो। तुम्हारा बहादुरीके विषयमें मेर मनमें जरा भी सन्देह नहीं है। तुम्हारा त्यागसे भी मैं अपरिचित नहीं। बड़े भाईके प्रति तुम्हारा जो प्रेम है वह तुम्हें इस मांग पर ले जा रहा है। परन्तु

मैं तुम्हें जो भी कहना हो बिना सवाच कहाँ। क्या उर्मिलाकी तुम्हें कोई चिन्ता है ? ”

मेरी जानक तारे क्षत्रिय मानाके मिर दाहरा कतव्य हाता है इसलिए मामें याडा सवाच होता है। उर्मिलाकी मुझ बिल्कुल चिन्ता नहीं है। सच्ची पनीक लिए कतव्यके सामन जगतकी प्रत्येक वस्तु तुच्छ हाती है। बडा बुरा न मान जाना। मुझ तुम्हारी भी चिन्ता नहीं है। केवल दो बातकी चिन्ता है। राम सीता और तुम—तीना बनमें जा रह हा। चौदह वष तक तीनाका साथमें रहना है। तान, माभी माताके स्थान पर हाती है। लेकिन जवानी ता बीवानी हाती है। और बनमें बार बार एकान्तमें रहनका अवसर आयेगा। माताका गारी रिक सेवा भी तुम्हें करनी पडगी। क्या उर्मिला जसी नवाडा पत्नीका त्यागी लक्ष्मण मन, वचन और कायासे ब्रह्मचर्यका पालन करके साताका मेरे समान पूजा कर सकेगा ? दूसरी बात यह है कि राम तो महा गविन्दर और क्षमामूर्ति ह। परन्तु मेरे पुन, तुम उतावल हो। रामकी आना मानकर उनके माय छायाका तरह रहत हुए तुम चीन्ह वषका लम्बा समय बिता सकागे ? ”

‘तुम्हारे जमी माताका पुत्र होकर मैं धन्य हा गया हू। माता हो ता तुम्हारे जसी हो। मैं सस्त्रुतिकी रक्षक मरी मैं तुम्हारे सामने दो प्रनिधायें रेटा हू। तुम निश्चिन्त हा जाओ। आजसे राम मेरे पिता बनने ह और सीता मेरी माता बनली ह। मैं एक क्षणके लिए भी रामसे अलग नहीं रहूंगा और सीताजीके अगापागोको केवल देखनेके लिए कभी महा देखूंगा। इतना कहकर लक्ष्मण सिर झुनाये खडे रह। माता सुमित्रा पुनकी इन प्रतिज्ञाआसे गन्गद हा गइ। उनके दोना वर हस्त लक्ष्मणके माथे पर छत्रकी तरह फल

गय। माता ने अन्तरव आशीर्षा पाकर लम्पण किसी महान मीनिकरी
चालम बाहर निकल गय।

१२

राम के विरह की व्यथा

तापसरा पश्यामा हा रामा दती ? एसा कहकर राम रथ
परस नाच उतर गय। लम्पण भा छर्पांग मार कर नीब बूझ पड। तब
सीता विसन्धि बढें ? गार्ग्य मुमनन पिना दारपरी इच्छा प्ररट बा।
परन्तु रामक दुइ सखल-बल्ल सामन विसाकी क्या चल सक्ती थी ?
सबस जाग राम चल न थ। उनक पाछ छायाता तरह चलनवाली
जानकी था। जीर दानाक पाछ थ अनुगामा लम्पण। कसा अम्भुन थी
वह निपुनी।

अयाध्या जन दूर जीर दूर हाता जा रही थी। निवटक मान
जानवान स्नहाजन दन गय थ। जब तक राम सीता और लम्पण
आलस आयल न हो गय तब तक उह एनटक देतो रहे। बामें
अयाध्याकी ओर लौट पड। अन्तरमें उनक राम-गीता-लम्पणकी
स्मृतिया अकित हा गई था। पाव उनके धीर धीरे उठते थ ररते थ
और फिर गति पकड लत थ।

इधर रामन पीछ मुडकर देता तो लोगक मुडक मुन उनक पीछ
बातें करते करते चल आ रहे थ। कौई कहत फिर कहा चौन्ह क्या
तक रामकी सजीव प्रममूर्ति देखनका मिलेगी ? क्या अभी तो उनके
पीछ चलते ही रहो। दूसरे कहते अहा कसा अम्भुत सीभाग्य
प्राप्त हुआ है। राम अनुमति दें तो सग उनके साथ ही इस तरह
चलत रहनका मन होता है। कुछ कहते राम भला एसी अनुमति
दनवाले ह ? हम सो उनक पीछ पीछ चलते ही रह।' खान पीन
और रहनकी भला क्या चिन्ता ? रामके बिना सारा ससार सूना है।

रामका प्रेम और माय ही रामका सत्त्व । तब फिर बाकी क्या रहा ?' रामक कुठ और भक्त कहत ।

राम इन प्रेम-जीवाने भक्ताका राक नहीं सकत थे । उनक प्रेमका चुम्बक ही ऐसा था कि भक्तजन अपन-आप उनके पीछे खिंचत चल जात थे ।

राम जब तक चलत रह तब तक य सब भा चलन रह । न उहाने कुठ छापा न पिया और न क्षण भर विराम लिया । फिर भी न ता किसीको भूख-प्यास लगा और न किसीका थकावट मालूम हुई ।

प्रेम—विशुद्ध प्रेम ! तरा गति यारी है !

सध्या हुई । पड़ाव डाला । थोड़ी ही दरमें राम अपने तापस कममें लग गये । सीताने उनकी सहायता की । लक्ष्मण सेवाकर्ममें लीन हो गये ।

रात बन्ती जा रही था । परन्तु रामन दखा कि काई सोता ही नहा । सब काई रामकपाक आनन्दमें लान हो रह थ । रामकी छाटा छाटो कियाआका याद कर करके रामनामका पीयूष पान कर रह थे । जिसकी बार दखकर रामन मद स्मित कर दिया अथवा जिस पर एक ही स्नेह-बटास उनका पड गया, वह बार बार अपन आत्मीय जनासे इसका उल्लेख करके ऐसे आत्मानन्दका अनुभव कर रहा था, मानो उसे काइ अमूल्य निधि मिल गई हो ।

परन्तु किसे पता था कि सुबह क्या हानवाला है ?

रामने निद्रा पूरी कर ली थी । जागकर प्रभातक पहल्का तापस काम करनेमें थ जुट गये थे । लक्ष्मण भी उठ गये थे । साताक लिए ता अब रामकी निद्रा अपनी निद्रा थी और रामकी जाग्रति अपनी जाग्रति थी । रामने आसपास नजर दौड़ाई । दखा कि पीछे पीछे आये हुए प्रेम दावाने जमाध्याने मानव-गमूह रातभरक जागरणसे थक कर चूर हो गये ह । शरीर अपना घम कैसे छाड सकना है ? कुछ लोगकी नासिका गुजारव कर रही था, ता कुछ थककर बठे बठे ही बसक महार ऊधने लगे थे । विम्बर बिछा कर काइ भी नहीं साया था । निद्रा दबीकी कामठ गोथेके सामने विम्तरका कौन परवाह करता है ?

अभिनव रामायण

जली जली कामकाजसे निवट कर रामन मुमत्से बहा आग
बनकी तयारी करनी है।
इतना जल्दा ?

हां। लम्बा सवां करनका जवकाग नही रह गया था।
दलत हा देखन रय मुमत लम्पण सीता और राम सब आगक माग
पर लग गय।

*

उपाका आगमन हुआ। प्रभात हुआ। अरण्य भी हा गया।
जब धीरे धीरे जयो यासे आय हुए प्रजाजन एकके बां एक जगडाई
लत हुए जागन लग। उठन लग। च्छर उयर देखन लग। परतु न तो
उह राम त्त्वाई न्यि न सीता। अब क्या था ? कुछ क्षणाकी व्याकुल
ताके बां सब लाग उह लून लग और करण स्वरमें जाग्रत करन
लग ह राम है सीता है लक्ष्मण। अरे मुमन्त तुम भी हमें छोडकर
चले गय ? केचिन कौन था वहा जो मुमन्ता ? कुछ लोगान दौड
लगाई। परन्तु कौन मिलता ? जब जगल सबको भयानक लगन लगा।
ह राम आप इतन दूर क्या बन गय ? हमस स्पष्ट कह बना

था जाआ तुम्ह अपन साथ नहा आन दूया। तो हम जबरदस्ती
घोड हा आते। और यनि हम आने भी तो आप पर कहा बां बतनवाले
थ ? भला एक बार तो जानस पहले हमें बताया होना। आपकी प्रम
प्रतिमाको हम जी भर कर ले तो लेते। काई वक्षोके पास जाकर
पूछत बताओ हमारे रामको तुमन कहा छिपाया है ? कोई
है राम जब हमारे हृदय आप अपन साथ र गय ह तो हमारे मन
गतीराको क्या रहा रहन न्या ? हृदयाक साथ हमारे प्राणाका मा आप
अपन साथ र गय हात ता कितना अच्छा हाना ? काई काई तो
ह राम विरहका मत्यका आंक्षा आपक हाया अपना प्राण-हरण हमें
अव्य प्रिय मानूम हाना कहन कहन मूच्छित हान लग। काई माता
बकयीको यां करक बचवडात अभागिनी मा तुम्ह यह क्या मूझा ?

जीर किसी पर नहा ता हम गरीबा पर ता दया की हाती ! कुछ लाग बिन्कर गमा करने लगे अर कही यह भरतका ता बाली करनूत न हो ? तुरन्त दूमर कुछ इसका विरोध करक उलाहना देते

भरतका नाम लेकर पापमे न पडना । भरत तो प्रमकी मूर्ति है । हम किसीका दोष न दें । यह सब हमार भाग्यका दोष है । कमकी गति जगम्य है । चन्ना रामकी रज स्वर अयोध्याका लौट चलें । ”

धीरे धीरे सब एक दूमरेका मानवना बन लगे धीरज बधाने लगे । बातावरण पुन गान्त हुआ । स्वस्थ होकर सब राम-सीता और लक्ष्मणके पडाववाले स्थान पर आये । वहा बैठकर सबने प्रेममूर्ति रामका चितन किया । प्राथना अपने-आप हा गई । रामकी चरण रजवाला स्थल उह अयात्र्यासे अधिक प्रिय मालूम होन लगा । जयाध्या लौटना किसीका अच्छा नही लगता था परन्तु लौट सिवा कोई चारा न था । गोस्वामी जीने ठीक ही कहा है

विछुन्त एक प्राण हर लेही ।

१३

दशरथका अतकाल

मरा राम ता नहा आया परन्तु माता भी नहा आयी ? चौन्ह घड़ी भी उनके वियागमें बाटना बठिन हा रहा है ता चौन्ह बप भला कैसे कटेंग ? ' एसा कहन कहत राजा दशरथका गरीर निधिल पड गया और व जमीन पर लुड्क गय । उस समयकी दारण बन्नाका अमर सारे बातावरण पर छा गया । बन्ना बठिनाईसे उठकर सुमन्त महाराज पर पम्वा चलने लगा । प्रवासका कथा कहकर वह राजाका आन्वामन बन और दान्स बधानका प्रयत्न करन लगा परन्तु सारा प्रयत्न निष्फल जाना मालूम हुआ ।

अर मध्यरात्रिका समय बीतन जाया था । दशरथकी गय्याके सामने जागती किन्तु निद्रचेष्ट प्रतिमाकाके समान दाना ओर दा रानिया

अभिनव रामायण

वठी था। एक था कौगल्या जीर दूमरी था मुमित्रा। इनमें राजा दारय शय्याम ही एतदम उठ कर बैठ गया। एसा प्रतात हान लगा माना एकाणक उनमें महाचननाका संचार हा गया हा। कौगल्यान दारयके मुहक् सामन दवा ता एसा लगा कि राजा उनस कुछ कहना चाहत ह। बहुत समीप जाकर राजाक मुहक् पास कौगल्यान अपन कान लगा दिय।

राजा बाल कौगल्या कौगल्या बतव्य पारनक सातिर वनमें गय हुए रामका बिरह मर लिए प्राणघातक क्या मिद्ध हागा सका कारण मरी समझमें आ गया है। मरी बात तुम मुन ला। मुस विवास है कि दुखा न हारर तुम इसमें से नान ही ग्रहण करागी।

बाडा गला साफ करक् रामपिता दारयन अपनी बात जाए बगई एव मुल्लर बावडी थी। अमृतक समान भीठा और निमल उसका जल था। म जा बात कहन जा रहा ह वह क्यों पहलेनी है। म मृगयाकी धुनमें आग और जाग ही दौडा जा रहा था। न ता मुस समयका मान था और न परिस्थितियाका मान था। दूरसे भर कानामें एक आवाज सुनाइ पडी। वह आवाज किसकी है यह जाब करनक लिए म न ठहरा। मेर पास बाणकी बला थी धनुष था और बाण थ। मृगयाकी लोलपतान मेरे विवेक जीर साधन शुद्धिकी भावनाको नष्ट कर लिया था। मन गल्लक् अनुसंधानमें बाण छाडा और गिकार प्राप्त करनके लिए दौड लगाई। अहा तुरत ही मनुष्यका स्वर मर कानामें पडा। कितना करण था वह स्वर! हा माता हा पिता! म एकदम चौंक पडा। यह ता पनुकी नही परन्तु किसी मनुष्यकी आवाज है। इस विचारसे मर हृदयका भारी जाघात पटुचा। मनुष्यका क्या परन्तु किसी पगवा भी बाण मारनका मुझ क्या अधिकार था? मझ अपार बचना हुई। परन्तु अब क्या हो सकता था? अब तो बाजी हायस निकल चुका थी। म बावडीक किनारे पटुचा। बहा मन क्या देखा?

मन दला एक युवा ऋषि कुमार। उसका छातीके पासके मम स्थल पर लग बाणको साचकर मन अपना दुपट्टा पाडा और उसकी पट्टी बांधकर बहन रक्तका राना। फिर उस पर हवा बरन लगा। ऋषि

कुमार जगुलीसे इगारा करके टूटी फूटी भाषामें कहने लगा राजन आप मेरी चिन्ता न कर। आप यह जलपात्र (तुबी) लेकर तुरन्त जाइये। थोड़ी ही दूरी पर कावडके पास मेरे बूटे अपग माता पिता बठे ह। वे प्यामे और भूखे ह। आप उनके पास जाकर उनसी तथा शात कीजिये। लेकिन एक बातका ध्यान रखें। जब तक व पानी न पी लें तब तक आप बिलकुल चुप रहें। नहीं तो मेरे वियागके दुःखमें व पानी पिये बिना ही मर जायेंगे। इस प्रकार बालते धोलते ऋषि-कुमारन वही प्राण छोड दिय। वह था कावडमें बंधे पर बठाकर अपन बूडे, लूले जधे माता पिताको ६८ तीर्थोंकी यात्रा करानेवाला तथा माता पिताको दक्षतुल्य माननेवाला सच्चा सपूत श्रवण। तब म कापते हाथा जलतुबी लेकर ऋषि कुमारके माता पिताके पास गया। अहा कितना कर्ण था वह दृश्य। राजाकी जासामें जाय हुए जामू कौशल्याजी पाछती जाती था। कुछ क्षण रककर दशरथजीन जाग कहा

मेरा पगरव सुनकर दोनो बोल उठे 'बेटा श्रवण बन्त देर लगाई तू न ?' जहा उनकी वाणीम कसा वात्मत्य झर रहा था।

बेटा श्रवण, तू बालता क्या नहीं ?' कहत कहत बूढी मा रो पडा। बटा, क्या तू हमसे नाराज हा गया है ?' इन शब्दोंक साथ बद्ध पिताका गला भी भर जाया। अब म अपनेका रोक न सका। मने कहा 'माताजी आप पानी पी लीजिये। पिताजी जल पी लीजिये।' परन्तु उनका अन्त करण और आत्मा ता श्रवण पर ही निछावर हो चुके थे, व दूमरी ओर कम आकर्षित हो सकते थे ? मेरे अपरिचित स्वरका दोना पहचान गये। यह श्रवण नहीं है ऐसा जाननके बाद भला क्या पूछना ? तुम कौन हो ? मेरा पुत्र श्रवण कहा गया ? बेटा श्रवण, हे श्रवण तू कहा छिप गया है ? बोल, एक बार ता बाल।' और उसकी बूढी मा जोर जोरसे राने लगी। बद्ध पिता भी दहाड भारकर रान लगे। म भला क्या करता ? उ हे क्या उत्तर दता ? मरी उस समयकी स्थितिका विचार मुझे आज भी आकुल-याकुल कर देता है। म चुप न रह सका। जबिक समय तक म अपनी भयकर भूलको छिपा न सका। मन कह दिया कि श्रवणकी मृत्यु हो गई है, जोर बद्ध माता

अभिनव रामायण

पिताकी चरण रज लेकर म भी उनके साथ रोने लगा। श्रवणका मृत्युके समाचार सुनते ही उन दोनों पर माना संपूर्ण प्रह्लाड टूट पड़ा। माता-पिताक हृदय विचारक स्दनके सामने मेरा राना किस गिनतामें था ? मन कहा आप मुझ जाजस अपना बालक स्वीकार कीजिय। लेकिन दोनोंके नरुण जान्तेमें मरी यह बात कौन सुनता ? दोनोंकी एक ही च्छा थी। अपन प्यारे पुत्रक पास जल्तीसे जल्दी पटुचनकी। दोनोंका कावलम बठाकर म बावडीके पास ले गया। श्रवणक गरीरका स्पश करके दोनोंन अपनी महाव्यथाको "दोमें मृत स्वरूप दे दिया। सारा वन गोशामिभूत हो गया। पशु और पक्षी तो क्या पड़-पौध फल फूल जल-थल सब उनके साथ रोने लग।

बड़ा श्रवण तू हमारी आत्माका तारा है कलेजका टुकड़ा है हमारी आत्माका गति है तू ही हम जघोकी आस है। जरे तू जकेला कस चला गया ? — उन दोनों बड़ माता पिताके हृत्पको हिला देनवाल य वचन आज भी याद आ जाते ह और मेरे हृदयके टुकड़ टुकड़ कर देते ह। केवल मृत्यु ही मेरे इस धाव को अच्छा कर सकती है। म तुमसे क्या बहू ? श्रवणक माता पितान न तो जलपान किया और न मेरे लय हुए फल खाय। पुत्रकी ही चितामें उहान अपन गरीराको प्रमपूर्ण हृदयके साथ हाम दिया। इस प्रकार माना पिता पत्रकी वह त्रिपुटी दन्त ही देखते परलोक सिधार गई। और यह हत्यारा सीताका अग्नि-मस्कार करव जीवित घर लौट आया। श्रवण जीर उसक माता पिताकी भी त्रिपुटी थी और मर राम लम्पण और सीताकी भा त्रिपुटी है। तना कहत कहते ही दारय राजाका नाम रघन लगा। गरीर निचन लगा। और कुछ ही क्षणमें उनका प्राण-पथक कायाका छाकर उड़ गया। गोस्वामी पुत्रमालाजान डीन हा बता है

राम राम कहि राम कहि राम राम कहि राम ।
तन परिचरि रघवर निरह राज गयउ सुरधाम ॥

धमव्युत माता

भरत और शत्रुघ्न अपने ननिहाल ककय दशमें राजा युधाजितके यहा आनन्दमें अपन दिन व्यतीत कर रह थे। वहा एक दिन अचानक अयोध्यासे दूत जा पहुचे।

हम प्रकार एकाएक लिबानेके लिए आये हुए दूताका दखकर दोना भाइयाके मनमें तब बितक उठने लग। पूछने पर उहान एक ही उत्तर दिया — हम लोग अधिक नही जानत। आपको तुरन्त अयाया बुलाया है।

मामा युधाजितन दाना भानजाका जनक भेंट-सौगातें दकर बिदा किया। रथ तज गतिसे अयायाके भाग पर दौड रहा था। सात दिन और सात रात चलनेके बाद वही अयोध्या नगराकें दक्षन हुए। दूर दूरकें मंदिरा पर ध्वजा-पताकाए उतरी हुई देखकर भरतको और ज्यान दाका हान लगी। नगरमें प्रवेश करत हा बाग-बगाचे उद्यान-वाटिकायें सब सुनसान दिखाई देने लगे। सारा नगर शोकागार जसा बन गया था। कोई ठाकम बात भी नही करता था।

भरत अन्त पुरमें अपनी माताके पास पहुच।

जाआ बेटा तुम्हारी बलया लू। तुम्हारी राह दखते दखते मेरा आसैं भी थक गई ह। 'ननिहालमे लौट हुए भरतको सबस पहले ककेयी मातान ये वचन कह।

मा, सच कहू? मुझे तुम्हारे ये प्यारभरे वचन आज बिल्कुल सूखे माटूम होने ह। आज मुझे तुम्हाग बरखा लेना भी अच्छा नही लगता। अयाध्या आज मुझे सूनी सूनी लगती है। मा मेर राम कहा ह?'

भरतके ये वचन सुनकर ककेयीका चेहरा पीका पन गया। फिर भी वह बालनी गई बेटा भरत, मने महाराजसे यह वचन मागा था

अभिनव रामायण

कि रामको १४ वषका वनवास दिया जाय और भरत १४ वष तक अयोध्याका राज्य करे। इसलिए राम तापस वग धारण करके वनमें चल गय ह। साथमें सीता और लक्ष्मण भा गय ह।

यह सुनकर भरतके हृदयका गहरा आघात लगा। परन्तु हृदयका बन्ध जसा कठोर बना कर उहान पूछा और भरे पिताजी कहा ह ?

जरा वास खाचकर बनेयीन उत्तर दिया व तो राम विरहकी वन्तासे मूर्च्छित रह। परन्तु इतना सन्ताप है कि अंतमें रामका नाम लन लेते उहान गतिपूर्वक अपन प्राण छोड़। भरत और क्षत्रुघ्न दोना माताक वचन सुनकर और उनका रक्त देखकर तमतमा उठ। प्रसंगका बदलनकी इच्छासे बनेयीन जाग बात बढाई बटा भरत हमार गुरु महाराज वगिष्ठ माता काँगल्या और अयोध्याका एक एक नागरिक चाहता है कि तुम्हारे पिताजीके गवकी अंतिम क्रिया तुम्हार हाथा पूरी हो और बान्में तुम्ह अयोध्याकी राजगद्दी पर बठाया जाय।

जब भरतके तन बन्धनमें आग लग गई। उनका अग प्रत्यग आत्म व्ययास भर गया। पहल तो उहे अपन आप पर ही विरस्कार हो आया

आह मेरे कारण पिताजीकी मृत्यु हुई रामको वनमें जाना पडा तथा सीता और लक्ष्मणकी सह दगा हुई। व मनके मनम ही बड़बडान लग ऐसी शूर और नित्य भाकी काखस जम लेनके बल म पत्थर बन गया हाता तो भी दुनियाके काम जाता। जम ननक साथ हा यदि हम माक हाथ मरी मृत्य हो गई हाती ता कसा अच्छा होता ?

परन्तु कुछ स्वस्थ होकर भरत मास बहन लग मा क्या तुम वही क्वयी हो जिनन प्राणाकी बाजी लगाकर समरागणमें अपन पतिका साथ लिया था ? क्या तुम वही बनेयी हा जिसन अपन प्रति रट पतिक अपार प्रेमका कभी दुस्प्रयोग नहा किया ? क्या तुम

वही माता है जिसने अपना जगज सत्तानकी अपक्षा रामका सदा अधिक प्रिय माना ?'

भरतके ये वचन सुनकर ककेयीका मुख शमसे काला पड़ गया।

जोर मा जब तुम सुन लो। यह तुम्हारा भरत उस कतव्य पालनके माग पर जायगा जो तुमने उसे स्तनपानक साथ ही पिलाया है। रामसे मिले बिना मेरे हृदयका शांति नहीं मिलेगी। जब तक मेरे मनको सन्तोष नहीं होगा तब तक मैं तुम्हारी ऐसी मनोदगामें तुम्हारे साथ खुले मनसे बागंगा भी नहीं। इतना कहने ही भरत जोर गन्धर्व ककेयी माताके आवाससे बाहर निकल गये।

ककेयीकी बड़ी बनी आगाआकी सारी मीनारें एकाएक टूट पड़ा। जो चाट राम-सीता और लक्ष्मणके वन गमनसे अयाय्याकी प्रजाको होने वाली राम बिरहकी व्यथासे अथवा दशरथका मृत्युक्ष भी ककेयीको नहीं लगी थी वह चाट भरतके उपराक्त वचनाके साथ एकाएक आवान छोड़कर चले जानसे ककेयीका लगी। उस अपार दुःख हुआ। मानो उसके मनमें मौलिक मधनकी भूमिकाकी नीव पड़ गई।

अब वह आकाशकी ओर एक-एक देखने लगी। उसको लगा जैसे आकाश में उमक किये हुए कुकृत्यक लिए उस पर धिक्कार बरसा रहा है। उसने अपने चारा चार देखा। एक भी व्यक्ति उसे नज़ाद नहीं दिया। भयरा ता कभीकी पलायन कर चुकी थी। दुनियामें कहीं भी उनकी नजर पहचानी नहीं थी। इसलिए उसने अपने भीतर खेनका प्रयाम किया और वह अधिकाधिक गहराईमें उतरने लगी।

गुहाराज सब गतिसे भरतकी छावनीकी तरफ जान लग। सामनसे उहान भरतकी जाने देखा। भोलोके राजा निपाद बाल उठे 'मेरे रामका बनवास देकर भी आपका सताप नहीं हुआ? याद रखिये इस जगलमें मैं एक भी क्षत्रिय वापिस नहीं लौट सकेगा।

रामक प्रति गुहाराजकी अगाम भक्ति देख कर भरत थ्रदासे झुर ग्ये। बाले गुहाराज उठावल मत बनो। मैं वही भरत हूँ, जो रामका छात्र भाई है। मन अपने वंश भाईकी राजगद्दी पर न धड़नकी प्रतिष्ठा ली है। मैं उनसे मिलने जा रहा हूँ।

भरतने यह भक्तिपूर्ण वचन सुनकर निपादराजका श्राध उतर गया। और वह बाल उठ जाइय मेरे साथ जाइये। मैं आपका रामके पास जानेका माग करता हूँ।

आग आग गुहाराज और उनसे पाठ भरत और उनका बतु रगिणा सना चल रहा था। रामचन्द्रजी जहाँ जहाँ ठहरे थे उन सब स्थानोंका परिव्रज्य निपादराज उह कराते जात थे और सब आग बन्दे जाते थे।

जब वह स्थान भी जा गया जहाँ राम पिछली रातका ठहरे थे। गुहाराज जानन्ति होकर बोल उठ देखिये राम इस जगह माय थे। जानराजाका विस्तर इस ओर था। और यहाँ भाई लक्ष्मणने उनका सवा बरतक का विधाम किया था। और मैं इस पक्ष पास बगैर पहरा नहीं रहा था। इस प्रकार गुहाराज राम साता और लक्ष्मणका मारी निचमा भरतकी सुनान लगे। सुर वणिष्ठ अरुपना माना शीतला मुमित्रा कबयी मर बाइ गुहाराजकी बातें सुनत थे और उनसे बनाय का स्थानों स्थान जाते थे। मारी बातें सुनकर भरतका जानराज अनुभव ता हाता था परन्तु उनका स्थिति कुछ विचित्र हाती जा रही थी। वे बार-बार राम चरणसे पावन बनी हरे रज्ज का चूमन थे और मिर पर चढ़ते थे। इससे उन्हें साक्षात् रामा मित्रता अनुभव होता था। परन्तु इससे साथ ही राम मित्रकी उनकी प्यास बढती जाती थी। कभी वह मानाग बिड़ूँ हुए छाट काँटों की तरह रामक विषागस विह्वल बनकर जारमें रा पड़ने थे ता कभी

रामकी विविध लीलाओका स्मरण करके तथा उन लीलास्थलोके दृश्य देखकर खिलखिलाकर हसने लगते थे। कभी कैकेयीके सामने देखकर मुह कडवा बना लेते थे, और कभी लक्ष्मणके अहोभाग्यकी तुलनामे अपने हीनभाग्यका विचार करके विलकुल निराश हो जाते थे।

इस तरह दिन पर दिन बीत रहे थे। सघने गंगा-यमुनाके प्रदेश पार किये, घाटिया पार की और पहाड़ी प्रदेश पार किये। गुहराजका प्रदेश छोडकर अब वह बहुत दूर निकल आया था। मार्गमे भीलोके झुडके झुड मिलते थे, जो अयोध्यावासियोंकी इस कूचको एकटक होकर देखते रहते थे। अनेक अनोखे और आकर्षक दृश्य दिखाई देते थे, परन्तु भरतकी आखे केवल वही ठहरती थी जहा रामका स्मरण-चिह्न दिखाया जाता था। भरत गुहराजके विलकुल साथ साथ चलते थे। आज गुहराजकी बातें और उनके हाव-भाव भरतको राममय मालूम होते थे, क्योंकि उन सबके पीछे रामके प्रति रही श्रद्धाका महाबल था। बहुत बार व्यक्तिकी अपेक्षा व्यक्तिकी श्रद्धा अधिक महान होती है, और प्रेमीके मिलनकी अपेक्षा प्रेमीका स्मरण अधिक मधुर और अधिक मीठा लगता है।

१७

राम और भरतका मिलाप

राम, सीता और लक्ष्मण जिस मार्गसे गये थे उसी मार्गसे भरत अपनी विशाल सेनाके साथ जा रहे थे। अब वे राम-निवासके समीप जा पहुंचे थे।

विशाल सेनाका पदरव सुनकर और धूलके वादल उडते देखकर पहरा देनेवाले लक्ष्मण जाग्रत हो गये। उन्होंने अपने धनुष-बाण तैयार कर लिये। इतनेमे उनकी निगाह भरत पर पड़ी। उनके मनमे प्रश्न उठे “क्या भरत यहां भी हमें शान्ति और सन्तोषके साथ नहीं रहने देना चाहता? वह किस हेतुसे इतने विशाल सैन्यके साथ यहां आया होगा? परन्तु भरतका स्वभाव तो ऐसा नहीं है। क्या वह ऐसा

सोचता होगा कि १४ वर्षों के बाद मुझे अयोध्याका राज्यासन छाड़ना पड़ेगा, इसलिए अभीसे रामको अपन रास्तेसे दूर हटा दूँ।

लक्ष्मणने अपने ये विचार ज्येष्ठ भ्राता रामके समक्ष रखे। रामने आश्वासन देकर उन्हें गान्त किया। परन्तु लक्ष्मणका विश्वास नहीं हुआ। वे घबराकर बोल उठे

‘बड़े भया मुझे लगता है कि आप भरत पर आक्रमणकास अधिक विश्वास करते हैं। यह सत्य है कि भरत परम स्नेही है। परन्तु पुत्र तो वह माता कबेयीका ही है न? प्रलम्भनाके सामने महानाग और परम स्नेह भी टिक नहीं सकते। मुझ तो लगता है कि भरतके मनमें निप्टरक राजगद्दी भोगनकी लालसा उत्पन्न हो गई है। यदि आपसे ही मिलनेकी उसका इच्छा होना तो पत्नी भारी धूमधाम किस लिए? इतनी बड़ी सेना लेकर वह क्या आया है? मुझे तो इसमें कोई छिपा रहस्य ही मालूम होता है। कहते कहते लक्ष्मणने सीताजीका तरफ मुड़ कर पूछा क्या माताजी आपका क्या मत है?

सीताजी कुछ बोले इसके पूर्व राम ही बोल उठे

लक्ष्मण जल्दबाजी करके किसीके विषयमें कोई मत — और वह भी बुरा मत — बना लेना और उस तुरत दूसरोंके मामल रख देना यह अत्यन्त भयकर बात है। तुम्हारे भक्तिमय समर्पण और सेवाकी म प्रशंसा करता हूँ। परन्तु मैं देख रहा हूँ कि तुम्हारी भक्तिमें आसक्तिका महानोप है इसीलिए भरत जमे भाद पर तुम्हें ऐसी गंवा हो रही है। दूसरी भी एक बात मैं तुमसे कहूँ। तुमने भरतके लिए जिस अयमें कबेयीपुत्र गान्वा उपयोग किया है उससे भरतके साथ सचमुच बड़ा जयाय हुआ है। इस गद्दका उपद्रव करके मैं केवल तुमने कबेयी माताका अपमान किया है परन्तु मेरा भी अपमान किया है। जिस प्रकार तुम मेरे कारणसे हा वनमें मेरा साथ नहीं जाय बल्कि बधुभक्तिस प्ररित होकर आये हो और मैं केवल उसका निमित्त बन गया हूँ उभी प्रकार मैं केवल कबेयी माताके कारण ही अयोध्या छाड़ कर वनमें नहीं आया हूँ। वे तो निमित्त मात्र बन गई हैं। मेरे वन प्रयाणके साथ तो जाय-ससृति और उमके

पीछे रही त्यागमय ऐश्वरीय भावनाकी प्रगादी जुड़ी हुई है। ऐसी स्थितिमें मुझे और तुम्हें कैकेयी माताका उपकार ही मानना चाहिये।” रामने पत्येक वचनमें अमृत स्वर रहा था। लक्ष्मण लज्जित हुए। उनके हावने धनुष-बाण नीचे गिर गये। और धे धरती पर बैठ कर विनागमें चीन हो गये।

उनमें ही भरत-शत्रुघ्नकी जोड़ी और गुहाराज आ पहुँचे। रामके चरणोंमें भक्तिभावने नाट्यात दण्डवत् प्रणाम करनेवाले भरतको देगकर लक्ष्मणको रामके उपरोक्त वचनोंका प्रत्यक्ष अनुभव हुआ। रामने भरतको अपनी भुजाओंमें बाँध लिया। उसी अवस्थामें दोनों आगे बढ़े कि अयोध्यावागियोंसे उनकी भेंट हुई। सबने पहले राम कैकेयीके चरणोंमें गिरे। कैकेयीने अत्यन्त प्रेमाने रामकी बलैया ली। उनके मनका नागान मिट गया। उनकी आँखोंमें हर्षाश्रु छलक आये। भरत इन दृश्यको देखते ही रहे। जब माताके प्रति उनकी कड़ाहट टिक नहीं सकी। सर्व-प्रथम माता काँशल्याको, यहा तक कि गुरुदेव वशिष्ठको भी, प्रणाम न करके रामने माता कैकेयीके चरणोंमें ही क्यों प्रणाम किया, उगका रहस्य सब लोग बिना बोले ही समझ गये।

१८

प्रभुने पादुकायें दीं

राम और सीता पणकुटीमें वातें कर रहे थे। आज्ञाकारी लक्ष्मण अपने दैनिक कार्योंमें व्यस्त थे। ऐसेमें कैकेयी वहा आ पहुँची और उचित अवसर देखकर निःसंकोच भावसे कहने लगी “जानकी, महाराज जनक और मुनयनाजी कितना समय लगाकर इतनी दूर तुमसे मिलने आये हैं। अनेक आशाये लेकर आये हुए माता-पितासे थोड़ी बातें करनेमें कोई दोष थोड़े ही लगता है। और बेटा राम, तुम क्यों सीतासे इसका आग्रह नहीं करते?”

“माताजी, मैंने सीताका ध्यान इस ओर खींचा था। परन्तु उसने जो स्पष्टता की उसके बाद मुझे आग्रह करने जैसा नहीं लगा।”

सीता नम्रभावस्र वाली माताजी भ आज बबल जाना। मदी ह परन्तु एन तापसनी सगिनी ह बनवासिनी ह। आप ता जानती ह कि वानप्रस्थक लिए अधिर गमोपव सग-सम्प्रधी इन शागडियामें रहनवाठ भील भीनियो और उठ पणकुटियामें बमावाल कदि-मुनि ही ना मन्न ह। माना पिनास भ मिलनी ह उनस बाने भी परना ह। परन्तु चाह ता भी आज मुझ नगर और घर-मुट्ठियो बागामें रस नही आता।

बबया निरस्त ह। गह। उनका मन बा उठा पय है यह बागिना। कि जनकका पुत्रीका यहा गामा दता है। नतामें गुरु वणिष्ठ जा गय। सजन गुरुजीका प्रणाम किया। रामन उ जासन दिया। रामक वध पर अपना वर हस्त रग कर गन्ध आसन पर बठ गय।

राम गुरु वणिष्ठन जारम किया अयाध्याका प्रजा बानकपी सरह सुम्हारी प्रताला कर रहा है। भरत जब एक क्षणक लिए भा सुम्हारा वियाग सह नही सरता। त्रिनक वचनर बारण तुम बनमें जाय नो व माता बबया भा तुमस गेट चलनक लिए हान्कि अनु राध कर रहा ह। तुमन तापस जीवन और बनवासक जावन क्षाका अपन जाचरणस सुगाभित किया है। सीता और लक्ष्मण भी इस कसौटामें खर उतरे ह। जब तुम राज मनुट स्वीकार करा और सरको मुखा बनाआ।

गुरुजीक वचन सुनकर बबयाका बडी खुशा हुई। रामको अयाध्या ल जानमें सबसे अधिक हूय जब बकेमीका ही हो रहा था। कौन कह सकता है कि मानव सत्ता पापी ही रहता है? इसीलिए सन्त जन कहते ह पापसे भले धणा करो परन्तु पापीसे कभी घणा मत करो। इसा वातावरणमें राजा जनक सुनयना कौल्या सुमित्रा और भरत आ पहुचे। जब बाहरके मण्डपमें सब लोग जाकर ध्यव स्थित बठ गये। कुछ दूरी पर वयजन तथा मिथिला और अयोध्याके नगरजन भी पास पास बठ गये। माना ग्रामाण और नागरिक ससृनियोंका सगम हा गया। वयजन मनमें चाहत थ राम बनमें

रहे।' नगरजन चाहते थे. 'राम अयोध्या लौट कर राज्यको सभाले।' दोनो अपने अपने ढंगसे राम और सीताको अपनी ओर आकर्षित कर रहे थे। भरतके मन अयोध्या जैसी नगरी और अटपटे अरण्यके बीच समानता थी। उनका आकर्षण-स्थान एकमात्र रामचन्द्र थे। रामका आकर्षण-स्थान इन सबसे निराला और अगम्य ही था।

राम गहरे मनोमन्थनके अतमे बोले.

“गुरुजनो, नगरजनो और वन्यजनो।

“आप सबके आशीर्वाद, स्नेह और सिखावनके लिए मैं आप लोगोका आभारी हू। गुरु वशिष्ठ जैसे इस युगके मेरे जीवन-गुरुका आभार मैं शब्दोमे कैसे व्यक्त करू? माता कौशल्या अथवा मेरे पूज्य सास-ससुरकी कर्तव्य-परायणताका मैं किन शब्दोमे वर्णन करू? यह सब देख कर मेरा मन वासो उछलने लगता है। सीता जैसी सन्नारी और भरत-लक्ष्मण जैसे सद्वाधव प्राप्त करनेका सौभाग्य मुझे मिला है। जगतमे मेरे जैसा भाग्यशाली दूसरा कौन होगा? परन्तु इस सारे पुण्यको मैं सत्य भगवानकी प्रसादी मानता हू और उन्ही भगवानको साक्षी रख कर आज बोलनेके लिए प्रेरित होता हू। मेरी वाणीमे कोई दोष न रहे इसकी मैं सावधानी रखूंगा। फिर भी आप सब उदारतासे मुझे निवाह लीजिये। मैं भलीभाति जानता हू कि यहा भी बहुसंख्यक लोग इस मतके हैं कि मैं अयोध्या लौट जाऊ। ये वन्यजन मेरे सान्निध्य-के लिए लालायित हैं। फिर भी नगरवासियोने उनमें से बहुतेरे लोगोके मत अपनी ओर कर लिये हैं। सीता और लक्ष्मणको भी उन्होने अपने मतमे खींचनेका प्रयत्न किया है, परन्तु इन दोनोने सब कुछ मुझ पर छोड़ दिया है। और मैंने सत्य भगवानकी वेदी पर अपने आपको अर्पण कर दिया है। मुझे सबसे प्रथम यह स्पष्ट कर देना चाहिये कि मैं वनमें माता कैकेयी अथवा पिता दशरथके कारणसे नहीं आया हू। वेशक, वे इसमे निमित्त बन गये हैं, परन्तु मैं आया हू सत्यकी टेकके खातिर। और यहा आकर ज्यो ज्यो मैं गहरा विचार करता हू त्यों त्यों मेरे सामने यह स्पष्ट होता जाता है कि हमारे देशका मूल तथा हमारे अंतरंग सत्यकी साधनाका आधार इस ग्राम्य

संस्तुति के उत्थान में और ग्राम्यजन के शक्ति सम्पन्न में है। इन भावों को जानकर भालभाल लोग में ग्राह है भक्ति है वृत्तों की निष्ठा है तथा स्वाभाविक तप और त्याग जन्म अनन्त सम्पन्न है।

रामन जाग बठा गुरुजनों और अथ भार्गवों को यों गंगा का बाबागियों में यों बाई दाग है ता ज्ञाना ही कि उह अपनी इस जगत् वृत्तों सम्पत्ति का जान नहीं है और व अपनी ज्ञाना मूल्यान्न करना नहीं जानन। व अपनी दंगरा हीन मानन है जग में हम नागरिकों बहुत बना हाथ है स्वयं जित हम लोग ही दया हूँ तब जिम्मेदार है। अब हमें इनके लिए कठोर प्रार्थना करना ही होगा। इस वन में रत्न के बेचन तप और त्याग मरा बान पुरा नहीं होगा। जान और प्रमत्त की उपासना का साथ ही मन अनन्त मरन। और प्रार्थना का पार करना होगा। इसका जित मत्त बनन बान-नाम में पहुँचना होगा और सब वनवासियों का सम्पन्न गांधना होगा। बर्तानु महान युद्ध भी मुझ लड़ना पड़े। परन्तु वह युद्ध बड़ बड़ मन्त्र गन्नास्त्रों से नहीं लड़ा जायगा न उसमें बड़ा सेना का आवश्यकता होगा। वह युद्ध तो सच्च नीतिमान निस्वार्थ और प्राकृत मान जानवाल कुछ लोगों के सहयोग से लड़ा जायगा। जाना है आप सब इस संकल्प का अपनी प्रणाली जलस साधन और म ज्योत्स्ना गैट चलन के आपने आप्रह्वो स्वीकार नहीं करता इसने लिए मत्त क्षमा करन।

महाराज जनकों को जपन राम और सीता के म आचरण से अपार हप हुआ। उनकी वृत्ति और राम के इस विविष्ट नीतिवाग्यों देखकर गुरु विविष्ट बोले राम माता का तथा ज्योत्स्ना और मिथिला के निवासियों राम सच्चे माग पर ह। अब आप सबको भरी मलाह है कि राम को इस काय में आप प्रोत्साहन ही दीजिय। गुरुजनों के वचन सुनकर सब लोग स्तब्ध हो गये। परन्तु दुख के बदल सबने मन में राम के सत्याग्रह और नम्रता के लिए जादर पना हुआ।

भरत की स्थिति का समझना बड़ा कठिन था। उनके मनोमयता गुरत कोई हल निवालने की दृष्टि से गुरुजीने राम से पूछा भरत के लिए तुमने कुछ सोचा है?

“गुरुदेव, आपकी छत्रछायामे भरत अयोध्याका राज्य चलाये, यह मेरी अन्तिम अभिलाषा है।”

“राम, तुम्हारा कहना तो ठीक है। भरतका आंतरिक और बाह्य जीवन भी भव्य और दिव्य है। प्रजाप्रेम और कार्य-कुशलताकी भी उनमे कमी नहीं है। परन्तु इसमे केवल एक ही कठिनाई है। भरत तुम्हारे वियोगको सहन करके टिक सकेगे?”

“गुरुदेव, भरत ओर मैं साथ रहे यह हम दोनोंको अच्छा लगेगा। आप तो जानते ही हैं कि हमारे शरीर भिन्न हैं, परन्तु अन्तर — आत्मा — तो एक ही है। परन्तु गुरुजी, मुझे विश्वास है कि मेरे प्रति अपार स्नेह होते हुए भी कर्तव्यके खातिर भरत मेरा वियोग सहनेको तैयार हो जायगे।”

तुरन्त भरतका सिर नीचे झुक गया। मानो रामाज्ञाको गिरो-धार्य करके कोई योद्धा अपना सिर कर्तव्यकी वेदी पर चढानेको तैयार हो गया हो। परन्तु विरहकी वेदनाने उनके हृदय पर जो तीव्र आघात किया, वह स्पष्ट दिखाई देता था। अब माता कौशल्यासे नहीं रहा गया। उन्होंने कहा “बेटा राम, मेरा प्यारा भरत तुम्हारी अनुपस्थितिमे साकेतके शासन-तन्त्रका भारी बोझ उठा कर तुम्हारे वियोगमे टिका रहे, ऐसी कोई निशानी उसे दे दो।” माताके इन वचनोने भरतमे नये प्राणोका संचार कर दिया। उन्होंने रामके सामने देखा और रामने अपनी पादुकाओं पर नजर डाली। दोनोंकी चार आखोने इस रहस्यको समझ लिया। वे मुस्करा उठी।

रामने अपनी पादुकाये निकाली, भरतने मस्तक नवा कर अपने हाथ फैलाये। पादुकाये हाथोमे आईं। भरतने उन्हें आखो और हृदयसे चूम कर आदरपूर्वक अपने झोलेमे रख लिया।

कर्तव्यकी वेदी पर चढते हुए प्रेमीका प्रतीक भी विरहको सह-नेकी शक्ति प्रदान करके मनुष्यको जीवित रख सकता है।

साकेतवासियोंसे

जयोध्यावासा आतुरतासे भगवान रामके लौटनका प्रताप्ता कर रहे थे। राम कब आयेंगे राम कब जायेंगे? गुरु बणिष्ठ विदेह जनक माता कौशल्या वक्यी भरत गनधन — इतने सारे स्नेहाजन गये हैं व क्या रामको अपने साथ लाये बिना लौटेंगे?

एक पुरवासी बोल उठा क्या हम पुरवासिया पर रामका कम स्नेह है? राम अवश्य लौट आयेंगे।

रामको लिखान गये हुए गुरुजन वापिस जा रहे हैं यह शुभ समाचार सुनकर नगरजन नगरके बाहर उमंग पडे। दूर दूर उड़ने लागे बूल्के गुवारकी जात सब एकट्ठे खेतन थे और एक-दूसरेको लिखान थे

देखा वे गुरु महाराज बणिष्ठ निस्तर्क बन हैं। दाहिना ओर जानवागे माता कौशल्याजा हैं। उनके बाद ओर महाराज जनक हैं। भरत और गनधन भी लिखाई दत्त हैं। परन्तु राम लक्ष्मण और जानका कहा है? जहां सुना वहां एक हा ध्वनि सुनाई देती था रामचंद्र कहा है? आखें चागे आगे घूम जाते परन्तु जिस दावना था वहां न लिखाई लिया। सबके मन जाकुल हो गये। क्या हुआ होगा? राम और क्या रहा? सकुंगता तो हाग न?

जयोध्यामें लौटनेवाले गानिका 'वाम ल' बसक पहल ही चारा आरम्भ पूछताछ शान लगी। नगरका बस व्याकुलता और प्रजाक रामनारा दत्त कर जनक जस किन्हीं पुरुषकी भा आखें उलछला बाद। गुड स्नेहसे बचकर दूसरा बन्तु बस क्षणभंगुर और नागवान जानमें बना हो सकती है?

जब सारे प्रजाजन सभाके रूपमें व्यवस्थित हो गये तब गुरु बणिष्ठ बाल नगरजना जाप सत्रक निघ्न और उन्मास चंदर देख

कर हम लोग परेशानीमें पड़ गये हैं। आपको इस बातका तो विश्वास होगा ही कि राम-सीताको अयोध्या लानेके प्रयत्नमें हमने कोई कसर बाकी नहीं रखी। मैं आगे कुछ कहूँ इससे पहले मैं आपसे इतना पूछ लूँ कि रामके ऊपर हमें केवल साकेतका ही अधिकार रखना है, अथवा उन्हें सारे विश्वके राम बनने देना है? आप सब समझदार हैं, इसलिए मैं आशा रखता हूँ कि मेरे प्रश्नका उत्तर आप गहरा विचार करके ही देंगे।” वशिष्ठजीका अंतिम वाक्य पूरा हुआ इसके पहले ही सभामें से एकके बाद एक उत्तर आने लगे “राम सारे जगतके हैं; केवल हमारे ही नहीं हैं।” मिलनकी आतुरता पर विश्वैक्यकी व्यापक उदात्त भावनाने विजय प्राप्त कर ली। सारा वातावरण बदल गया। सबके चेहरो पर स्मित फैल गया और हृदयोमें उल्लास और हर्ष भर गया। गुरु वशिष्ठकी वाणी अब अस्खलित रूपमें बहने लगी।

“राम चौदह वर्ष पूरे होनेके बाद ही अयोध्या लौटेंगे। हमारे सौभाग्यसे उनकी पादुकाये हमें मिल गई हैं। आजसे रामकी ये पादुकाये विधिवत् राजसिंहासन पर विराजमान होगी।” हर्षनादसे सारा वातावरण गूँज उठा। इससे पता चला कि सारी सभाने इस बातका स्वागत किया है। “और याद रखिये,” गुरु वशिष्ठ आगे बोले, “रामके प्रतिनिधिके रूपमें भरत अयोध्याका राज्य चलायेंगे। भरतकी सरक्षकता (ट्रस्टीशिप)में रामको जितना विश्वास है उतना हमें न हो, तो भरतके लिए राज्यतन्त्र चलाना असंभव हो जायेगा।” चारों ओरसे ध्वनि उठी “हमें विश्वास है, पूरा विश्वास है!”

“साकेतके लिए रामने एक महत्त्वपूर्ण सन्देश भेजा है।” गुरुजीके ये शब्द सुनकर सबके कान और आँखें गुरु वशिष्ठके मुख-कमल पर केन्द्रित हो गईं।

वशिष्ठ महाराजने भगवान रामका सन्देश सुनाया : “आज तक हमने गाँवोंमें और वहाँके झोपड़ोंमें रहनेवाले लोगोंको अज्ञानी, अनाड़ी और पशु जैसे माना है। यह भयकर भूल है। उनके हृदयोमें जो निस्वार्थ प्रेम छलकता है, उसका नगरोंमें हमें दर्शन हो सकता है?”

आर क्या उहा लागीक बठोर परिश्रमसे उत्पन्न हुई वस्तुआ पर ही
 उमाग निर्वाह नहीं होना? महज नि स्वाय प्रम जानक बिना सभव
 नही जाना इस परस आप समज ल कि उनमें जानकी भूमिका है।
 जना हा ना मानवताका परोपकार करनका स्वाभाविक भावना भा
 जनर भावर मोजू है। एस याग्य जनाका आज तक हमने कभी
 का मस्का मरा वा है — उनका स्थिति मुधारनका काई प्रयत्न
 किया ? कभा इस बातका विचार भी किया है? इसलिए म महा
 यम ना कर आप सजका आरस एस अपराधका प्रायश्चित्त कहगा।
 आप मर जयोध्यामें रहकर अपनी गुम कामनायें भेजते रहिय। जीर
 आज्ञा ना अपन इन चिर उपक्षित बधुआक प्रति दयाकी ही नहीं
 पगनु हुनतनासा दुष्टिस दखना आरभ कीजिये।

मर्यु ननाक तन पर एकद हृद मगरजनाका निगाल सभा गुह
 क बलिष्ठ मुमार्गविष्म रामका यह मन्त्र मुनकर गहर विचारमे
 पड ग। गमा पूरी हुई। लाग घर लौटन लग। नई होने हुए भी
 मर विचारक पल्लवक यह बात लागीक मनमें भलीभाति बस गई
 कि यनर भाषणमें रत्नबा लागीक हृदय ज्ञान और परापकारस
 पूर। मर्युका नार ना माना रग बारा गौरव रना जान पड़ा।
 मर्यामाज्ञान इमान्ति कना हागा

एक निमित्त मर्यु बग तु न तुम्हाराग।

नन्दीग्राममें भरतजी

प्रभातके समय माता कंकेयीको सदाकी तरह प्रणाम करके भरतजी उनके आशीर्वाद पानेके लिए खड़े रहे। पुत्रको आशीर्वाद देते हुए माता बोली “बेटा भरत, राज्यकी व्यवस्था तो अच्छी तरह चलती मालूम होती है। अधिकारी लोग भी सच्चे उत्साह, लगन और प्रामाणिकतासे काम करते हैं। फिर भी मुझे ऐसा दिखाई देता है कि तुम्हारे मन पर वडा बोझ रहता है। मेरा अनुमान सही हो तो बेटा, मुझे इसका कारण जानना है। रामके विरह-दुःखसे तो तुम्हारा मन पीड़ित नहीं है न ? ”

“मा, मैं स्वयं ही तुमसे कहना चाहता था। परन्तु तुम्हीने पूछ लिया, यह मेरा सद्भाग्य है। राज्यतन्त्रकी मुझे कोई चिन्ता नहीं है। प्रजा और अधिकारीगण सभी अपने-अपने कर्म-धर्मका भलीभाँति पालन करते हैं। और यह सारा प्रताप रामका है, ऐसा मैं मानता हूँ। जबसे उनकी पादुकाये प्राप्त हुई है, तबसे मैं रामकी प्रत्यक्ष उपस्थितिका अनुभव करता हूँ। इसलिए उनके विरहकी पीडा मुझे लगमात्र भी नहीं है। ऐसा होते हुए भी पता नहीं क्यों मुझे चैन नहीं पडता। मा, मच कहूँ तो यह राजमहल मुझे खानेको दौडता है। श्रुतिकीर्तिकी समृद्धि मुझे मिल गई है। हम दोनों सयमका पालन करते हैं। मैं प्रतिदिन ही वनकी कल्पना करता हूँ। प्रातःकाल जब मैं मन्दिरमें बैठकर रामका चिन्तन करता हूँ, तब राम नहीं किन्तु वनवासी भीलोकें झोपड़े और उनका निर्मल स्नेह, अतिथि-सत्कार और सद्भाव याद आता है। मैं वनमें जानेकी स्थितिमें तो नहीं हूँ। और यहाँ महलमें बैठे बैठे मैं उनके साथ एकता अनुभव नहीं कर सकता। मैं क्या करूँ, मा ? मेरा मनोमन्थन प्रतिदिन बढ़ता ही जाता है।”

“बेटा भरत, तुम्हारी वेदना सच्ची है। रामके सन्देशके पीछे जो भावना है, उसे तुम्हें भूर्तरूप देना होगा। ‘यथा राजा तथा प्रजा’

— यह हमारा आजका युगमन्त्र है। वड छोट सब तुम्हारा अनुकरण करनेके लिए प्ररित हाग और तुम्हारा ही आन्श ग्रहण करग। तुम तो जानते ही हा कि मनुष्य बाहरी वाताका अनुकरण करनेके लिए जल्दी ललचाता है।

मा म तपस्वीका वेग धारण करके नदीग्राममें रहू तो ? वहा बयजन नहीं ह परतु वन जरूर है। वहा म छोटसे छोट और पिछड हुए दीपनवाले लोगाके साथ रहूगा और उनके साथ एक्ता साथगा। तुम्हारे आसीर्वां मुझ मिलेग न ?

वडा म यही तुमस कहना चाहती थी। तुम्हारी यन् उलास भावना सफल हो। लो वह श्रुतिकीर्ति भी आ गई। श्रुतिकार्तिकी और देखकर माता ककेयी बोली बटी तुमन भरतके नन्नाग्राम जानकी बात सुनी है। बोला तुम्हारी भी इसमें समति है न ? आपकी और आपके पुत्रकी ऐसी बात सुनकर बधूक नाते मेरा मन प्रसन्नतासे नाचन लगा है। श्रुतिकीर्तिके य वचन सुनकर भरतके भानदरा पार न रहा। ऐसी त्यागमूर्ति पत्नीको पाकर । घय हो गय।

कुड समय पश्चात भरत नदीग्राममें रहन लग। वन् हुए वेग वाल भस्म चचित अगावाले और बल्कल-वस्त्र धारण करनेवाले नदी ग्रामवासी भरत अयोध्याके राज भवनमें बठकर जब राज्यतन्त्र चलाने उस समयका दश्य ऐसा भव्य मालूम होता था मानो कोई सिद्ध सन्यासी रायासन पर विराजमान होकर राज्यतन्त्र चला रहे हा। इस प्रकार रामरायकी नीव पनी। तपोमूर्ति भरतके हाथ नीचे चलन वाला साकेतका राय धमराज्य बन गया। लग आज भी कहत ह कि भरतने समयमें प्रजास कमस कम कर लिया जाता था। गास्वामी तुलसीदासजीन योग्य वाणीमें कहा है

जो न होत जग जम भरतको।
मकड घरम घर घरणी घरत को॥

अब भरत अयोध्यामें बठकर भी ग्रामीण सस्कृतिने साथ पूरी तरह सम्पर्क साथ मकने थ। हमें कहना चाहिय कि राम लक्ष्मण

और जानकी यदि वनवासी तपस्वी थे, तो भरत राजभवनवासी तपस्वी थे । एकान्तमें रहकर मौनका पालन करना सरल है, परन्तु अनेक लोगोके बीच रहकर बोलनेकी शक्ति रखते हुए भी मौन धारण करना अत्यन्त कठिन है ।

‘घरमें वनवासीकी तरह रहो’ — ऋषिवरोके इस सूत्रको प्रत्यक्ष आचरणमें उतारकर भरतने सच्चा सुराज्य चला कर दिखा दिया ।

२१

अत्रि ऋषिके आश्रममें

एक समय राम, सीता और लक्ष्मण तीनों प्रकृतिकी गोभाका पान कर रहे थे । इतनेमें राम एकाएक बोल उठे . “क्यों देवी, अब तुम्हें यह स्थान कैसा लगता है ? लक्ष्मण, तुम भी इस विषयमें अपना मत बताओ ।” “मुझे तो जहाँ राम है वहाँ सर्वत्र अयोध्या ही अयोध्या दिखाई देती है ।” लक्ष्मणने कहा । “फिर भी जब आप मेरा मत जानना चाहते हैं, तो मुझे कहना चाहिये कि यह स्थान मुझे अधिक प्रिय लगता है । कारण, मेरी पूज्य माता सीताजीको मुनिपत्नियोंका और भील बहनोका अधिक परिचय हो जानेसे यहाँ उन्हें सब प्रकारसे निश्चिन्तता अनुभव होती है ।”

लक्ष्मणके उत्तरके बाद सती सीता बोली “देव, वीर लक्ष्मणकी बात सच है । परन्तु मुझे ऐसा लगता है कि जब हमारा इन लोगोके साथ अधिक परिचय नहीं था, तब इन सबसे जो निर्दोष प्रेमाभूत पीनेको मिलता था उसका अनुभव अब जैसे कम होता जाता है ।”

“जानकी, तुम्हारा कहना ठीक है । अयोध्या-मिथिला आदिके लोग इस स्थानको जान गये हैं । इसलिए अब किसी न किसी बहानेसे उनका आना-जाना यहाँ होता रहता है । आसपासके शहरोंके लोगोका आना-जाना भी बढ़ गया है । वे जब आते हैं तब अपने प्रेमके साथ शहरकी कृत्रिम मम्यता और शिष्टता तथा यहाँकी वन्य संस्कृतिको

शोभा न देनवाली बहुतसी बातें भी ले जाते ह। हमारे आसपासक वयजना पर उनका हानिकारक प्रभाव पड़ना स्वाभाविक है। हमारे तापम प्रत जोर एकान्तको भी इससे हानि पहुंचती है। चाहे जितना बड़ा मनष्य क्या न हो, परन्तु जिस वस्तुका ध्यान करके वह निरला हो उससे आरम्भमें बहुत समय तक उसे दूर ही रहना चाहिये। इसके अभावमें सच्ची तटस्थ वृत्तिका विनाश सम्भव नहीं होना। हमें अपने पूर्व-स्नेहिया तथा नय स्नेहियोंके बीच और वन तथा नगराके बीच अटूट और जलज एवता स्थापित करनी है और यह तभी हो सकता है जब पूर्व-स्नेहियामे नगरके लोगामे और नगरासे काफी दूर तक जग रह जाय। स्वप्न इतना सब है कि इस स्थानमें सीताके विषयमें अधिक निश्चिन्ता रहनी है। परन्तु वह तो महाशक्ति है। जयन उसन वनमें प्रवेश किया है तबसे तुमन अनुभव किया होगा कि वह सग हमसे जागे हो रहती है। इतन इतन सग सम्बन्धी भाव, इतन नगरजन जाय परन्तु माताका ध्यान तो प्रथम मध्यमें और उसके पश्चात् मेरे प्रिय बचपानामें ही केन्द्रित रहता है। हम जानाया जितना चिन्ता करते ह उससे अधिक चिन्ता सीताको ही हम जानाया करता है। आ पण अकुर या अन्य वस्तुए तुम लाते हो उनका मारी व्यवस्था स्नेह और मुचकतासे करके रहता है? प्रान रात्रि स्नेह रात्रि सान तन लगानार चलनवाल हम जानाया कायामरा उचित गीतिस पूरा करनको चिन्ता सीतासे अधिर किसको है? अन्तरात्मा अवका बढामिमाका हमारे यथारमें बाई बनी मान्य है। तो उस पूरा करनका काम सीताके सिवा और कौन करता है?

तब है प्रश्न। मुझ माताके वात्सल्यकी जो क्या अनुभव हानी है उसका प्रति भी तो धरी माता माना हो करती है। स्वप्नने जगान्न क्या।

जग बा एक प्रमान एमा जाया जो आसपासक किसी आसपास अन्य प्रमानका अनिम भूषना न्यि बिना यह त्रिपुटा आग बंद है। जाना एक श्रुति-आश्रममें पंच। वह आश्रम आज प्रेममय

वातावरणसे महक उठा। क्या प्रेममूर्तिया इसी प्रकार अपने प्रेमकी सुगन्ध फैलाते हुए चारों ओर घूमा करती हैं ?

*

[स्थान अत्रि ऋषिका आश्रम। अनसूया माता और सीताजीकी बातचीत।]

“वहन, तुम्हारा लावण्य देखते हुए आखें थकती ही नहीं। मन करता है, तुम्हारे एक एक अंगको देखा ही करू। इस जीवनमें मैंने अनेक सुन्दर स्त्रिया देखी हैं। परन्तु तुम्हारे जैसी सोलह कलाओंसे दीप्त और तेजस्वी सुन्दरता मैंने किसीमें नहीं देखी। मेरी समझमें नहीं आता कि ये तुम्हारे अत्यन्त कोमल अंग घोर अरण्यके अनेक प्रकारके दुखों पर किस शक्तिसे विजय प्राप्त करते होंगे।

“बेटी सीता, क्या तुम्हें मिथिला या अयोध्या याद ही नहीं आती ? वनमें रहते हुए भी, मुनिपत्नी होने पर भी कौन जाने क्यों तुम पर हृदयमें सगी पुत्रीसे भी अधिक वात्सल्य उमड़ आता है।”

सीताजी नतमस्तक होकर माता अनसूयाके ये उद्गार सुनती रही।

“तुम्हारी पति-परायणता, सेवा, नम्रता, तपस्या, त्याग, जिज्ञासा आदि अद्भुत गुणोंको देखकर तुम्हारे चरणोंमें सिर झुकानेका मन हो जाता है,” अनसूया बोलती रही।

सीता “नहीं, नहीं, माताजी ! मैं तो एक ससारी अल्प प्राणी हू। मुझमें आज आप जो कुछ देख रही हैं वह सब रामकी छायाका ही प्रताप है। उस पर आप जैसोका नि स्वार्थ प्रेम और वात्सल्य मुझे नव-जीवन प्रदान करता है। परन्तु आज तो माताजी, मुझे आपसे ऐसी कठोर सीख और मधुर आशीर्वाद ही चाहिये, जिससे मेरे अरण्य-वासके जीवनमें आत्मज्योति अखंड जलती रहे।”

कुछ देर तो अनसूया माता मौन होकर आखें बन्द किये रही। बादमें जरा गम्भीर होकर उन्होंने अपनी वाग्धारा चलायी “सीता बेटी, नगरके नगरजनोंके, वनके वन्यजनोंके और कुल मिलाकर इस ससारके

कहते मातृ भावा प्रकटित प्रेमपथ मुग टूट १ । जिस स्त्रियाँमें
 तुम लोग जाभाग वहाँ दूसरी बाई बँटित मरी है । और १। भी
 तो मुझारा वह क्या बिगड़ मरती है ? परन्तु क्या २
 रोग और रोगार अनु-य ॥ ॥ स्त्रियाँमें मरती अति मा
 पान मिलेग । आठमाँ बागमा और गाली बनि मनि प्रकट मरती
 कम १ । परन्तु व भी मिलेग अति । एक क्षण स्वर रोग
 आग बाग परन्तु एक क्षण मरमर वहाँ मुझारा लिए है । वह
 प १ स्त्रियाँमें तिन ही तान बुनित गाथा मगमग तनि-
 दूर दूर आया क्या ह । व न तो गाथाका विचार क्या १ भाग १
 मरती । परन्तु राम-लक्ष्मण अम मरमरारा जोह मुझारा माय
 हानरे कारण बहुत रितारी बाग मरी है । परन्तु बरी प्रेम तो
 हमें स्वय ही अपना रोग करना मीगना चाहिये । तुम मरमरार
 समान १ । मनिवार । मुझारा बिलकुल भय रोग हाना । परन्तु माग
 स्त्री गरीर ही मग है कि इस मरमर नरगाथाका अति माल
 और सनीतरी रोग करता बहा कठिन १ जाग है । इनका अर्थ
 है कि एक विचारियारी गति मरमर मगमग गिथिल पद मग है ।
 परन्तु जहा धार धमकीसे काम नहा बनना वग व लोग प्रेममग
 और दूसरा अनेक चागियाम काम गत १ तथा स्त्रियाँ काम
 स्वभावका अनुचित लाभ उठाकर उह पतिन उनान १ और म
 प्रकार अनेक स्त्रियाँ जीवनका घलमें मित दो १ ।

‘माताजी आपकी बातों में मैं भी समझ गई । आप जसाक
 आतावाद में मग जायत रहना प्रेमन कहती । अलमें तो मैं भी
 एक मानव प्राणी ही हू । परन्तु मुझ एता भी लगता है कि हमारी
 बहनाके ऐसे नपस्मानाकी आतिरमें किसी स्त्री या स्त्रियाँ १ काम
 करना होगा । जायत मरमर नष्टिमें यह भय मत रहे परन्तु व हमारी
 प्रगतिमें कभी बाधक नहीं होता चाहिये । इस आप भी अवश्य स्वार
 करण । इसके सिवा अपने अल्प अनुभव परसे मन भी चतता तो मीरा
 ही है कि ऐसे नराधम हृत्पसे अत्यन्त दुबल होते ह । व दूर स्वर चाहे
 जितनी बकबक करते रहें परन्तु सतावकी अमिका स्पष्ट करनेकी

हिम्मत उनमें नहीं होती। इसलिए उनका शिकार वनमेंसे पहले स्त्री यदि दृढ़ सकल्प कर ले, तो वह मार कर या मर कर भी अपने शील और सतीत्वकी रक्षा कर सकती है।” सीताके प्रत्येक शब्दसे सती अनसूयाका हृदय आनन्द अनुभव कर रहा था। उन्हें पक्का विश्वास हो गया कि सीता कोई सामान्य स्त्री नहीं है।

सीता जैसी सच्ची नारियोका रक्षण उनका सतीत्व स्वयं करता है। इसके सिवा जो स्त्री सती होती है, उसे सकटके समय अपना कर्तव्य अपने-आप सँझ जाता है। यह रहस्य सती अनसूयाको इस अवसर पर अधिक समझमें आया। अत्रि-आश्रममें दो तीन दिन बीत चुके थे। अतः अत्रि और अनसूयाके आतिथ्यका मधुर स्वाद चखकर राम, सीता और लक्ष्मणकी त्रिपुटीने दण्डकारण्यकी ओर प्रयाण किया।

२२

सुतीक्ष्णसे भेट

दण्डकारण्यमें स्थित पंचवटी नामक स्थानकी कल्पना करते करते राम चले जा रहे थे। उनके पीछे सीता छायाकी तरह उनका अनुसरण कर रही थी। और सीताके पीछे लक्ष्मण नीची आँखें किये चल रहे थे। इतनेमें “अहो मुनिराज, मुनिराज, ऐसा कभी हो सकता है?” कहकर रामने अपने पावोंमें पड़े हुए मुनिवरको आदरसे खड़ा किया। मुनिकी आँखें रामके मुख पर जम गईं। रामके नेत्र मुनिके नेत्रोंसे मिले और मुनिके नेत्रोंसे आसुओंकी धारा बहने लगी। कुछ क्षणोंमें मुनिकी काया चित्रवत् स्थिर हो गई। कैसी अनुपम भक्ति! सीता और लक्ष्मणकी आँखें भी मुनिवरकी यह दशा देखनेके लिए आकर्षित हुईं। जहाँ आत्माके साथ आत्माका मिलन होता है, वहाँ लिंग, देश-काल अथवा वेगभूपाके भेद कैसे टिक सकते हैं? राम अपने हाथोंसे मुनिके नेत्र और मुख पोंछने लगे। कहा जाता है कि सती सखुवाईके साथ अनाज पीसनेमें भगवानको कोई सकोच नहीं हुआ था। सचमुच जब प्रेम-भक्तिपूर्ण हृदय मिलते

ह तब लिय बेश अथवा देाके भेद वाचक बनकर उह जलग नही कर सकते ।

इन मुनिराजका नाम मुतीक्ष्ण था । वे प्रसिद्ध अगस्त्य ऋषिके गिण्य थे । रामचन्द्र गृहस्थ ह उनके साथ उनकी पत्नी भी ह ऐसा कोई भ्रमभाव उनके मनमें पना नही हुआ । उह तो राम साक्षात भगवान ही मालूम हुए । प्रेम ही भगवान है । और श्रद्धा ही परम बल है । जसी जिसकी श्रद्धा बसा ही वह होता है । इसी प्रकार जिस पर हमारी जसी श्रद्धा हाती है बसा ही वह हमें लगता भी है ।

जब राम मुतीक्ष्ण मुनिको साथ लेकर आग ब । मुनि घाड थोड अतरके बा रामके समक्ष खडे हो जाते और एकटक उनका मुख निहारने लगने । कभी ये नाचते कभी कन्ते तो कभी जोरसे रो पडत और कभी फिरमे भावस्थ तथा स्थिर हो जाते । राम सीता और लक्ष्मणके लिए मुनिकी यह दगा कभी कभी एक पहेली बन जाती । परन्तु तानाक चित्त प्रसन्नतासे उमड रहे थे । वातावरणसे ऐसा लगता था माना बनके पना और तरवर भी मुनिकी यह बाल्लीला देखनको अधीर हा उठ हा । मागमें अनकविध मनोहर दृश्य आसाक मामनसे गुजर रह थे परन्तु मुतीक्ष्ण मुनि तो बबल रामचन्द्र मुखारविन्का ही अनिमेष दष्टिसे लवते रहे । और राम सीता तथा लक्ष्मण भी मुनिकी लीलाको देखकर मनमें तरह तरहक विचार करने हुए आग ब रह थे ।

अशुभकी सूचना

तीनों चलते चलते अगत्स्य ऋषिके आश्रममें आ पहुँचे। शिष्यने दौड़कर गुरुजीको रामके आगमनके समाचार सुनाये। रामका नाम सुनते ही गुरुजी हर्षोन्मत्त हो गये। प्रेमका साम्राज्य कहा कहा पहुँचता है। अगत्स्य ऋषिके मधुर स्वागतका आनन्द लेकर तथा सुतीक्ष्ण मुनिकी भक्तिसुधाका पान करके यह त्रिपुटी आगे बढ़ी और गोदावरीके तट पर स्थित पाँच वटवृक्षोंके सामने पहुँच गयी। कुछ ही समयमें वटवृक्षोंकी छायामें उन्होंने पर्णकुटिया बना ली और वही पड़ाव डाल दिया।

एक दिन राम, सीता और लक्ष्मण बैठे थे। प्रकृतिकी रम्य शोभा देखते देखते लक्ष्मण प्रश्न पूछते जाते थे और राम उनके प्रश्नोंका उत्तर देते थे। रामके उत्तरोंमें मानो ज्ञानका स्रोत बह रहा था। इतनेमें एक अपरिचित स्त्री वहाँ आई। उसकी आँखोंमें वशीकरणका जादू था। उसका मुख मोहक था। उसकी नाकसे अभिमान झलक उठता था। उसका लावण्य अनोखा था, किन्तु लावण्यसे अधिक लावण्यका मद उसके भीतर है, यह उसकी चाल परसे मालूम हुए बिना नहीं रहता था। उसके कुछ अग यदि मोहक थे, तो कुछ अग घृणा उत्पन्न करनेवाले भी थे। उदाहरणके लिए, उसकी भवरो और शरीरके बाल कड़े और घने थे। नखोंकी वक्रता और पावोंकी एडिया वेडौल लगती थी।

आकर वह राम और लक्ष्मणके पास खड़ी हो गई। राम कौन है और उनकी स्त्री कैसी है, ऐसा कोई विचार किये बिना ही वह निर्लज्जके समान रामसे विलकुल सट कर खड़ी हो गई। उसके हावभाव और नाज-नखरो पर रामने जरा भी ध्यान नहीं दिया। फिर भी वह लज्जित होनेके बदले अधिक उद्धत बनने लगी, तब सीताको सहन नहीं हुआ। वे बोली

अभिनव रामायण

बहन तुम मरी ही जातिकी हो इसलिए दो गान तुमसे कनका मन हाना है। लावण्य ईश्वरका दन है। ईश्वरकी इस देनका सन्पयाग ही शाभा देता है।

वह स्त्री कहन लगा म तुझ खूब जाननी हू। चाहे जसी स्या ? तो भी ईप्सा उसका जाति-स्वभाव है। कभी विचित्र बात या ? जमा कविन कहा है ठीक बसा ही हुआ उपदेशा हि मूर्खानाम प्रसादाय न गान्तव्य। वह स्त्री अब मयागस आग बन्न लगी। सीताजाम उसन कहा तेरे जसा किननी ही स्त्रिया मन देना ह। बड़ा मनी बनन खनी है। हमारी जातिमें खुली और स्पष्ट बात कनकी जान हानी है। हम जिसाम डरत नहीं। और हम ऐसा भी मानत ह कि कुरुरनरी किसी भी वस्तुका मनचाहा उपयोग करनकी हमें स्वतन्त्रता और गति मिनी है। सन्पयागकी हमारी याग्या यह है लाक अनुगार व्यवहार करना। अर उसन रामकी ओर अपनी आँखें पुमाद परल्लु व गमक तेजसा सह न सरी। इसलिए नीचा मुँ करत बह जाग योग मन सरदा नर भ्रमराका मर पर ध्यान कर लिय ह। परल्लु तुम्हारी म मनन कर रहा ह। मरा स्या तुम्हारी है कि य स्या मरी प्रतिनिधिनी है। अर लामनरा मर मरि गमथ और गतिगानी ह। मुन किसी प्रकारकी कम न्या है। म मका मन्वागमें विनाम गता ह। परल्लु तुम्हारे सा लन ज्ञान स्वीकार करनमें भी मुन कर्ष जाति न्या है। म लामा बनकर तुम्हारा मनारजन कनमें अपनी सारी गति लगा हुआ। स्या करत मन स्वीकार करा।

एक स्या म गमनता जीर निरन्तरता लपर सीताजा लपर न। लई। गमना मयन बढ़ता गया मरे कुछ पाप ही हा बनो क्या ह स्या मर गमन एमा बाण गती थी ? ह भोजन ए स्या निरन्तर बनकर इग ह तब नीच उतर जीर उतर न। लपरगता बाबा गन कर लिया जाय ता गमात्रा विना भय नन ह। नाग ता गतिगता भूषण और गच्छा

रत्न है। स्त्रीके व्रत, टेक और शील — सतीत्व — पर प्रजाकी उन्नतिका मुख्य आधार है। स्त्रीके लावण्यका, सुन्दरताका यह कैसा दुरुपयोग है। ” राम किसी निश्चय पर पहुँचे, इसके पहले ही लक्ष्मणका पुण्य-प्रकोप भडक उठा। कुछ ही क्षणोमे उन्होंने उस स्त्रीके नाक-कान काट डाले। ‘हाय, हाय’ करती वह जमीन पर गिर पड़ी। रक्तसे धरती लाल हो गई।

“अरे, अरे लक्ष्मण, यह क्या करते हो ? ” ये शब्द रामके मुहसे निकले इसके पहले ही यह घटना हो गई। लक्ष्मणने ऐसा मान लिया था कि मेरे इस कामसे राम प्रसन्न होंगे। परन्तु उनकी यह मान्यता गलत सिद्ध हुई। लक्ष्मण रामके चरणोमे गिरकर क्षमा मागने लगे। सीता मनमे यह सोचकर खुश हुई कि जो स्त्री अपने लावण्यका दुरुपयोग कर रही थी, उसका लावण्य छीन लेनेमे कुदरतकी वफादारी है।

प्रेममूर्ति रामने अन्तरके उद्गार प्रकट करते हुए कहा . “लक्ष्मण, स्त्री चाहे जैसी हो, उस पर किसी भी कारणसे पुरुष हाथ उठावे यह सच्चा मार्ग नहीं है। फिर, हम तो इससे दूरके पुरुष हैं, इसलिए हमे इस पर अधिक विचार करना चाहिये। इस कृत्यके पीछे तुम्हारी जो शुभेच्छा है, उसका विचार करके ही तुम्हारी इस भूलके लिए मैं तुम्हें क्षमा करता हूँ। सीता और तुम दोनों यह समझ लो कि हमने अपने हाथो अपने अशुभका आजसे आरम्भ कर दिया है। यद्यपि इस स्त्रीको तो इसकी करतूतका ही बदला मिला है और सारा स्त्री-समाज यदि इससे सबक लेगा, तो कुल मिलाकर जगतको लाभ ही होगा, परन्तु ऐसी सजा देनेका सब कोई अपना अधिकार मान बैठें, तो जगतमे प्रेमके साम्राज्यके बदले ताड़नका साम्राज्य फैल जायगा। कभी कभी कुदरतकी सजा मानवके द्वारा मिलती है यह सच है, परन्तु निमित्तमात्र बननेवाले मानवको तो पश्चात्ताप ही करना चाहिये। तभी अहिंसाकी प्रतिष्ठा जगतमे बनी रहेगी और मानव-समाज मानवताके मंगलकारी मार्ग पर आगे बढ़ सकेगा। ”

रामके साथ लडनेकी तैयारी

नाक कान बटवाकर अयमानसे आहत हुई गूणगता नपुन पुत्राती और सिरके बालाको नाचती हुई रावणके निवासमें आ पड़ची। उसने चेहरे पर रक्तवी बूंदें जम गईं थी। नाक सामन रखा हुई हथेली उसने हटा ली। अपने भाईका देखन ही उसकी आंखासे चौघार जामू बहने लगे।

अपनी बहन गूणगताको ऐसी खिन्न और कुरूप अवस्थामें देखकर रावणका नाथ भडक उठा।

अरे क्षुण्णता यह क्या हुआ? कौनसा आदमी तरी यह दुःशा करके भी जीवित बच सका है? भाई खर और दूषण कहा गय? अधीर बना हुआ रावण अपनी बहन गूणगताके जामू पाउते पाउते बोला।

वे दा ही भाई ह और उनके साथ एक सुन्दर स्त्री है। उन सीताके नाम त्रमम राम लक्ष्मण और साता ह। दन्कवनकी पक्षवटीमें वे लोग रहते ह। मेरे नाक-कान लक्ष्मणन काट ह। और सीतान अपन देवरको ऐसा करनसे रोका नहीं बल्कि इसमें रस लिया। खर-दूषण और हमार सबडा सनिकाको उन दो भाइयान मौनके घाट उतार दिया है। आज खर या दूषण कोई जीवित नहा है। कहते कहते गूणगता जोरन रो पडा।

रावणके मुस्केका पार न रहा। वह बोला उन भटकनेवाले सायआके पुजारी नवयुवकाको म पहचान गया हू। मिथिलामें राजा जनकका गिव धनुष तोड़नेवाले भी वे ही थ। उस स्त्रीका भी मने पहचान लिया है। बहा उसकी छवि और सुन्दरताको म आज भी भूला नहीं हू। इतना कहकर रावण कुछ क्षण रुक गया। फिर बोला

उन दोना भाइयाको पकडकर जलमें बल कर दू तभी मेरे मनको

शांति मिलेगी।” यह कहते हुए उसने अपने दात कटकटायें और एक हाथ पर दूसरे हाथका मुक्का मारकर अपना क्रोध भी प्रकट किया।

“भाई, इतना याद रखना कि वे लोग दूसरे सामान्य मनुष्योंकी तरह नहीं हैं। मेरे हृदयकी वेदना तुमसे कैसे कहूँ? कान और नाक कट जानेके बाद अब इस शरीरमें बाकी क्या रहा? मेरा जीवन मुझे जहरके समान कड़वा लगने लगा है। मैं कैसे जीऊँ? किसके बल पर जीऊँ?”

वहनुके हृदयकी आगको प्रकट करनेवाले ये शब्द सुनकर उसे ढाढस बधाते हुए रावण गरजा “मैं भी समझता हूँ कि लक्ष्मणने तेरे नाक-कान नहीं काटे हैं, परन्तु मेरे काटे हैं। उसने हमारे सारे पौलस्त्य कुलकी प्रतिष्ठा पर हाथ डाला है। तेरा यह भाई जीवित है तब तक तुझे कोई चिन्ता नहीं करनी चाहिये। बोल वहन, तू क्या चाहती है? बालि जैसे महाबलीके साथ टक्कर लेनेवाला मैं उन लोगोसे दबने-वाला नहीं हूँ।” इतना कहकर उसने जोरसे धरती पर पैर पछाड़ा और आसपासकी धरतीको हिला दिया।

“भाई, मेरी इच्छाकी बात यदि तुम पूछते हो, तो मैं यही चाहती हूँ कि तुम उस सीताको पकड़कर लकामे ले आओ। मैं उसे लकामे देखूंगी, तभी मुझे शांति मिलेगी, तभी उन दो भाइयोंकी आख खुलेगी। वैसे, उन दोनोंको दूसरी किसी बातकी परवाह नहीं है। मृत्युको तो वे लोग हथेली पर लेकर घूमते हैं। उन दोनोंको तुम कैद करो या मार डालो, उससे मेरे मनको शांति नहीं मिलेगी। मेरा मन तो तभी प्रसन्न होगा जब तुम सीताको लकामे ले आओगे।”

अब मन्दोदरीसे चुप न रहा गया। वह बोली “ननदजी, कोई स्त्री दूसरी किसी स्त्रीकी लाज-मर्यादा नष्ट करनेके लिए किसी भी पुरुषको उत्तेजित करे यह उचित नहीं है। इसे मैं हमारी समस्त स्त्री-जातिका द्रोह मानती हूँ। कुछ दीर्घ दृष्टिसे सोचकर और चाहे जो करनेको कहो, परन्तु ऐसी बात कभी न कहो।” रावणसे मन्दोदरीने कहा “जिस पुरुषकी शक्तिसे स्त्रियोंकी रक्षा नहीं होती, उसकी शक्तिको दुनियामें आदर नहीं मिलता, तिरस्कार ही मिलता है। आपकी

अर्धांगिनीके नाते आपका धर्म बतानका कठोर कतब पालन करनेमें यदि आपके प्रति जविनय हो रहा हो तो मैं आपका क्षमा मांगती हूँ। आज आप भले राक्षस कहलाने हो परन्तु मूलतः आप पुण्डित्य मुनिके बगल हैं। आपको भूत यह भी याद दिलाना चाहिये कि काम विकारको जगत्कर भस्म करनेवाले और उस भस्मका जगत्प्रत्यय पर लेप करने वाले मौम्यमूर्ति भगवान् निबब आप परम भक्त हैं। आपका जो समृद्धिप्राप्त हुई है उनका उपयोग जगत्तक कल्याणमें करनेकी ही आपका भगवान् गहररी अनुमति हो सकती है।

गुणलाल मन्दाग्रीव सामन अपनी लाल लाल आँखें निकाली। वह कुछ बाल इसमें पहले ही रावण बोल उठा मन्दाग्रीव मन्दोदरी जगत्तक गया। तुम्हारा समचारीना मैं अच्छा तरह जानता हूँ। जिनके समय वह मेरे कामकी नहीं। अपनी गतिवाका मैं कहा और राम उपयोग कर इसकी सहायता मैं तुमसे भागू तब तुम मझे अपना मन्दाग्रीव दना। मेरी अर्धांगिनीके नाते तुम्हारा जो अधिकार है उसमें मैं सुरक्षा रखता हूँ। परन्तु फिर फिर यदि तुम इस प्रकार हस्त शय करना चाहोगा तो मैं उस सहन नहीं करूँगा। तुम्हें मेरा आचरण पता नहीं है। तो तुम भूत अलग हो सकते हो। एक पराया पुरुष तुम्हारी मर्मा नमस्ते नाश-कान काटता है क्योंकि तुम्हें कोई चिन्ता और भूत नहीं है। जिनके उस पराया स्त्रिका गुणलाल जहाँ बात ही पता है वह भी तुमसे मन्दाग्रीव नहीं। यह तुम्हारा क्या धर्म और पवित्रत्व है?

गुणलाल के चेहरे पर अब समस्तका फल गढ़। उसने अपने भावों का वह समयमें मन्दाग्रीव सामन जीम निराल हो और आगे निराल वह भाव बनाया कि मेरा भाव तो मूलकमें ही आप ऐसा बना है।

मन्दाग्रीव समस्तका पत्थर लिया। परन्तु अन्य हो जानकी बानस गहर हृदयका गहरा पत्थर मिला। उसकी आँखें छलछल आइ। निराल स्वरमें वह बोला आज अन्य हो जानकी बान आपने कहा तो क्या परन्तु आज क्या कहा करके एमी बान मैं कहूँ। मन

अपना यह शरीर एक पुरुषको ही सौंपा है, इस जीवनमें वह दूसरेको नहीं सौंपा जा सकता। पतिव्रता स्त्रीके इस अधिकारको आपने स्वीकार किया है कि वह अपना मत स्वतंत्रतासे पतिके सामने प्रकट कर सकती है। इसीलिए मैं इतना कहती हूँ और जब तक आप इस अधिकारको वापिस नहीं ले लेते, तब तक मैं ऐसी बात आगे भी कहूँगी। इतना मैं जरूर कहूँगी कि अपनी वाणीमें मैंने अधिकसे अधिक शिष्टता, सम्प्रतिष्ठा और नम्रताका पालन किया है, और सदा ही इनका पालन करूँगी। हमारी शूर्पणखा बहनने उन दोनों भाइयोंके साथ जो व्यवहार किया, उसका सारा वर्णन मैंने अपनी इन ननदजीसे सुन लिया है। इनके नाक-कान काटे गये, इसका मुझे एक भौंजाईके नाते ही नहीं परन्तु एक स्त्रीके नाते भी बड़ा दुःख हुआ है। परन्तु एक ओर चरित्र-भगको रखूँ और दूसरी ओर ससारके किसी भी सुख-दुःख या वस्तुको रखूँ, तो दोनोंमें मैं चरित्रके पालनको ही प्रधानता दूँगी। राम, लक्ष्मण और सीताके चरित्रकी वाते स्वयं शूर्पणखा बहनसे आप सुनेंगे, तो मेरी बात आपके गले उतरनेमें देर नहीं लगेगी। न्यायकी तराजूमें अपने या परायेका भेद नहीं होता। वस, मैंने अपनी शक्ति और मर्यादाके अनुसार अपने धर्मका पालन कर दिया। मेरी बातें आपको अनुचित लगती हों, तो मैं बार-बार आप दोनोंसे क्षमा मागती हूँ।” इतना कहकर मन्दोदरी भीतरी खडमे चली गई और अपने गृहकार्यमें लग गई।

अब केवल भाई-बहन दोनों ही रह गये। मन्दोदरीके बचन वातावरणमें गूँज रहे थे। रावण थोड़ी देरके लिए तो विचार-मन्थनमें पड़ गया, परन्तु शूर्पणखाका कुरूप चेहरा देखकर वह फिरसे क्रोधावेशमें बहने लगा “बहन शूर्पणखा, जब तक तुझे चैन नहीं पड़ेगा तब तक मुझे भी चैन नहीं पड़ेगा। लक्ष्मणने जैसे हाल तेरे किये वैसे मैं सीताके भले न करूँ और उसे आदरके साथ लंकामें रखूँ, परन्तु हमारे कुलकी प्रतिष्ठा और इज्जतके खातिर सीताको एक बार तो लंकामें लाना ही होगा। मुझे खर, दूधण और दूसरे चुने हुए साथियोंकी मृत्युका इतना दुःख नहीं होता, जितना तेरी मनोवेदनाको देखकर होता है।” इतना कहकर रावणने एक दीर्घ निश्वास लिया। भाईके कपाल पर जमी हुई

पमानरी यूँ अपन आचरण पाछन पाछन गुणगना बाधा। तुम्हारा कहना मिलतुल ठीक है, भाई! क्या भी क्या ? हाँ आगिर ता तुम मरी माक ही घेठ हा न। और उमन अपन भाइरी ब्यापा ली उसरी पीठ थपथपाई और क्या नाम साधधान रत्ना। उन लागार मामन बवल घल या बलम भी काम नग चलगा। छलरी पन्ना आव शकता हागी। दोना भाई जय तब सानाव पाम हाग तब ता तुम्हारा बाद बग नही चलगा। और वह सीता ना गविनालिना जीर बचुर है। जनमें छलके साथ क्या जीर गविन गी ता हा मनचाग काम पूरा हागा। इन सब याताया विचार बन्न हुए मुग गता है कि मामा माराच हमार एस काममें बड सहायक सिद्ध हाय। इतना पहचर गुणगना यह मानकर बहास बना गई कि मरी दुतागा सफल हागी। और रावण सीताक अपहरणक काममें मामाजी सहायता लतक विचारामें डूब गया। कविन ठीक ही कहा है विनाग बाल विपरीन-बुद्धि।

२५

मायावी मुग

भाई रावण तुम अभी भी समय जाआ ता हमारा लाभ है। रामक साथ गनुता बाध कर हम अपना ही जातिवे नागका निमंत्रण दग। मामा मारीचन अनुरोधके स्वरमें रावणन कहा।

मामाजा बस कीजिय। म यह सब उपदग सुननको तयार नहा। मुझ सीताका लबामें लाना ही है। यह मरी प्रतिज्ञा है।

सीताका लबामें लाना ता बायें हाथका खल है। परन्तु उसक परिणामकी बल्पना करवे म बाप उठता हू। हम माथात जगिस ललाई मोल लेनेको तयार हुए ह।

रावण बीचमें ही बोल उठा मामाजी मामाजी म सारा खतरा उगतका तयार हू। आप म और सारी लका भी भले नष्ट हा जाय परन्तु जय तक म माताका लबामें नहा लाऊगा तब तक मुझ धन नहा

पड़ेगा। परलोककी मुझे लेशमात्र भी चिन्ता नहीं है। सत्य-असत्यकी भी मुझे विलकुल परवाह नहीं है।”

रावणके इन वचनोने मारीचको निरुत्तर कर दिया। मामा-भानजे दोनोने योजना बना ली, उस पर अमल करनेकी युक्ति सोच ली और दोनोने रामके निवास-स्थानके पास पडाव डाला। ‘जो दूध सन्तके पेटमे जाकर अमृतका सर्जन करता है, वही दूध सापके पेटमे जाकर जहर उत्पन्न करता है।’

एक बार सीताजीने रामचन्द्रसे कहा “आर्यपुत्र, पता नहीं क्यों आजकल मेरे मनमे ग्लानि रहा करती है। मेरी आखोको आकर्षित करनेवाली यह वनलक्ष्मी भी मुझे उतनी मोहक नहीं लगती। इन फलोकी मीठी सुगन्ध और मनोहारिता कहा चली गई? इस नदीकी वह मोहकता कहा चली गई? रातमे मैं एकटक आकाशके इन तारोको निहारा करती हूँ, परन्तु उनमे भी पहले जैसा प्रकाश मुझे नहीं दिखाई देता। मेरे अग-प्रत्यगमे कपकपी-सी छूटती रहती है। मेरा हृदय किसी अज्ञात भयसे काप उठता है। वैसे सोचती हूँ तो जीवनमे कोई कमी मालूम नहीं होती। जहा आपके जैसे शिरच्छत्र हो और लक्ष्मण जैसे लाल हो, वहा मुझे किस बातकी कमी हो सकती है?”

लक्ष्मण भी बोल उठे “बड़े भैया, मेरे मनमे भी कोई अगम्य चिन्ता आजकल बनी रहती है।” शूर्पणखाके प्रसङ्गके बाद रामके हृदयमे तो मन्थन चला ही करता था। परन्तु वे राष्ट्रके उस युगके घड़-वैया थे। निराशाकी दुनियामे आशाका प्राण फूकनेवाले राम थकावट अथवा घबराहटका अनुभव करे, तो कैसे चल सकता था! उन्होंने सीता और लक्ष्मणको अपने वचनोसे धीरज बंधाया।

दिन तेज गतिसे बीत रहे थे। पवित्र त्रिवेणीके समान राम, सीता और लक्ष्मण जगलमे मगलका आनन्द भोग रहे थे। देवराज इन्द्रको भी ईर्ष्या हो, ऐसा आनन्दमय उनका जीवन था। त्यागकी भावनामे निरन्तर ओतप्रोत रहनेवालोको किस बातका अभाव हो सकता है? त्रिलोककी सम्पदा उनके चरण चूमे तो कोई आश्चर्य नहीं। एक

हाथ तो वापिस नहीं ही लौटूंगा। मृगके सिर पर वाण लगे या पाव पर, परन्तु उसे गिराऊंगा जरूर।” इस तरह राम जैसे समर्थ सत्यार्थीको भी इस बातका भान न रहा कि अयोध्या छोड़कर वे किसलिए वनमे आये हैं ? कौनसे कामके लिए धनुष-वाणका उपयोग करना उचित है ? और यहा किस कामके लिए वे कर रहे हैं ? अपनी धुन ही धुनमे वे दौड़ते दौड़ते छलागे भरते हुए मृगके पीछे बहुत दूर निकल गये।

लक्ष्मणकी चिन्ता बढ़ने लगी। एक ओर वे सोचते थे कि सीताजीकी सेवाको छोड़कर यहासे कैसे जाऊ ? दूसरी ओर, रामकी सेवाका जो अवसर प्राप्त हुआ था उसका लाभ उठानेको दौड़ जानेका उनका मन होता था। इस तरह लक्ष्मण दुविधामे पड़ गये थे। परन्तु वे वहासे हटे नहीं।

इतनेमे ही रामके वाणसे स्वर्णमृग घायल हो गया। घायल होते ही उसने ऐसी भयकर चीख मारी कि सीताजीका धैर्य खूट गया। अकुलाकर वे बोली “लक्ष्मण, तुम कुछ सुनते हो या कानोमे उगली डालकर बैठे हो ?”

“माताजी, सुनता तो हू। परन्तु इसी विचार-मन्थनमे पड़ा हू कि आपकी सेवाको छोड़कर रामके पास जाऊ या न जाऊ।”

“ससुरजीको तो खो दिया, अब कही पतिको भी न खो बैठू” — इस आशकामे पड़ी हुई सीताने पुत्रके वजाय देवर मानकर लक्ष्मणको गभीर ताना मारा “मैं सब कुछ समझती हू, लक्ष्मण ! उगलीसे नख जुड़े हुए हो तो भी आखिर उनसे अलग ही है न ?” लक्ष्मणमें उग्रता तो थी ही। सीतामाताके ऐसे वचन जीवनमे उन्होंने पहली बार सुने। उन्होंने क्रोधमे ही शस्त्र धारण किये और जिस दिशामे राम गये थे उसी दिशामें दौड़े। कुछ दूर जाकर मानो कुछ याद आया हो इस तरह वापस आये। सीताको प्रणाम करके उन्होंने इतना कहा “मा, प्रभुतापूर्ण रामचन्द्र यहा नहीं है, मैं भी जा रहा हू। यहा विरोधियोकी ओरसे गुप्त धमकिया मिलती रहती हैं। लम्बे समयसे खतरेकी आगाही भी मिलती रहती है। आप सावधान रहिये।”

जब रावण सीताजीन गुस्सेमें उत्तर दिया 'तुम अपना बट भाईका चिन्ता करो। मेरी चिन्तारी जरूर नही। अपनी रक्षा करतका तबित और कुशलता मुझमें है।' य प्राणपाता बाणाक समान तीख बचन पूरे सुननेस पहल ही लक्ष्मण सीताकी आगामे आसल हो गय। सीताको इसका विचार ही नही जाया कि मरे मुझ क्या निबल गया। उह तो केवल रामकी और रामस भी अधिउ उम स्वर्णमृगकी कायाके बोमल स्थाकी लगन लगी हुइ थी। यादगी भावना यस्य सिद्धिभवति तादृगा।' ठीक यही बात हुइ। वर वसा करण और कठोर प्रसंग था।

२६

सीता-हरण

रावणको अपनी चालबाजाक पास सीध पडत मालूम हुए। राम जीर लक्ष्मणके चले जानक बाद रावण सयासीका बेग धारण करके पचवटाक पास जा पहुचा।

भिक्षा देहि' कहत हुए उसन अपना करपात्र आगे बढाया।

सयासीको आया दसकर सीताजी सुन्दर ताजे फल और ताक भाजा लाइ और सिर चुकाकर नम्रभावस सयामीके दशमें आय हुए पुरपक भिक्षापात्रमें सब चीजें उहान टाल दा।

यह क्या है? वह क्या है? पूछने पूछने रावणन ऐसा डोग किया माना वह अमुक ही जातिके फल खाना हा और उसने सीता जीरो बातामें लगा दिया।

इस उमरमें आपना सयाम क्या लना पडा? सीताजीने सरल भावसे पूछा। उस अमानेमें वानप्रस्थाधर्मके बाद ही सयास ग्रहण करनेका प्रथा प्रचलित थी।

रावण बोला 'मने एक प्रकारकी विद्या सिद्ध करनके लिए यह दीक्षावग धारण किया है।' इस उत्तरसे सीताजीको कुतूहल

हुआ। अवसर देखकर रावणने कहा “तुम यहा अन्य दो पुरुषोके साथ रहती हो और वे दोनो रघुकुलके वज्र है। वे राज्य, धन-दौलत और परिवारको छोडकर इस वनमे क्यो दुःख भोग रहे है ?”

“यह सब आपने कैसे जाना ?” सीताने आश्चर्यसे पूछा।

“मैं उन्हे वचनसे जानता हू। उनमें जो बडा भाई है, उसे तो मैं नखसे शिख तक जानता हू। आज वह कहा है और क्या कर रहा है, यह भी मैं जानता हू।” यह सुनकर सीताजी चमक उठी। बोली. “सन्यासी होकर ऐसी बातें करते तुम्हे लज्जा नहीं आती ? हा, मैं समझी। जगलके सन्यासी आखिर जगली ही होंगे न।”

“अरी माई, अपनी विद्या-साधनाके बल पर तुम्हारे भलेके लिए ही मैं ये बातें कह रहा हू। तुम सुनना न चाहो तो मैं यह चला।” कहकर रावणने चलनेका ढोंग किया।

“नहीं, नहीं, सन्यासी महाराज ! मेरी गलती हो गई। आप क्षमा करे। आप प्रसन्न हो। मेरी आपसे बहुत कुछ सुननेकी इच्छा है। आप विराजिये।” इतना कहकर सीताजीने उसके बैठनेके लिए आसन रखा। सीताके इस कथनमे भोलापन था। सन्यास-स्वरूपके प्रति भक्तिभाव था। कुछ भय था और कुछ प्रलोभन भी था।

सीताकी इस भाषासे रावणने यह निष्कर्ष निकाला कि यह मेरे प्रति आकृष्ट हो गई है। जैसी जिसकी दृष्टि वैसा ही वह जगतको देखता है। उसे तो यही चाहिये था। वह आसन पर बैठनेके बदले थोडा आगे बढा। सीता भी अनुनय-विनय करती हुई कुछ दूर तक उसके पीछे पीछे गई। राम-लक्ष्मण-सीताकी त्रिवेणीके आश्रम-वातावरणकी सीमा समाप्त हुई। अब रावणने सन्यास-वेश उतार कर अपना सच्चा वेश धारण किया। देखते ही देखते एक विमान वहा आ पहुँचा। सीताजी स्वस्थ हो इसके पहले ही रावणने आज्ञा की “बैठ जाओ विमानमे।” पता नहीं क्यो, सीताजी बिना किसी आनाकानीके यत्रवत् विमानमे बैठ गई और विमान उडने लगा।

अब सीताको होश आया। वे स्वस्थ हुईं तब उन्हे रावणकी धोखेबाजी समझमें आई। अब उन्हे भान हुआ कि यह सन्यास-वेशधारी

पुरुष दूसरा कोई नहीं राक्षसी वृत्तिवाला महान राजा रावण है। मुझमें बड़ी भूल हुई। अब मैं क्या करूँ? क्या विमानमें पूरूँ गडूँ? परन्तु यह तो जात्महत्या होगा जोर आत्महत्या महापाप माना जाता है। मेरे राम जब मुझ कहा मित्र ? मैं रामको कहा मित्र गरमा ? कहा अयोध्या कहा मिथिला और कहा दण्डवार्ण्य ! और क्या यह विमान वास ! ठठ स्वयंवर-समारोहमें लखर आज तककी गारी धन्यायें एक-एक करके सीताकी आवाज सामनस चलचित्रर ! तरह गजरन लगी। सारे बिजपटमें राम राम जोर बबल रामक गिवा उड़ दूँ मरुता कुछ भी जिलाई नहा लिया। जायें बंद करके सानान रामरा छत्रि मनमें खड़ी की। परन्तु जानें खोलने ही सामन रावण बठा जिलाई दिया। कहा पवित्र भूति सत्यनिष्ठ राम और कहा बपट-बगपारी अधम भूति रावण ! जिस पापके कारण आज मुझ रावणक साथ एक ही वाहनमें बठरा पड़ रहा है ? अब वह स्वर्णधुग सीताकी आवाज सामन आ खड़ा हुआ। अहा उस मृगकी वाया पर मुझ कहाँ माह हो आया ? मिथिला और अयोध्याका धमक विलास छाड़त समय मुझ जरा भी जाघात नहीं लगा एक क्षणमें मने प्राणप्रिय सगे सम्बन्धियाका ह्याग कर दिया। तब यह तुच्छ-सा लोभ मरे मनमें बस पटा हो गया ?

क्षणभरकी असावधानी और अजागरुक्ता भी मनुष्यका कहाँस कहाँ ला पटकती है।

और फिर तो रामको स्वर्णधुगके पीछे भोजनकी बात लक्ष्मणका उकसानेकी बात, अपने कइवे बचन रावणके दम और छलना पहचाननेकी अक्षमता सयामीके साथ हुए अपने वार्तालिपकी क्षतिया और विमानमें बठन तककी भूल-परम्परा साक्षात्की याद आई। उनक पश्चात्तापका पार न रहा। अब क्या किया जाय यह साचन साचते सीतान अपना सिर दो हाथोंके बीच रख लिया।

प्रथम उड़ान स्त्री-सुलभ स्वभावसे रावणको खूब मनाया भाई मुझे अपने आश्रममें छोड़ जाओ। ऐसा न करो तो इसी जगह विमान नाचे उतार दो। रामके त्रिना मुझे एक क्षणके लिए भी धन नहा

पड़ेगा।" आचल पसार पसार कर सीता रावणसे अनुनय-विनय करने लगी। रावण मुसकराता रहा। उसने कोई उत्तर नहीं दिया।

सीताने भी समयको पहचान लिया। उन्होंने अपने वन्य-आभूषण विमानसे नीचे फेंकना शुरू किया। वे रावणके सामने अपने सतीत्वका प्रताप दिखाने लगी "रावण, सबसे पहले मैं तुझसे कह देती हूँ कि इस शरीरमें प्राण होंगे तब तक तू इस शरीरके सामने एकटक देख ही नहीं सकेगा। याद रखना, हम सतियोंके शरीर आगकी धधकती ज्वालाओंके समान होते हैं। ये ज्वालाएँ कुदृष्टि रखनेवालेको दूरसे भी जलाकर भस्मीभूत कर सकती हैं।"

परन्तु रावणका अभिमान उसे ये बातें समझने नहीं देता था। सीताजी अकुलाई "क्या सतीत्व पर छलकी जीत होगी?"

पाठक जानते हैं कि लोभके अशके कारण ही अभी तक छलकी जीत हुई है।

२७

गृध्रराज जटायु

घरर . घरर आवाज करता विमान आकाशमें दौड़ा जा रहा था। सीताजी रावणसे टक्कर ले रही थी। इतनेमें विमानका यह दृश्य आकाशमें ऊँचे उड़ रहे एक विशालकाय गिद्धने देखा। उस गिद्धका नाम जटायु था। वह एक पक्षी था और मासभोजी पक्षी था, परन्तु उसे भी अपनी स्वाभाविक बुद्धिसे इतना समझमें आ गया कि अन्यायका सामना करना मेरा धर्म है और इस धर्मके पालनका अवसर मुझे मिला है। जटायु प्राणोंकी वाजी लगाकर इस धर्मकार्यमें जुट गया और उसने विमानको रोक दिया। जटायुका यह विचार था कि सीताजीको अपने कंधे पर बैठा लूँगा और विमानको नीचे गिराकर चकनाचूर कर दूँगा। उसने अपने पंख फैलाये। गृध्रराज अपनी तीखी चोंचसे विमान पर प्रहार करनेमें लग गया। सीताजी यह बात समझ न पाई कि उन्हें गिद्धके फैलाये हुए पंखों पर बैठ

जाना है। इतना जरूर उड़ान समझ लिया कि यह पता भरी गंगा
यता करन जाया है। रावण जगह पर और विमान पर आई जाति
को ताड़ गया। उसने एक हाथ से विमान पर अच्छी तरह नियंत्रण
रखा और दूसरा हाथ जटापंके गुच्छ में मीठा चुगड़ लिया।
गुधराजने अपनी सारी शक्ति लगाकर ध्यान मुहुरत सा लगा लिया,
परंतु इस क्षणिक क्षण में उड़ना एक पल बंद गया। मुग्ध हो
प्रभु! वह कर अपना धर्म पालन हुए यह धरती पर लुप्त गया।

रावणने आपत्ति टल जानकी निश्चिन्तता अनुभव का दीप
निद्रास साचा मीठाकी आरक्षण अदृश्य लिया विमानका गति
बनाई और उस अधिन ऊंचाई पर ल जा कर पूरी गतिग छा लिया।
मानाजीकी चिन्ता बन्ती जा रही थी।

गुधराजकी इस करण मृत्यु सनाक हृदयका बड़ी धक्का हुआ।
मन ही मन के बोल उठा भाई गिठ तूने भी भर गिग प्राण
खाये। म तरी अतिम प्रिया भी नहा कर सकी। राम राम! बन्नी
गति पारी है।

रावणका विमान सीताको लेकर तेज गतिसे आगे बढ़ गया था।
मार्गमें अनेक रमणीय दृश्य दिखाई देते थे परंतु रामका मग्नहृति
कहा दिखाई नहीं पड़ती थी। रामके बिना सागर जगत सीताका सूना
सूना लगता था। जो कुछ प्रत्यक्ष नहीं दिखाई देता उस वर्तमानमें
देखनेका सीताजी प्रयास करती थी। पणकुटी स्वर्णमृग राम लम्पण।

मिथिला अयोध्या दण्डारण्य। इस तरह अनेक वर्तमान बिभ्र
सीताके स्मृतिपट पर उठते और विलीन होते थे। जटायुकी करण
मृत्युकी भी वे कैसे भूल पाती? निभयता और मामवताना मूर्ति
गुधराज! क्या वह जीयेगा? कोई जाना नहा। बेचारेने मर लिए
अपने प्राण गवाये। लेकिन मरते समय म उसके पास न रह सकी।
राम ऐसे समय उसके पास पहुंच जायें तो उस वितनी सात्वता
कितनी शान्ति मिले।

इस प्रकार अनेक विचार विमानकी गतिसे भी कहा तज गतिम
सनाके मानस पट पर उठन और विलीन हो जाते थे। अन्तमें उनका

मन राम पर जाकर टिक गया। वे राममय हो गई। मुखमें राम, स्मृतिमें राम, कल्पनामें राम, हृदयमें राम। केवल दृश्य जगतमें ही रामका दर्शन दुर्लभ हो गया था।

उधर रावणके प्रहारोंसे आहत होकर धरती पर मरणासन्न पड़े हुए गृध्रराज जटायुके प्राण किसी भी तरह शरीरको छोड़ नहीं रहे थे। सारा शरीर घावोंसे लहू-लुहान हो गया था। इस अत्यन्त वेदनापूर्ण अंतिम स्थितिमें भी जटायुकी आत्माका आनन्द उसके मुह पर दिखाई देता था। उसका शरीर मुरझाकर फीका पड़ गया था, परन्तु मुख पर प्रसन्न मुसकान फैली हुई थी। वह ऐसा दिखाई देता था, मानो कर्तव्यकी वलिवेदी पर स्वेच्छासे चढ़ा हुआ कोई महारथी योद्धा हो, और स्वर्गकी वरमालाको इसीलिए अस्वीकार कर रहा हो कि उसके उदात्त त्यागकी कदर करनेवाला कोई वैसा ही महासेनापति आकर उसके माथे पर अपना मीठा हाथ फेरे।

२८

रावणके अन्तःपुरमें

यह कथन सर्वथा सत्य है कि चित्त स्वस्थ होता है तभी अन्तःकरणसे कोई उदात्त विचार बाहर आता है, और कोई भव्य आदर्श सामने उपस्थित होता है तभी चित्त स्वस्थता अनुभव करता है। जानकीके नामने अब रामके शरीरकी अपेक्षा रामकी विशेष उज्ज्वल टेक हमेशा बनी रहती थी। इस कारणसे उनमें विलकुल नया उत्साह और नई स्फूर्ति आ गई। उन्होंने मनमें दृढ़ निश्चय कर लिया कि अब रावणके सामने रोने-गिड़गिड़ाने या उसकी खुशामद करनेकी विलकुल जरूरत नहीं। रामसे तुरन्त मेरा मिलाप होनेकी अब कोई संभावना नहीं है। मुझे अकेले ही न केवल रावणका परन्तु उनके सारे समाजका सामना करना होगा। उसमें प्रलोभनोंके आकर्षण और मुभीषतोंके काटे दोनों पार करने होंगे। एक दृष्टिमें तो जो हुआ अच्छा

ही हुआ। आज तक मने पति या अथ सम्बन्धी-जनाके सहारे अपन शाल अपन सतीत्वकी रक्षा का है, अब गाल्की रक्षा मेरी बड़ी कमीनी करनेवाली है। एक जोर राम जस प्रममूर्ति गिरच्छत्रका और लक्ष्मण जस पुत्रका वियोग दिन रात मुझे सतायेगा। दूसरी ओर इस नर राक्षसके आक्रमणस अपन स्त्री गरीरकी पद पद पर रक्षा करनी होगी। अब समझमें आता है कि प्रमथयमें केवल त्याग अथवा समपण ही पर्याप्त नहा होता। सम्पूर्ण ननिक साहस और किसी भी परिस्थितिमें धितकी समता बनाये रखनका याग भी आवश्यक होता है।

एम ऐम जनक विचारा और निश्चयास सीताकी सकल्प गक्ति दृष्ट हानी गई। आत्माकी गहराईम प्राप्त इस सहज स्नातके कारण उनका मन भर पवतकी दृष्टता और स्थिरता अनुभव करन लगा। उ ह जगतके सारे भौतिक सम्बन्धाम परे रहनवाली अयक्त चेतनाका स्था होन लगा और कुछ ही क्षणमें उनके मुख पर तेजपज चम कने लगा। उनक जनमय और प्राणमय कोशकी गक्तिया उनक मन पर आक्रमण करनके बन्हे दासा बनकर उनका आशाका पालन करन लगा। रागणने सीताजीके सामने कुछ दर एकटक देखना चाहा परन्तु उनके तेजके सामने उसकी आखें चौधिया कर बंद हो गई। किसी आम्प रीतिसे उसनी आत्मा सीताजीकी गुड आत्माके समक्ष पराभूत हो ग नन हो गई। क्षणभर तो उसके मनमें यह भय पठ गया कि इस प्रगल्भ ययानिकी ज्वालामें जलकर वह कही भस्मीभूत न हो जाय? परन्तु य भाव रावणक मनमें अधिक समय तक नहीं टिके। तामम गुणकी अघोमुग्गी गक्तिरा गहरान उस चारा आरम घेर लिना और वह अकडकर अपना मूछा पर ताव देने लगा। सती मीनाने स्वाभाविक प्रभावने रावणके मच्चे तेज पर पूरी तरह अधि कार जमा लिया था। इसका भान उस हुआ भी था।

यह प्रश्न उठ सकता है कि यह भान हा जानके बाद भी रावण चान्द्रा रात्र गितानका भूमता क्या करना हागा? प्रकृतिके दुबल तत्व इसा प्रकार अपना अन्तिम मिड करनक लिए मिय्या प्रयन करत ह। हम जन भानके और अपने आसपासक मयाका समचनकी और

असत्योसे मुक्त रहनेकी थोड़ी भी शक्ति अपनेमे वढाये तो कितना लाभ हो। सीताजीका यह प्रसंग केवल स्त्री-समाजको ही नहीं, परन्तु समस्त मानव-समाजको आध्यात्मिक शक्तिकी एक अद्भुत प्रतीति करानेवाला प्रसंग है।

सीताजीने अब अपने वन्य आभूषण भी उतार डाले। उन्होंने अधिकसे अधिक सादगी अपना ली। भावनाका तेज अब इस सादगी-मे भी नया सौन्दर्य प्रकट कर रहा था। विपरीत परिस्थितियोंमे जब एक बार सत्य हाथमे आ जाता है, तब जहा देखो वहा कल्याण और सच्चा सौन्दर्य ही लहराता दृष्टिगोचर होता है। कदाचित् इसी-लिए अनुभवी महापुरुषोंने 'सत्य शिव सुन्दरम्' को आत्म-स्वरूपके विशेषण माना होगा। इस स्थितिमे भी सीताकी आत्मा सहज रूपमे निजानन्दका अनुभव करने लगी। कुछ समय बाद सीताने एक बार फिर अपने तेजस्वी नेत्रों द्वारा रावणकी शक्तिका अन्दाज निकाला और विमानकी खिडकीसे नीचे भूमितल पर देखा। अब तो यह सारा भूमि-जगत उन्हें अपना ही लगने लगा। नीचेके विभिन्न दृश्य निहारती हुई सीता विमानमे आगे बढ़ रही थी। एक स्थान पर वन्यजनोका एक समूह विचार-विमर्श करता हुआ उन्हें दिखाई पडा। उस समूहकी नजर भी विमान पर जम गई। दोनोंने परस्पर आत्मीयता अनुभव की। सीताजीके मनमे एक क्षणके लिए यह भाव उठ आया कि वन्यजनोका यह समूह मेरी सहायता करे तो कितना अच्छा हो। परन्तु उन्होंने तुरन्त इस विचारको दबा दिया और केवल अपने आभूषण नीचे डालकर ही सन्तोष माना। नीचेके समूहमे से एक चपल और चतुर आदमी उठा। उसने विमानकी ओर दृष्टि गडाकर सीताजीको प्रणाम किया और उनके आभूषण उठाकर अपने समूहके पास ले गया। सब लोगोंने आभूषणोकी पूजा की और उन्हें सभाल कर उचित स्थान पर रख दिया।

अब विमान पम्पा सरोवर पार कर चुका था। उसकी गति बढ़ गई थी। पर्वत-मालाको देखकर लकाके नजदीक आ पहुचनेके विचारसे रावण आनन्दित हुआ। कुछ ही समयमे अक्षय जलसे भरा महासागर

दिसाई पडा और विमान उसके विशाल पट पर उड़ने लगा। महासागरकी उत्तुंग लहर गजनाके साथ उठती और पुन उसमें समा जाती थी माना वह अपनी सहस्रा जिह्वायास रावण पर धिक्कार बरसाता हा जोर साताजीकी ज्यादाभयी शक्तिको नमस्कार कर रहा हो। परन्तु रावणको महासागरव धिक्कार और तिरस्कारकी चिन्ता क्या थी? अन्तमें क्या नगरी जाई। विमान रावणव अन्त पुरके समाप जाकर रुक गया। रावणको अपने इस कृत्यके कारण अपने परिजनाका भी डर लग रहा था। उसने अन्त पुरके एक दूरके खडमें सीताका प्रवण कराया। राना या दूसरी कोई परिचारिका यहां न जाने पाय ऐसी कड़ी जानाके साथ रावणन साताके खडके चारा ओर राक्षमियाका पहरा धठा लिया। ये राक्षसिया स्त्रीजातिकी हात हुए भी बड़ी विचित्र और भयंकर था। सीताजीने अत्यन्त वात्सल्यपूर्वक उनकी ओर देखा, परन्तु उनमें कहा भी आत्मीयताका भाव दृष्टिगोचर न हुआ। वस वे रावणकी आनासे सीताकी कोई भी बात सिर आखा पर उठानेके लिए सत्ता तयार रहती थी। तरह तरहके पक्वाना विविध प्रकारके रत्नजडित आभूषणा और अनेक प्रकारके सुन्दर वस्त्राका सीताके सामने डर लगा रहता। परन्तु सीताका हृदय एक क्षणके लिए यह सब दृष्टकर व्यया अनुभव करता और दूसरे ही क्षण यथाका मूलकर मई परिस्थितिका सामना करनेकी उह प्रेरणा देता।

सीताकी शोधकी चिन्तामे

रामके वाणके प्रहारसे गिरते ही मायावी स्वर्णमृगने जिस तरहकी आवाज निकाली और जो चेष्टाये की, उनसे रामको ऐसा विश्वास हो गया था कि यह मृग सामान्य मृग नहीं परन्तु राक्षसी माया ही था। रामके मनमे रह रहकर यही विचार घूमने लगा कि “मैं उस मायाके पीछे क्यों दौड़ा ?” कौन जाने भविष्यके गर्भमे क्या रहस्य छिपा है ! ऐसा सोचते सोचते राम पर्णकुटीकी दिशामे लौटे ही थे कि सामनेमे लक्ष्मण आते दिखाई पड़े। पास आकर उन्होंने रामके चरणोंमें प्रणाम किया।

“अरे भाई लक्ष्मण, तुम यहा कैसे आये ? किसलिए आये ? किसके कहनेसे आये ? सीताका क्या हुआ ? मुझे तुरन्त बताओ। जानकी तो सकुशल है न ?” रामके शब्द शब्दसे उनके मनकी व्याकुलता प्रकट हो रही थी। पहले हुई अनेक अशुभ आगाहियोंकी रामने अभी तक कोई परवाह नहीं की थी। परन्तु अब उन सबने एकसाथ राम पर आक्रमण कर दिया। समयको परखकर उतावले लक्ष्मणने शान्तिसे उत्तर दिया

“बड़े भैया, मैंने बहुत बड़ी गलती की। मातातुल्य सीताजीके ताने मैं सह न सका और उनके अत्यन्त आग्रहके कारण मैं आपकी सहायताके लिए दौड़ आया। मैं कैसा मूर्ख हूँ ! आपको मेरी सहायताकी क्या आवश्यकता हो सकती है ? मैंने अपने धर्मका पालन नहीं किया। सौपा हुआ काम छोड़कर मैं यहा चला आया। मेरी कर्तव्य-निष्ठा शिथिल हो गई। अपने इस भारी अपराधके लिए मैं आपसे क्षमा-याचना करता हूँ, दीनानाथ !”

“यह अधिक बातें करनेका समय नहीं” — कहकर रामने अपने क्रोधको हृदयमें दबा दिया और नीची निगाह करके चलने लगे।

परन्तु रामक मोन रहन पर नी उनके चहरेकी रेखायें सब कुछ कह
न्ता था। लक्ष्मण बार बार रामक उन्नास चहरका देखत जाते थे
और अधिकाधिक दीन हीन बनत जात थ। इस तरह दाना भाई दीड
दोन आश्रमक पास जा पहुँचे।

मनकी गवा सच्ची निकल। साताजा स्वागत करनेक लिए
पणकुटाके द्वार पर उपस्थित नहा था। गायद नाराज हो अन्तर छिप
कर बैठ गई हो। ऐसा साचकर राम एकदम पणकुटीमें धुमे और
जोरम पुकारन लग। 'साता जाननी! वाला तुम कहा हा?' प्रमि
याक हृष्य भा कम विचित्र हान ह। प्रनिमण गराम धिरे रहत ह,
फिर भा घोर निराशाक बाच भा कमा जागा उनक मनमें लहराता
रहता है। रामकी दगा बना विचित्र ना गई था। अनेकाका पागल
बनाना राम स्वय पागल बन गय। अनराका माग खिलानवाले
राम आज स्वय अपना माग भूल गय। सीता जो सीता जानकी
आ जानकी। पुकार पुकार कर रामन सारी पक्षवटाको गुजा लिया।
लक्ष्मण अपन ज्येष्ठ भ्राताकी यह स्थिति देखकर स्तब्ध हो गये।
रामक पाछे पीछ उहान एक बार नहा दो बार नही पाच पाच
बार नाना पणकुटियाका कोना बाना छान डाला। परन्तु साता
कम मित्रता? रामकल और सातापत्रक कुजामें बटवभार आसपासके
घाटामें तुल्यमाना ब्यारियामें—इस प्रकार आश्रमकी चप्पा चप्पा
भूमि नाना नज गयी। गातावरीक ममाप जाकर राम बाल ह
पावना तून ना भरा जानकीका छिपाया है। दूसर ही क्षण कहन
लग 'मथिया तुम बन तर गातावरीमें डुबरी लगाय छिपी
रहता' बाता ब्या नहा प्रिये।

इस प्रकार पक्षवटाका कार्य बाना ऐसा न रहा जहा दाना
भ्राताभान माताका शात्र न की हा। परन्तु माता नहीं मिली। हा
तभा ना मित्र न? अन्तमें निराश होकर राम पणकुटाके चतुरन पर
हार-यश बन गय। गनका हृष्य भर आया। आत्मा आमुआरी
अस्थिर घारा बन बना। अर लक्ष्मण भा मनका वामें न रख सक।
साता भाई फटफट कर रान लग। तामरा बहा कौन बना था जा

इन दोनों भाइयोंको सान्त्वना देकर चुप करता ? अन्तमें लक्ष्मण कुछ सभले । मनको थोड़ा पक्का करके अत्यन्त सकोचके साथ उन्होंने बड़े भाईसे कहा “प्रभु, आप तो सारे जगतके आदर्श हैं । . . विष्वक्के ज्ञाता हैं । . . मेरे जैसे अनेक निराधारोंके आधार हैं । आप ही यदि इस प्रकार भावुक बन जायेंगे, गोकामिभूत हो जायेंगे, तो मेरे जैसे सामान्य जनोकी क्या दया होगी ? ” कहते कहते लक्ष्मण फिर रो पड़े । लम्बे समयके बाद रामकी अश्रुधारा थमी । मन विचारोंके भवरमें फस गया . “किसीने वैदेहीकी हत्या तो नहीं कर डाली ? तो उसका शव कहा गया ? मलिन विद्या और मलिन शक्तिके गर्वमें भान भूले हुए ये नर-भक्षक सीताको कहीं खा तो नहीं गये ? नहीं, नहीं, वे दुष्ट स्त्रीके शरीरको नष्ट करके ही छोड़नेवाले नहीं हैं । तब क्या वे जानकीका अपहरण कर गये होंगे ? ” इस अंतिम वाक्यने रामके पुण्य-प्रकोपको उग्र बना दिया । वे बोल उठे “अरे नराधमो, यदि तुम्हें अपनी शक्तिका ही परिचय देना था, तो मेरा यह भाई था, मैं भी था, परन्तु एक अवला पर तुमने यह अत्याचार किया ? धिक्कार है तुम्हें ! ” उनका मनोमन्थन किसी तरह रुकता नहीं था “यदि कोई अपहरण करने आये, तो क्या जानकी भुलावेमें आ सकती है ? उसकी असहाय स्थितिका लाभ उठाकर कोई नराधम ऐसा कर भी सकता है, परन्तु अपहरण करके भी जानकीको आखिर वह ले कहा जायगा ? नहीं, नहीं, मैं भूलता हूँ । मायावी मृग, उस पर सीताका मोह, मेरा भी सोचे-विचारे बिना उसके पीछे दौड़ना, मरते समय मृगकी आवाज और चेष्टाये, सीताके कहनेसे लक्ष्मणका मेरे पीछे आना — इन सब बातोंको देखते हुए यह एक व्यवस्थित पड़्यत्र ही मालूम होता है ।

“ऐसे पड़्यत्रकारी तो हमारे विषयमें सब कुछ जानते होंगे । मैं मानता हूँ कि वे यह भी जानते होंगे कि राम १४ वर्ष तक किसी नगरमें प्रवेश नहीं कर सकेगे । तब यदि उन्होंने जानकीका अपहरण करके किसी नगर या नगरीमें उसे छिपा दिया हो तो ? ” कभी राम सोचते कि स्थूल नियम आखिर सूक्ष्म नियमोंके पालनके लिए

ही होने ह न? कभी विचार आता कि अब माताजी साधमें निबल पड़ता ही हमारा एवमात्र धम है। और कभी हमारा भी विचार उठता कि प्रिया विरहव गावमें म कहा अपना धम न भूज जाऊ? अहा दज तरी भी अनोमी लीला है! कहा माता कवयारा वचन, कहा अमाया कहा मिथिला कहा दण्डकारण्य और कहा यह पंचवटी! जब श्रृंगि मनिया और वयजनाव साथ रज्ज्वर १४ वष पूर करन मरा धम है या सातावा साध करना मरा धम है? गन्तु भल हा परन्तु न सयान होन चाहिय विबरा नान चाहिय। इन मराधमाका ता न कोई धम है न कोई मित्रान। नम कर माल लेकर हमन डाक नहा किया। सयाग्रहीके भाग्यमें ये मव कष्ट लिख ही हात ह परन्तु गणपथाक नाव-नान लडमणन काट लिय यह भारी गलन हो गई। सुनामें जाया है कि रावण भा उसका भाई हाता है। और रावणके पास साहस सम्पत्ति और शाय ताना ह। गायद वही साता को हर कर ल गया हा। जब म वीगया माताको क्या उत्तर दगा? सीता मेरे साथ वनमें न जाई हाता ता य आपत्ति खड़ी होनी। परन्तु यदि साता हमारे साथ न जाई हाता ता इतना ताक सम्पन वन सधता / सीतान हम दानारी सबामें भी सब कोई बस रस। ३? जहा वदेही तो वदेही हा है। साथ निवास लरर राग मन ही मन बोल उठे जानकी तुम जहा भा हा बहाम एक बा तो योग। तुम कहा हो प्रिये?'

‘स लम्ब मनाम-वनक बाट रामन जाखें छो-गी और लम्बणं सामन दगा। लम्बण नीचा मुह बरक बिन मुद्रामें चित्रवत बैठे ये उनका पाठ पर हाव घुमाते घमाते रामन पूछा भा लडमण तु सीताके सम्बन्धमें क्या मानने हो?’

भारि मच कटू ता मरी बुद्धि कुछ काम नहीं कर रही है फिर भी इतना निश्चित है कि यह सारा कस्तून रावणकी या उस जामियाभी ही हा सकती है। हम जिस सिद्धांतकी रखाके लि वनमें आय ह उसी सिद्धान्तका रखाके लिए हमें सीताजीकी साध निरलना चाहिय। हममें एक क्षणका भी विलम्ब नहा करना चाहिय।

“यह केवल मेरी सीतामाताका ही प्रश्न नहीं है; यह तो नरा-धमो द्वारा सदियोंसे पीड़ित, दलित और शोषित समूची स्त्रीजातिके उद्धारका प्रश्न है। मैं तो यही मानता हूँ कि मेरी पवित्र सीतामाताको रावण ही हर कर लकाकी ओर ले गया होगा।”

इतना कह कर दात कटकटाते हुए लक्ष्मणने दक्षिण दिशाकी ओर कापते हाथकी अगुलीसे संकेत किया।

३०

जटायुकी मुक्ति

राम और लक्ष्मण धीरे धीरे पागलोकी तरह आगे बढ़ रहे थे। चलते चलते राम एकाएक बोल उठे: “हे वनके वृक्षो, तुमने मेरी सीताको देखा है? नदी माता, तुमने तो अपनी गोदमे मेरी जानकीको नहीं छिपा लिया न? हे करेणु और कदलीके वनो, तुम्हें तो सीता अत्यन्त प्रिय थी, तुम्हारे कुजोमें तो सीता नहीं खो गई न?”

राम सीताका नाम रटते रटते वनके झरनो, नदी-नालो और एक एक झाड़से सीताकी खोज-खबर पूछते हुए आगे बढ़ रहे थे। इतनेमें दूरसे करुण स्वरमें ‘राम . . राम!’ शब्द सुनाई पड़े।

रामने सोचा, यहाँ कौन मेरा नाम पुकार रहा है? “लक्ष्मण, इधर आना। क्या तुमने ‘राम राम’ की करुण ध्वनि सुनी?”

“बड़े भैया, आप इस तरह बीच बीचमें रुकते रहेंगे, तो हम सीताकी शोध कब कर सकेंगे?”

“अरे भाई, तुम सुनो तो। अब तो वह ध्वनि कपित होने लगी है।”

“बड़े भैया, गन्धु किसी तेज गतिवाले वाहनमें मेरी पूज्य भाभीको ले गया है। हम जिस कामके लिए निकले हैं, उसी काममें हमारे शरीर, मन, बुद्धि और प्राण लगे रहने चाहिये। मार्गमें ऐसे अनेक काम पैदा हो सकते हैं। लेकिन हम रुक कैसे सकते हैं?”

वीर लक्ष्मण तुम्हारा कहना इस दृष्टिसे तो ठीक है कि मनुष्य अपने प्राप्ति कृत्यको हानि पहुँचाकर हर कहा जय कार्योंमें पड़ जाय, तो यह एक भी काय पूरा नहीं कर सकता। परन्तु भाई तुम्हें यह भी नहीं भूलना चाहिये कि जिस कृत्यके लिए हम निश्चल हैं उस कृत्यको दण्डाक लिए यदि स्वायत्त्यागका यत्न अतिव्याय हो जाय तो हमें उसका स्वागत करना चाहिये। दत्ता, सामन वह गिद्ध लङ्कालुहान स्थितिमें पड़ा है। उसकी याड़ी भा दक्षिणा किम बिना—उसकी कुछ न कुछ भरहम पट्टी बिय बिना—हम जा कैसे बैठ सकते हैं? ऐसा मूखस कभी नहीं होगा।

इतना कहकर राम गिद्धके पास दौड़ गया और उसके क्षत विक्षत शरीर पर उहान अपने दयामय हाथ फेरे। लक्ष्मण भा उग्रध भ्राताके साथ उसके पास पहुँच गये। जटायुके घावा पर वनीपथि लगाई और थोड़ा थोड़ा बहनवाल खूनको बिल्कुल बन्द कर दिया। गिद्ध कुछ ही देरमें सजत हो गया। तुरन्त ही उसने रामके करणामें अपना सिर रखकर शरीर भूमि पर डाल दिया। राम बैठ गये। उहान अपनी गोदमें जटायुका सिर रख लिया। जटायु थोड़ी देरके लिए अपना सारा दुःख भूल गया। वह यही सोचता रहा कि मैं बकुण्डलाकमें विहार कर रहा हूँ। उसकी दगा समाधिस्थ यात्रीके समान हो गई।

शोस्वामाजान ठाक हो कहा है

गद्य अथम सग आमिषभागी।

गति नेहि दीह जो याचत योगी॥

राम भी मनका भाव प्रकट किय बिना न रह सके। बाण 'लक्ष्मण, पता नहीं क्या मेरे हृदयमें इस पक्षी पर अत्यन्त प्रेम उमड़ा है। स्वनेमें तो जटायु दोनोंका आश्चर्यमें डालने हुए मनुष्यकी वाणीमें बाला। आत्मापना आत्मीयताका जन्म दना है।' भगवन् सीतामाताका दुष्ट रावण हर कर ल जा रहा था। पहले तो मैं इसका कोई पता नहीं था। मैं केवल धृव-मस्काराक प्रतापन विर्गि में पड़ी हुई स्थावीर बचान गया था। बाणमें सच्चा बात मातृम में। मन सीतामाता वचनमें अपनी सारी शक्ति लगा दी। परन्तु मैं

लक्ष्मण के सामने मेरी क्या चलती ? ” कहते कहते जटायुकी आखे
 छलछला उठी। राम अपने दोनों हाथ स्नेहसे गिद्धके शरीर पर फेर
 रहे थे। एक हाथसे उन्होंने जटायुके आसू पोछ डाले।

अब लक्ष्मण बोले : “ बड़े भैया, हम रुक गये यह बहुत अच्छा
 हुआ। इससे मात्र सेवायज्ञको ही नहीं, परन्तु हमारे मुख्य कार्यको
 भी वेग मिला है। अब यह भी मेरी समझमें आ गया है कि जिस
 कर्तव्यमें हमारा समीपका स्वजन मुख्य पात्र हो, उस कर्तव्यके पालनमें
 स्वजनके प्रति रही हमारी ममता अपना काम करती है। ऐसी
 परिस्थितिमें सच्चे कर्तव्य-प्रेमीको ममतारहित बनकर अपने कर्तव्यकी
 परीक्षा कर लेनी चाहिये और ऐसे सहज ही आ पड़नेवाले अन्य
 कर्तव्योकी उपेक्षा नहीं करनी चाहिये। ”

“ प्रिय लक्ष्मण, इस पक्षीके लिए मेरा मन प्रेमसे भर जाता
 है। नीच माने जानेवाले इस पक्षीने मानवताका कितना सुन्दर उदाहरण
 हमारे सामने रखा है। इसने न तो अपने भाई-बन्धुओकी चिन्ता की और
 न मौतकी परवाह की। धन्य है गृध्रराज जटायु। ” कहते कहते राम
 उर्मिल हो गये। “ और सच कहू तो मेरे मनमें इस जटायुके प्रति पितृ-
 भाव स्फुरित होता है। ” यह कहकर रामने जटायुको प्रेमसे चूम लिया।

जटायु अब आखिरी हिचकिया ले रहा था। उसका कंठ रुध
 रहा था। मुह सूख रहा था। उसका अन्त करण तो शान्त था, परन्तु
 देहके भीतर जीवन और मृत्युका संघर्ष छिड़ गया था।

राम अत्यन्त प्रेमभावसे जटायुकी सेवा कर रहे थे। लक्ष्मण
 इस अद्भुत दृश्यको देखते हुए कल्पनातीत संवेदनाका अनुभव करते
 करते इस सेवामें अपनी आत्मा उडेल रहे थे।

इतनेमें ‘ हे राम ’ कहते हुए जटायुने अपने प्राण छोड़ दिये।
 लक्ष्मणने चिता तैयार की और रामने अपने हाथसे जटायुका अग्नि-
 संस्कार किया। पिण्डदानकी विधि भी पूरी की।

अन्त्येष्टि-संस्कार समाप्त करनेके बाद रामने स्नान किया।
 फिर थोड़ी दूर पर एक वृक्षकी छायामें राम और लक्ष्मणने बैठकर
 शान्तिमन्त्रका जप किया। प्रार्थनाके बाद रामकी वाग्धारा बहने लगी :

हम सब एक ही ईश्वरीय तत्त्व का विभिन्न भाग हैं। गारे दारुणाचार्य ने भी यही बात कह दी है। यह ईश्वरीय तत्त्व है। इस दृष्टि से ईश्वर ही सबका पिता अपना पितामह है ऐसा कहा जाता है। परन्तु यही भी गलत नहीं है। परन्तु यही भी सत्य है। भक्त उक्त भीष निवृत्त स्वभाव का भी है। लम्बे समय तक बाद में उक्त गिद्धा दंगरे ही उक्त श्री १ भाग पितृ है गया था। यद्यपि यहाँ सबका भाग था ही परन्तु भाग ही किसी अर्थ और अगम्य रीति से उक्त स्वामी की आरति में रहा था जहाँ वह गिद्ध घायल शरीर पड़ा था। उक्त भाग पदार्थ कर मरत स्नान उसका प्रति अधिकारिक करने लगा। अन्तर्गत विराट् करनवाला प्रत्यक्ष मनस्वी मुक्त आत्मीय जन जसा ही लगाता है। म जहाँ भी अन्तर्गत देवता है वहाँ भाग उसका विराट् करनमें उक्त स्नानमें एक प्रकाश का स्वाभाविक आनन्द आता है। प्रिय लक्ष्मण गुरुदेव जटापुत्र प्रति तो अन्त अन्तमें एका भक्त भक्त मनमें पड़ा होते लगा माना वह स्वयं महाराज दंगरे है। पितृजीव अन्तिम समयमें तो म उनके पास नहीं रहे सब परन्तु जटापुत्री अन्तिम विषा अपन हाथस करके मुझे पूरा मनोप हो गया।

लम्बे समय रामचन्द्रजीकी यह बाणा सुनकर प्रसन्न हो गये। उक्त इस बातका विश्वास है गया कि पञ्चमन्त्रभूताने चरित्ति पितृजीव प्रेम सम्बन्ध बंधन औरकारिक है। सच्चा प्रेम सम्बन्ध ही सबका और शुद्ध प्रेम का पारस्परिक निस्वार्थ आकर्षण ही अपन-आप निमाण होता है। इसमें बहुधा आत्मिक मित्रता—प्रकृति द्वारा प्रेरित मिलनका—ही मुख्य भाग होता है।

सुय पश्चिम दिशा में अन्त होन लगा था। आकाश रंग बिरंग चित्र चित्रित कर रहा था। दाना भारी चक गम था। अतः रात उस वृक्ष का नाच ही बितानका उद्धान निश्चय किया और दूध का श्वेत स्निग्ध बादलीका पान करने करते दोनों भाग्य।

कवन्धसे भेट

मवेरे राम-लक्ष्मण दोनो भाई उठे और गौचादि क्रियाओसे निवट-कर आगे वढे। कुछ ही देर बाद एक ऐसा दुर्गम मार्ग आया, जिसने दोनो भाइयोकी प्रगतिको रोक दिया। निगाह इधर-उधर दौड़ाई तो एक जुगुप्सा उपजानेवाला दृश्य दिखाई दिया।

“वडे भैया, इधर देखिये,” कहकर लक्ष्मण दूर ही खडे रहे और एकटक उस प्राणीको देखते रहे। परन्तु राम निर्भयतासे उसके पास जाकर खड़े हो गये।

“हाथ कितने लम्बे हैं! अरे, इसका तो सिर ही नहीं है! यह खाता कैसे होगा?” इतनेमे पेटके भीतरसे उसका मुंह दिखाई दिया। उसकी जाघे भी नहीं दिखाई पडती थी।

“अरे भाई, तुम कौन हो?” रामकी मधुर आवाज सुनते ही धडके सिरेसे और पेटके मध्य भागसे गहरी आवाज निकली: “अहो-भाग्य है मेरा! मैं आपकी प्रतीक्षा ही कर रहा था।” कुछ क्षणके लिए तो लक्ष्मणको लगा कि हमारी शामत आ गई। परन्तु वह कुरूप भटा आदमी साष्टांग प्रणाम करता-हुआ बोला: “मैंने अपनी सुन्दरताका वडा अभिमान किया, उसीका यह परिणाम है। आप मेरे अन्तर्यामी हैं। मुझे अपने चरणोमे लीजिये और पावन कीजिये।”

रामचन्द्रजीके वरद हस्तका स्पर्श होते ही उसकी काया वैसे ही नीरोग और सुन्दर-सुडील बन गई, जैसे पारस-मणिका स्पर्श होते ही लोहा सुवर्ण बन जाता है।

इस मानव-प्राणीका नाम कवच था। उसने अनेक ऋषि-मुनियोको सताया था, अनेक निरपराधियोको पीडा पहुँचाई थी। इस राक्षसी भावनाका अत्यन्त कष्टदायी फल चखकर वह अब अघा चुका था। ‘जैसा करे वैसा भरे’ यह कहावत कवचके वारेमें चरितार्थ सिद्ध हुई थी।

श्यामूनि जानकीनाथने श्या और मंह दानारी उम पर वरा बा।
 हयक आंगुमाग बबधक नत्र छच्छा उड। उमन मगामे आमन्त्रतानि
 गुनारर आग बहा म जानता हू कि एवार्ति रावा जग्ननन
 गीतामानावा अयहरण करव उह एवा ह गया है। उमक पाम अन
 प्रकारकी मिडिया और गरिमा ह। परन्तु निष्पनाह बन्त मनवताह
 माग पर इन सबका मुख्यभाग वह निमताह हाकर करन एवा है।
 परन्तु अति मवत्र वजयन्। अब आप जग उगत पुण्या भा उमन
 सतानवा पुण्या की इगम म निश्चिन रूपम मानता हू कि उनको
 मृत्यु समीप आ गई है। उम गवत्रक निवाग-म्यान दसा निगात्रामे
 रहन ह। उमका ठीक पता ता आपका मुषाव हा दे सकगा।

आचयधरित रामन बबधकी य बाने प्रमसा मुती। फिर पूछा
 'यह मुषाव कौन है? वह कहा रहता है?'

मगवन् मुषीव भी आपका जग समथ मित्रता भूगा है। उम
 यह भाई बालिने उम अपन राज्यम निराज लिया है और उसका पत्न
 पर अपना अधिकार जमा लिया है।

छाटे भाइकी पत्नी पर आपका कुदृष्ट। 'लक्ष्मणका

क्या हो सकता है ? ” इतना कहते-कहते कवधका हृदय भावाभिभूत हो गया ।

उसे कुछ याद आया हो, इस तरह वह उठा और एक कमडलमें मीठा जल लाकर राम-लक्ष्मणके सामने रखते हुए बोला “ मैं मानता हूँ कि अब आप आगे बढ़नेके लिए अवीर हो चले हैं । परन्तु मैं आपका थोड़ा समय और लूँगा । ” इतना कहकर उसने चुटकी वजाकर सकेत बताया . “ यहासे पश्चिममें थोड़ी दूर चलकर एक वन शुरू होगा । उस वनमें जामुन, प्रियाल, कटहल, अशोक और आमके सुन्दर वृक्ष हैं । उस वनके समाप्त होते ही दूसरा वन शुरू होगा । वहाके वृक्षोके फल इतने मीठे और सुगन्धित हैं कि उन्हें खाते खाते हमारा मन कभी तृप्त ही नहीं होता । आप दोनो वन्धु वहा रुककर उन्ही फलोका भोजन कीजिये ।

“ इन दोनो वनोको पार करनेके बाद छोटी-बड़ी पहाडिया शुरू होगी । पहाडिया पार करते हुए बीचमें वन-प्रदेश भी आयेगे । इन सबको पार करते करते अतमें आप पपा सरोवरके पास पहुँच जायेगे ।

“ अहा, पपा सरोवरका वर्णन मैं किन शब्दोमें करूँ ? पपाके मोहक कमलो, उसके सुन्दर तटो और उसके जलमें सदा खेलते हंसो, सारसो आदि विश्वके उत्तम पक्षियोका वर्णन प्रत्यक्ष देखे बिना कभी समझमें नहीं आ सकता । इस-पपा सरोवरके पास ही एक सुन्दर गुफा है । और उसीके पास शीतल जलसे भरे और कद-मूल-फलसे समृद्ध हरेभरे प्रदेश हैं ।

“ इसी पपाके पश्चिमी तट पर महामुनि मतगका आश्रम है । उन मतग ऋषिके नाम पर ही उस वनका नाम मतग-वन पडा है । यद्यपि आज उस वनमें मतग मुनि नहीं हैं, न उनके कोई शिष्य ही वहा है, परन्तु तपस्यामें उन सबसे आगे बढ़ जाय ऐसी एक भीलनी वहा रहती है । उसका नाम शवरी है । वह मतग ऋषिकी महाशिष्या है । उस भक्तहृदया नारीका परिचय तो आपको उसका आचरण ही करायेगा । उसका वर्णन करनेके लिए मेरे पास शब्द ही नहीं हैं । उस तपस्विनीके स्वागत और अतिथि-सत्कारको देखना मेरे जैसेके लिए तो परम सौभाग्य-

की बात है। आप उसका अनुपम शस्त्रार ग्रहण करके जरा आगे बढ़ेंगे कि तुरन्त आपको ऋष्यमूक पवन लिपार्ई देगा। यही आपका भारी परम मित्र सुप्रीवस आपकी भेंट हागी। इनका कहनक बात करन भाव मग्न हो गया। कुछ क्षण बाद जाग्रत हान पर वह उठा और उमन दाना भ्राताआसे उठनेकी प्रायना की। जस तीना साथ साथ चलन लग। वनन आरभ होने तकका माग निखारर करयन दाना भाइयाना गद्गन हासर पिदा किया और वापस लौटा।

दाना भाई तपस्विनी गवरी बसी हागी इगरी बल्यना करन करते आगे बडने लगे।

३२

रामभक्त शायरी

कोई स्त्री बड़ सवरे पूव निगाकी जोर देख रही थी। उसकी जानामें, उससे राम राममें अधीरतान अपना वास कर लिया मालूम हुना था। कभी वह पाकोक अगूठा पर खड़ी होकर दूर दूर तक लम्बी निगाह दौडाती थी तो कभी पद पर चढ़कर एकटक चारा जार दखन लगती थी। उस स्त्रीका नाम था गवरी।

शायरी सवरे बड़ी जल्दी उठती थी। आथम तथा आमपासकी कितनी ही घरतीको झाड़-बुहारकर साफ-सुथरी बना देती थी। उसकी सफाई जनायी थी। दो बार बाटू लगानके बाद भी उसे सन्ताप न हुना इसलिए वह कपड़ेके टुकडामे धूल उडाकर जमीनका बिल्कुल स्वच्छ कर देती और फिर पानीना छिडकाव कर देती था। पानीके छिडकावसे सारी घरती अत्यन्त रमणीय और सुगन्धित बन जाता थी।

गीच-स्नानसे निबटनके बाद गवरी तुरन्त फल बीन-बीनकर एकत्र करती और इस बातकी पूरी जाच कर लेती थी कि एव भी फल सट्टा या सडा-गला न हा। इसके बाद वह फिर पेड पर चढ जाना और

रामका उमा प्रत्यक्ष कभी देना भी नहीं था। बसल उनका वारमें गुना हा था। फिर भा रामके प्रति इनकी भक्ति उगमें क्या उत्पन्न हुई? उस भीलनीको सम्भरणकी यह गिछा किसने दी होगी? वह मतलब कपिजी एवमात्र स्मृतात्र थी। इमातिग ता उसमें यह सहज जान जाग्रत न हुआ हा? रामका हृदय विवमय था। उस युगक व परम-गुरुय था। व निमल और गद प्रमवात् था और उनका समभाव अद्वितीय था। इसी कारणम गवरीमें यह आचरण उत्पन्न हुआ होगा। जगत मनुष्याम स्वभावक भरा है फिर भी प्रमीजन प्रमाका कहा और कस पहचानकर पकड लन ह उसका यह एक उत्तम उदाहरण है।

गवरीके वासाच्छवासमें रमा हुई इस भावनाका रामक अन्तर पर क्या असर हुआ? चलते चलन राम लक्ष्मणम बहुत लगे भाई लक्ष्मण तुमसे क्या कहू? उस कवधन अजस नपम्बिनी गवरीका नाम लिया, तबसे निरंतर मर मनमें उसका स्मरण बना रहता है। जानका क बिरहकी वेदना जमे गवरीके स्मरणमें विलीन हो जाती ह। अहा शबरी, गवरी! गवरी कसा माठा नाम है? कहत कहत राम एकाएक कुछ क्षणाक लिए लड हा गय और उनके तत्र मिच गय। फिरसे लले तब उनमें से प्रमका प्रवाह सरता दिखाई दिया और लक्ष्मणको भरल मिलापका दश्य माल हो जाया। भरल और राम यद्यपि एक ही पिताक पुत्र था एक ही रघुकुलके राज ये साथ ही दोनाका पालन पापण हुआ था दोना साथ साथ खल-कूदे था फिर भी दोनाका प्रेम केवल स्वर मम्बाधके कारण ही नहीं था। दोनाके बीचका स्नह भौतिक जगतस पर कितना अगम्य आचरणसे उत्पन्न हुआ था।

सस्त पुरपान सत्य ही कहा है कि सत्यमकी सगाईमें जाति पाति वाग-वण ठिग देग अथवा वाक जम कोई भी कारण मुख्य नहा होत। उसमें मुख्य कारण हाते ह सदगुण। जत एकाध बारक मिलन या निरीक्षणसे ही अथवा सुनी हुई बातो पर स ही ऐसी मजबूत प्रमगाठ बघ जाती है कि वह दोना पक्षोको परम्पर जीवन भर जो रहता है। कभी कभी तो इस प्रमक बल पर जनक जमा

तक लगातार एक-दूसरेका योग किसी न किसी तरह हो ही जाता है। जैसे आत्मा अनन्त है, वैसे ही प्रेमका तत्त्वज्ञान भी अनन्त है। उसके कोई निश्चित विधि-विधान नहीं है। प्रेम स्वयम्भू है। वह बिना किसी आधारके फूलता-फलता है। प्रेमका तार बहुत पतला होता है, परन्तु वह कभी टूटता नहीं। वह अटूट होता है। इसीलिए एक भक्तकविने गाया है - 'सबसे ऊँची प्रेम सगाई।' इसके सिवा, यह कथन भी उतना ही सत्य है कि प्रेमपन्थ अग्निकी ज्वाला है। सामान्य भूमिकावाले पामर जीवोंकी यह शक्ति नहीं कि वे वहाँ पहुँचकर उसमें लीन हो सकें। प्रेममें आत्म-समर्पण अथवा आत्म-विलोपनके सिवा दूसरी कोई ध्वनि ही नहीं है। उसमें देनेका ही मंत्र होता है, लेनेका तो प्रश्न ही नहीं उठता। सर्वस्व निछावर कर देने पर भी प्रेमीको ऐसा लगता है, मानो उसने कुछ दिया ही नहीं है। प्रेमियोंके बीच भक्त और भगवान्, समर्पक और समर्पण स्वीकार करनेवाला — ऐसे भेद भी हम ही करते हैं। वास्तवमें ऐसे भेद भी प्रेममें नहीं होते।

शबरी यदि रामकी धुनमें आनन्द-मग्न थी, तो राम भी शबरीकी कल्पनामें लीन थे। यह सवेदन कैसा तीव्र और आनन्दप्रद था।

आजकी शबरी कुछ अलग ही दिखाई देती थी।

जाको जा पर सत्य सनेहू।

सो तेहि मिलत न कछु सदेहू ॥

इस वाक्य पर शबरीका पूर्ण विश्वास था। आज उसे पूरा भरोसा था कि "मेरा राजा अवश्य आयेगा।" आज निराशा उसे छू भी न सकी। उसके अग-प्रत्यगमें नव चेतनाका संचार हो गया था। उसका बुढ़ापा मानो उसे छोड़कर चला गया था! वह उस ऊँचे वृक्षकी अंतिम शाखा पर सीधी तनकर बैठी बैठी रामके आगमनकी दिशामें ताकती रहती थी। कुछ समय बाद उसने दूरसे दोनो भ्राताओंको आश्रमकी ओर आते देखा। "अहा, मेरे राम आ गये।" इस प्रकार स्वगत बोलते बोलते शबरी अवाक् हो गई। उसका शरीर उसके वगमें न रहा। परन्तु वृक्षने उसे संभाल लिया। कैसी अनुपम थी शबरीकी यह दशा?

स्वस्थ होन पर गवरी नीचे उतरी और अपनी शायदीमें जाकर पत्थरी टाकरीको फिरसे दख आई। बाहर आने ही उसने राम और लक्ष्मणको अपनी ओर आन देखा। और कुछ ही क्षणमें वह तारिखी चित्रवत बन गई।

लक्ष्मण जब हम उस स्थान पर आ पहुँचे तब त्रिगरा वनन कवचन किया था। यह है पत्ता सरावरका पश्चिमी तिनारा। य राम त्रिगर फूल किनन सुगंधित है और मनारम पत्तन लगे हुए य तम्बर कगे सुहावन लगन ह। पसी मन्द मयूर और सुगंधिन बायु वह रसी है। महा देखा यह सिंदरी और मुग गावक दाना स्निहि लखनस एक-दूगरका दगने हुए कने पास पास बठ ह। उपर बनरा महागज त्रिगार्द पडता है और इस बार किलकिलाते और कून फान्त सरणाग गिलहरियो और बानर त्रिगार्द दे रहे ह। वह है पणियर साप और य ह मयूर वृत्। 'रामक प्रत्येक वचनस प्रमामृत झर रहा था। लक्ष्मण भी इस स्थानमें प्रवेश करत ही कोई अभिनव सवन्न अनुभव करन लगे। वातावरण स्वयं ही मतंग कृपिका महिमाका गान कर रहा था। प्राणीमात्रमें जो अलङ्घ्य चतय विलसित होना है उसका सहज दान महा हो रहा था।

गवरीकी आँखें स्थिर हो गई थी। उनमें धीरे धीरे मानियाके समान अधुविन्दु टपक रहे थे। गवरीके रोम रोमसे जा भाव झर रहा था, उस समयनेका लक्ष्मण स्तब्ध भावमें प्रयत्न कर रहे थे। पल पलमें ध्येक हानयाले भक्तके भावावेसोको किन गल्लामें प्रकट किया जाय ?

रामक बिलबुल पास जात ही गवरीका शरीर उनके चरणामें लुप्त गया। पहल तो रामन दोना हाथ जोल्कर उस तपस्विनीको प्रणाम किया और फिर प्रमपूण प्रभुतावाला अपना बरह हस्त उसके सिर पर रखा।

तुरत चतयक प्रवाहमें स्नान करके चतयमय बनी हुई तपस्विनी गवरीन अपने नेत्र रामक मुख-कमल पर स्थिर कर दिय। चारा नशान परस्पर अपनी अपनी भाषामें अगम्य बातें कर ला। कुछ क्षणके लिए तो राम भी अवाक हो र, फिर उनकी बाणी फूटी

“हे तपस्विनी, तुम स्त्री होकर भी यहा अकेली ही रहती हो ? तुम्हारा तन, मन और आत्मा प्रसन्न तो है न ? ”

“अनेक पशु-पक्षियो, जल, वृक्षो, लताओ तथा इस झोपडीके बीच मैं अकेली कहा हूँ ? हा, मेरे रामके प्रत्यक्ष दर्शनके अभावमे मैं अकेली थी, ऐसा कहा जाय तो मैं जरूर अकेली थी। परन्तु आज प्रेमनिधिमे मग्न होकर मैं सचमुच सनाथ हो गई हूँ। परम प्रभु, आपके सामने मैं न तो वृद्धा हूँ और न तपस्विनी हूँ। मैं तो आपकी एक लघुतम बालिका मात्र हूँ। सद्गुणोमे भी प्रेम ही सबका पिता है। आप मुझे ‘तुम’ क्यों कहते हैं ? क्या यह भेदभावकी भाषा नहीं है ? ” शवरीकी ऐसी मीठी मोहक वाणी सुनकर राम मुसकराने लगे।

“शवरी, तू जीती और मैं हारा।” रामका यह वाक्य सुनते ही बाबाल शवरी बोली “प्रेमकी दुनियामे यदि शरीर-भेद या अवस्था-भेद नहीं होते, तो हार-जीतके भेद भी कैसे हो सकते हैं ? ”

प्रेमकी छडीसे रास्ता बताते हुए शवरी दोनो अतिथियोको अपनी झोपडीमे ले गई। प्रक्षालन और जलपानके पश्चात् शवरीने अपने सग्रह किये हुए स्वादिष्ट फल राम-लक्ष्मणके सामने रखे।

“लक्ष्मण, आजके भोजनमे कोई अनोखी मिठास मालूम होती है। ऐसा लगता है कि खाते ही रहे, खाते ही रहे।” दर्भासन पर बैठकर भोजन कर रहे रामके ऐसे उद्गारोका लक्ष्मण समर्थन करते जाते थे। और पास बैठी हुई शवरी अतिथियोको प्रेमसे भोजन करते देखकर ऐसा सन्तोष अनुभव कर रही थी, मानो अमृतके मीठे घूट पी रही हो। उसके नयन दोनो अतिथियोके हाव-भावोके निरीक्षणमे लीन हो गये थे। और उसके कान दोनोकी रसकथाका पान कर रहे थे।

कभी तो वह माताका वात्सल्य बरसाती मालूम होती थी, और कभी नम्र दासी बनकर अतिथि मागे उसके पहले ही उनकी मनचाही वस्तु परोस देती थी।

कहा तो अयोध्याके भव्य राज-प्रासाद और कहा घास-पातसे छाई हुई शवरीकी छोटीसी पर्णकुटी ? फिर, कहा जानकीजीकी प्रेममय परिचर्या और कहा इस तपस्विनीके बने हुए बेर ?

फिर भी आजका दिन और आजका भोजन अनुपम था। दीर्घ कालम प्रतीक्षा करनेवाले विशुद्ध प्रमपूण हृत्प्राप्ता यह अनायास मिलन था। एकको उड़लनका रमपात्र मिला था और दूसरेको धुधातुप्लविका साधन प्राप्त हुआ था। दोनों परम्पर खूब लिया भी और दिया भी।

भोजनके बाद कुछ देर आराम करके अतिथि स्वस्थ हुए और आश्रमवासिनी गवरीसे उन्होंने अपन लिए कुछ काम मांगा। गवरीने उत्साहय उनका यह मान स्वीकार का। तीनों पणकुटीर बाहर आये और चले लगे। चलते चलते बहुत दूर निकल गये। गवरी विभिन्न स्थान उधे दिखाता रही। अतिथियान समुद्रमगम देखा अनेक सरने और नदिया देखी पहाडिया देखी। मतग मुनि और उनके शिष्याक स्मारक देख। एक स्थान पर ताज भी सुनाय हुए तापस-वस्त्र देखकर लक्ष्मण बाल उठे यहा कौन रहता है? अभी अभी य वस्त्र किमने धोये ह।

तपस्विनी उत्तर दे इसके पहले ही राम बोले ये मतग मुनिके धूप हुए वस्त्र ह। सुनारे मनमें प्रश्न उठगा कि कितना धूप और इतनी हवाके होते हुए भी इतन दिना तक य वस्त्र जैसेके वैसे क्या रह सके? भाई यह भी एक विज्ञान है। दुनियामें सब सामान्य माने जानवाक नियमोंमें भी वहां न कहीं अपवादका अवकाश रहता है। सूर्य चंद्रके गजसे नापी जानेवाली काल गणनाका अपेक्षा एत अपवाक-रूप म्यामाका काल गणना कुछ अलग ही हाती है। ससारका जो माया मय या स्वप्नसृष्टि कहा जाता है वह इसी दृष्टिके कहा जाता है।

म जब जब इन वस्त्रोंको देखती ह तब तब मुझे ऐसा लगता है मानो इसी समय मेरे गुरुदेव स्नान करके पधार हा। इस वनमें जो भी प्रेमका प्रभाव है वह मन गुरुवका ही है। मेरा राम जसा अतिथि भी मुम उसी प्रेमके प्रतापसे प्राप्त हुआ है। आज मेरा जीवन पूरी तरह कृपाय हो गया है। गवरीके मुहस य वचन निकलन ही उन वस्त्रा पर धूप और हवाका असर होने लगा। मानो आज तक किसीने सूर्यकी विरणाओ और हवाकी लहराता मतग ऋषिके वस्त्राका स्पष्ट करनस राका नो और अब वे मुक्त कर दिय गय हो।

“वन, प्रभु ! मेरा कार्य पूरा हो गया । अब मुझे आज्ञा दीजिये । मेरे गुरुदेवके पास जानेकी मुझे आज्ञा दीजिये ।” कहते कहते श्वरी निर्जीव होकर गिर पड़ी ।

अन्त ममयमे भी श्वरीके शरीरको रामके हाथोका स्पर्श मिला । कैसा अहोभाग्य था उस भीलनीका ! श्वरीके शरीरमे से ही अग्नि प्रदीप्त हुई और उस अग्निमे परिशुद्ध बना उसका पवित्र आत्मतेज अन्तरिक्षकी ओर प्रयाण कर गया । रामके मुहसे यह उद्गार निकल पड़ा . “धन्य है प्रेमपुज, तुझे धन्य है !”

लक्ष्मण तो आश्चर्यचकित होकर यह सब देखते ही रहे । चरित्रके जादूसे बढ़कर अन्य किस चमत्कारका जादू हो सकता है ? वे मन ही मन कहने लगे . “प्रेमकी शक्ति विश्वके प्रचलित नियमोको बदल देती है । प्रेमका विज्ञान जगतमे अनेक चमत्कारोका सर्जन करता है ।”

३३

मधुर संवेदन .

श्वरीकी दिनचर्या, उसकी अद्भुत भक्ति आदिका चिन्तन करते करते राम-लक्ष्मण आगे बढ़ रहे थे । चिन्तनमे लगे हुए चिन्तने पावोकी गतिको अत्यन्त मद कर दिया था । समुद्रके समान विशाल सरोवरके तट पर चलते चलते दोनों भाइयोकी प्रत्येक इन्द्रिय अपना उचित भोजन पाकर आनन्द अनुभव कर रही थी । इतनेमे सरोवरसे ही निकला हुआ सरिताके जैसा एक बड़ा झरना आया । दोनों भाई अब उसी मार्ग पर आगे बढ़े । आगे जाने पर एक मनोहर जलाशय मिला । उसे देखकर राम बोल उठे

“प्रिय लक्ष्मण, इसमे स्नान करनेकी इच्छा होती है ।”

रामका यह वचन सुनकर लक्ष्मण भी रुक गये । दोनों भाइयोने विधिपूर्वक स्नान किया । बादमे पास ही एक ऊची जगह पर पड़ी महाशिला पर आकर बैठ गये । वातावरण मधुर और आह्लादक था ।

तोनाका मन प्रसन्न था और चित्त गान था। ऐसे समय राम अपना मनान्यथा पर नियन्त्रण न रख सका।

प्रिय लक्ष्मण मैं आज तुमसे कुछ जतरकी बातें पूछना चाहता हूँ। लक्ष्मणके कंधे पर हाथ रखकर और उन्हें हृदयसे लगाकर पीठ थपथपाते हुए राम बोले।

लक्ष्मणने सिर धुकाकर उत्तर दिया ' हा पिनातुल्य बड़े भया, जहर पूछिय।

लक्ष्मण इस समय पितृभावम जयवा भातृभावसे भी नहीं परन्तु एक धनिष्ठ मित्रके नाते मैं पूछना चाहता हूँ। यद्यपि प्रतिदिनके सतत और अत्यन्त निकट सहवासके कारण तुम मुझसे कोई सचाच नहीं रखते, फिर भी एक कुछ अधिक राजकु प्रश्न पर अधिक स्पष्टतासे मैं तुम्हारे साथ चर्चा करना चाहता हूँ। आगा है तुम किसी सकोचके बिना मेरे प्रश्नका उत्तर दोगे।' इस तरह बोलते बोलते मानो अपने अकल्प्य मवर्तनको हलवा करनेके लिए पूछते हैं। इस प्रकार रामने सीधा प्रश्न किया ' तुम्हें उर्मिला कभी या आती है '

उस प्रश्नका उत्तर देनेमें सचाच हाना स्वाभाविक था। ज्यष्ठ भ्राता यह प्रश्न क्यों पूछते हैं ऐसा शका भी हो सकती थी। परन्तु गुड हृदयवाले लक्ष्मणको तो अपना हृदय उडलनेका अवसर मिल गया। इसलिए दूसरे कोई विचार किये बिना उन्होंने बालना आरम्भ कर लिया बड़ भया सब कहूँ तो उर्मिका स्मृतिको मने जान-बूझकर दबा रखा है। पत्नीका यादका ताजी रखकर १४ वर्ष तक अक्षण्ट श्रद्धा चय-पालनका सकल्य पूरा करना मेरे जम भावनागील युवकके लिए कठिन है। हे महापुरुष जनक-मुताके गाय रहते हुए भी आप दानान जिम तरह अविरत प्रन पालन किया है उस याद करके तो आपकी प्रभुताके सामने अन्न करण पुलकित होकर द्रवित होने लगता है।'

जान-बूझकर पत्नीकी स्मृतिका दवानका माय सहज माय नहीं किन्तु नटमाग है ऐसा कहनका आवश्यकता होने पर भी रामने यह मात्रार बातका रूप पलट लिया कि यह अवसर उपेक्षा नहीं बल्कि

अन्तरकी कथा कहनेका है। कुछ मुसकराकर उन्होंने लक्ष्मणसे पूछा -
“अयोध्या याद आती है या नहीं ?”

“बड़े भैया, अयोध्याकी याद आवे, ऐसी स्थिति आपने रहने ही कहा दी है ? माता सुमित्राने विदाके समय ‘अयोध्याम् अटवी विद्धि’ यह सीख दी, तब तो मन पर इस तरहकी साधना करनेका भारी बोझ मालूम होता था। मनमें विचार उठते थे अटवी (वन) जाने कितनी भयकर होगी और उस भयकरतामें अटवीको अयोध्यारूप बनानेके लिए मुझे न मालूम कितनी कल्पनायें करके मनको मारना पड़ेगा। परन्तु जब प्रत्यक्ष अटवीमें आये और यहा उदारतासे बिखेरी हुई विभुकी विभूतियोंका दर्शन किया, तबसे अयोध्याको तो क्या, मैं आपके स्नेहके बल पर पितृ-वियोगको भी भूल गया हू।”

कुछ क्षण रुककर लक्ष्मण फिर बोले : “बड़े भैया, कुछ दिनोंसे यदि बार बार किसीकी याद आती हो तो वह माता सुमित्राकी आती है। वह सच्ची माता है।” पलभरमे लक्ष्मणकी आखे छलछला उठी। रुधे कण्ठसे भी उन्होंने बोलना जारी रखा “सीतामाताके प्रत्यक्ष वियोगके बाद माता सुमित्राका स्मरण पद पद पर हुआ ही करता है। भैया, माताके बिना सारा जगत सूना सूना लगा करता है। बार-बारकी इस स्मृतिके कारण माता जानकीके अभावमें आपकी सेवामे जो कमी आ गई है, उसे पूरा करनेकी प्रबल इच्छा होते हुए भी मैं आपकी सेवामे बहुत पिछड़ गया हू। भक्त-गिरोमणि शबरी माताका जीवन देखा, तबसे अपनी तुच्छता और अपने इस दोषके कारण मुझे रोना आ जाता है।” लक्ष्मण आगे कुछ न बोल सके। उन्होंने कदाचित् यह भी मान लिया कि उनके आसू देखकर ही रामने उनसे ऐसा प्रश्न पूछा होगा। सब अपनी अपनी मान्यताके मापदंडसे ही दूसरोको मापते हैं। भोले लक्ष्मणको इस बातका पता कैसे चलता कि रामको अपने साथीके दिलको गर्हराईमें छूकर सीता-विरहकी अपनी वेदना कम करनी थी। एक हृदय दूसरे हृदयको छूते छूते करुणा, सघर्ष अथवा दुःख अनुभव करे, तो भी उसमें अवर्णनीय आनन्द उमड़ आता है। इसे कोई गहरा अनुभवी ही समझ सकता है। लक्ष्मणका ज्ञान और भान ऐसा नहीं

था, जा रामजी बराबरी कर सके। परंतु उस समयवे सबदनभय वातावरणका जाह्लाद तो लक्ष्मण अनुभव कर ही रह था। रामको विचारमग्न देखकर लक्ष्मण कुछ देरवे लिए रुक गया फिर कहन लगे

वह भया गवरीको देखकर आप जान-दमन हो गये थे। वह दृश्य मुझे अतिशय नब्ब मालूम हुआ था। परंतु अब हम गवरीक साथ घूमने निकले तब आपकी आँखोंमें आँसू आ गये और आप भावाभिभूत स मात्म हुए। ऐसा क्या? मन पहले कभी भी आपको ऐसी दशामें नहीं देखा था।

लक्ष्मण, तुम्हारी बात बिल्कुल सत्य है। पहल तो मेरे मनमें यह भाव आया कि मैं कितना स्वार्थी हूँ। अपनी प्राणप्रिय सीताके बिना मैं यह सुख भोग रहा हूँ। इस विचारसे अतिशय भव्यतामें भी मुझमें तुच्छताका भाव पैदा हुआ। अतिसुख और अतिदुःखमें निश्चटका स्वजन बाद आये बिना नहीं रहता। परंतु भाई मुझे अपने विययमें तुच्छताका भाव अधिक तो इसलिए अनुभव हुआ कि मैंने सीताको अबला मानकर यह भय मनमें छड़ा कर लिया था कि रावण जैसे रामसके पास रहकर सीता अपने गीलजी अपन सतीत्वका रक्षा कैसे कर सकेगी? स्त्री अबला है वह अकेली कैसे रह सकती है? — ऐसी अनेक बातें मेरे मनमें भरी थीं। इस महावनमें गवरीको अकेली और बलवती देव कर पुष्पके नामे मुझमें थोड़ा जो शक था वह गल गया। मुझ विचार आया कि जानकीके सतीत्व और अबलापनजी मिथ्या चिन्ता करनेवाला मैं कौन होता हूँ? मेरा काय केवल अपन धमका पालन करना है। जानकीका सच्चा रक्षक तो उसके हृदयमें बसा हुआ भगवान ही है। इस विचारसे अपनी कमजारी मुझ अधिक खत्म लगी और मेरा गरीर जलने लगा। मेरी आँखें गीली हो गईं। परन्तु वह स्थिति कुछ ही देर तक रही। मैं जल्दी ही पुन स्वस्थ हो गया।

आजरा मार्गालाप लक्ष्मणको अनुपम मात्म हुआ। जानकी और प्रेमरी गभीर बातोंकी अपना ताज और विरह अनुभवके बाद तुरन्त प्रकट होनेवाली भाषामें कोई अगाध चेतन्य भरा होता है। कहनवाला और सुननवाला दोनों उसमें ओतप्रोत हो जाते हैं।

सूर्य अब डूबनेकी तैयारी कर रहा था। जाते जाते थोड़ा रुक-कर रामकी यह वाणी सुननेका लोभ उसे हो रहा था। कर्तव्य-पालनकी भावना उसे पश्चिम दिशामे खींचकर डुबानेका प्रयत्न कर रही थी। वह उबर गया भी, परन्तु उसकी किरणें बहुत समय तक दिखाई देती रही। आजकी सन्ध्या कोई अनोखी शोभा प्रकट कर रही थी। दोनों नरवीर आज बातें करते करते अघाते ही नहीं थे। आजका रात्रिवास दोनों भ्राताओंने उस महाशिला पर ही दर्भशय्याएँ बिछाकर शांतिपूर्वक किया।

३४

सुग्रीव और हनुमान

ऋष्यमूक पर्वतके शिखर पर एक मडली बैठी थी। उस मडलीके बीचमे एक बुद्धिशाली और प्रेमल पुरुष अपनी आभा फैला रहा था। उसके समीप एक चतुर, वफादार और ज्ञानी मित्र बैठा था। इनका नाम सुग्रीव और हनुमान था। इन दोनोंकी बातें चल रही थी और मडलीके दूसरे साथी मौन धारण करके एकचित्तसे दोनोंकी बातें सुन रहे थे।

“भाई हनुमान, तुम और ये साथी मेरा आश्वासन और मेरी सान्त्वना हो और यह ऋष्यमूक पर्वत मेरा विश्राम-स्थान है। मनुष्य पर चाहे जितनी बड़ी आपत्ति आये, परन्तु यदि इसके साथ आश्वासन और विश्राम-स्थान उसे मिल जाये, तो बड़ीसे बड़ी आपत्ति भी साधारण आपत्तिमे बदल जाती है। मित्र, तुम्हारा ज्ञान और चातुर्य आन्तरिक सुखमे मेरे सहायक होते हैं और यह गिरिवर बाहरी सुखमें मेरा सहायक बनता है। यहा न तो रीछ, बाघ, सिंह या भेड़ियेका त्रास है, और न सर्प-गर्मीका अतिरेक है। हर जातिके मृग कैसा मनोरंजन करते हैं! उस पर कन्द, मूल, फल, अकुर आदि अनुकूल भोजन, स्वच्छ मधुर शीतल जल और रहनेके लिए सुन्दर गुफा। इससे अधिक और क्या चाहिये? केवल एक कमी है, और वह है मेरी ‘रूमा’ (सुग्रीवकी

पत्नी) की। यद्यपि रुमाने प्रति मेरा मोह अब लगभग दूर हो गया है, फिर भी इतनी बात मुझे जरूर खटकती है कि बड़े भाईन छोटे भाईकी पत्नी पर कुदृष्टि डाली और उसे अपने अधिकारमें ले लिया। दुखकी बात तो यह है कि रुमाने भी इस अत्याचारको चुपचाप सह लिया और अब पतिभावसे वह बालिको भजन लगी है। इतना मैं समझता हूँ कि उसने केवल देहका ही सम्बन्ध बालिके साथ जोड़ा है अपना आत्मा उसके हाथ नहीं बेची है। परन्तु रुमाने अब दापाको हम एक ओर रख दें तो भी कायरताका दोष तो उसमें है ही। इसके लिए मैं रुमाकी अपेक्षा उससे पतिव्रतो ही अधिक बड़ा अपराधी मानता हूँ। और उसकी यह कायरता मुझे हजार हजार विच्छुआने डक जैसी वेदना पहुँचाती है।

‘हनुमान बाले’ जिस प्रजामें शठ जन नतृत्व प्राप्त कर लें उस प्रजाका नीच समझना चाहिये। ऐसी प्रजामें यदि अनीतिकी जीत हो तो इसमें आश्चर्य क्या? महापापाके प्रति भी व्यक्ति-दृष्टि नहीं रखना चाहिये, हमें पापी और पापके भन्को कभी न भूलना चाहिये।

‘जिस समाजमें चारा आर अयाय और कायरताका बोलबाला हो उसा समाजमें अनीतिवान मनुष्य नेतृत्व प्राप्त कर सकते हैं। अनीति बान नताअवि बीच पर पुस कर बड़ी हुई प्रजामें ऐसी स्थितीकी आगा कम ही रम्बी जा सकती है जो प्राणाकी बाजी लगाकर भी अपने नीचकी रक्षा करके एकपनि व्रतका पालन करें। फिर भी रुमा सहनका दृश्य यदि आपमें होगा तो उहान बालिको अपना शरीर अर्पण कर ही लिया होगा इसमें शक है। आपको अपनी कायरता इतनी बर्तना पहुँचानी है यह सचमुच हमारे इस प्रश्न और इसकी प्रजाके उद्देश्य के अविष्यका सूचक है।

‘हनुमानका अन्तिम वाक्य सुन ही सुधीरको अवर्णनीय आघात लगा। वह कुछ क्षणों के लिए चिन्तनमें डूब गया। कुछ देर बाद मनको दूसरी सिमी बानमें लगाने के लिए वह खड़े होकर इधर-उधर निगाह घुमाने लग्य। हनुमान और दूसरे माथी दूसरी बातोंमें लग गये। कुछ क्षण मन्त्रि-मन्त्रि बोले हाथ कि सुधीरकी भयमूचक सीनी बजी और

सब साथी खड़े होकर सीटीकी आवाजकी दिशामे दौड़े। देखा तो सुग्रीव एक महाशिलाकी आडमे खड़े थे। उनकी दृष्टि व्याकुल थी। शरीर काप रहा था। नाक पर उगली रखकर सुग्रीवने अपने इन साथियोंको शिलाके पीछे छिप जानेका इशारा किया। सेनापतिकी आज्ञाका सवने पालन किया और सब शिलाके पीछे आकर खड़े हो गये। तब सुग्रीवने जिस दिशामे उगलीसे इशारा किया, उस दिशामे सब एकटक देखने लगे।

कुछ ही देरमे सवने स्पष्ट रूपसे दो मनुष्योंको अपनी ओर आते देखा। देखते ही हनुमानने उनके प्रति एक अगम्य आकर्षण अनुभव किया। उनकी सुन्दर आकृति, स्थिर दृष्टि और तापस-वेश शांत योगियोंकी ज्ञाकी कराता था; जब कि उनकी सुदीर्घ भुजाये और दृढ़ शरीर वीर नरश्रेष्ठोंकी प्रतीति कराते थे। परन्तु उनके कन्धों पर लटकते धनुष-बाणोंने सुग्रीवको भयभीत कर दिया।

इसीलिए उन्होंने भयसूचक सीटी बजाकर अपने साथियोंको बुलाया था। सुग्रीवको कहा पता था कि इन दो नरवीरोमे से एक उनका परम मित्र बनेगा तथा उनकी प्रजाके सकट दूर करेगा। और उनकी ओर आकर्षित होनेवाले हनुमानको भी आज कहा मालूम था कि वही रघुवीर उन्हें अपना अनन्य सेवक बना लेंगे। ऐसे आकस्मिक सम्बन्धोंके पीछे भी प्रकृतिकी कैसी व्यवस्थित योजना होती है।

ऋष्यमूक पर्वतकी तलहटीमे चल रहे राम-लक्ष्मण कवचके बताये हुए मार्ग पर गिरि-गुफाकी ओर धीरे धीरे अग्रसर हो रहे थे। पर्वतके विविध प्रकारके वृक्ष और ऊची-नीची शिलाये दोनों भ्राताओंको कभी छिपा देती थी और कभी प्रकट कर देती थी। अब सुग्रीव अपनेको वशमे न रख सके। उन्होंने हनुमानके कानकी ओर मुह करके कहना आरम्भ किया “हनुमान, तुम्हें अपना मंत्री कहूँ या भाई कहूँ, साथी कहूँ या आधार कहूँ? तुम ही मेरे सब कुछ हो। हमारी ओर आ रहे उन यात्रियों पर मुझे शका हो रही है। कहीं वे बालिके भेजे हुए गुप्तचर तो न हों! दिखनेमे तो बड़े शान्त और गुणवान मालूम होते हैं। परन्तु कौन जाने वेश बदलकर आये हुए बालिके

आत्मी भी हा। और यदि सधमुच गाधु हा ता भी बरा ? आज ता गाधु तपस्वी या योमी सब तपारथि बड़ सागरा ही वग लग ह। ऊच आसना पर बडे हुए त्यागन कम कम शक्तीवान भागन प्राप्त किये ह यद कौन शक्ता है ?

हनुमानजी वाणी अर चलन लगी सुग्रीवजी, आज जा बहू ह यद उपसानीय तो नग है। परन्तु अब हमें सिमीता भी भय रगनजी जतरत नहीं है। इग पुण्यवान परनराज पर बार्द भी पापो पाव रगनजी हिम्मत नहीं कर सक्ता। परन्तु हमन ता अब प्राणारी भा चिन्ता छोड़ दी है। कोई प्राणात अधिच हमस और क्या ल गबंगा ? इगक सिवा मानवमात्र परस विश्वास उठारर सबक प्रति अविश्वास और सन्नेह रलरर जीनकी अपेसा आत्महत्या कर लेता गयाद अच्छा है, और जीना ही हो तो मानव जातिमें निहित माणल्यकी भावनामें थड़ा रलरर जीना चाहिये। सुग्रीवराज, सब बहू तो म दासा मुनिदा मरे हृदयमें तो अकित हो चुकी ह। फिर भी जाग्रत और सावधान रहना लाभायक ही है। आपकी जाना हो तो म पहलेसे मिलकर उनरी थोड़ी परीक्षा कर देखू। मनुष्यकी जाहति, आज अभिनव और वाणी परसे कुछ न कुछ तो उसके मनकी बातका अन्गज लग ही जाता है।

सुग्रीवने उत्तरमें कहा भाई तुम्हारी सभी बातें मुझ अच्छी लगी ह। अपने भय अविश्वास और सदेहरा कारण भी म समझ गया ह। दूसरी तरहम तो मने अपने जीवनकी बाजी लगा ही दी है। परन्तु बालिस बदला लेनकी वृत्ति अभी मिटी नहीं है। इस वृत्तिसे भी मुझ मनसे निकाल फेंकना चाहिये। अयायका सामना या तो स्वय करना चाहिये वना प्रवृत्ति पर निष्ठा रखकर अपनमें यायकी भावना बसानका इतरफा काम करना चाहिये। अन्यायीके प्रति भी बरकी भावना रगनसे निसीका हित नहा टाना। तुम अवश्य जाकर उनस मिलो परन्तु वे हमारे अतिथि और मित्र ह ऐसा भाव रखकर ही विश्वास पुक्क उनसे मिलना।'

प्रसन्न होकर हनुमान उत्साहसे राम-लक्ष्मणकी दिगामें चल पड।

“भूदेव, नमस्कार।” इतना वाक्य श्रीरामके मुहसे निकले उसके पहले ही एक विशाल भालवाला युवक रामके चरणोमे लोट गया। राम-चन्द्रजीने तुरन्त उसे खडा किया और अपने हृदयसे लगा लिया।

“यह विलकुल अनजान आदमी कौन होगा, जिसे आत्मीय जनके समान रघुनाथ अपना रहे हैं?” इस तरह विचार करते हुए लक्ष्मण कुछ क्षण तो इस पावन दृश्यको देखते ही रहे।

प्रेममूर्ति रामचन्द्रके प्रति लोगोका ऐसा साहजिक प्रेम और श्रद्धा अनेक बार प्रगट होती थी। तुलसीदासजीने ठीक ही कहा है

जा पर जाको सत्य सनेहू।

सो तेहि मिलत न कछु सदेहू॥

कुछ दूर चलकर राम, लक्ष्मण और हनुमान तीनों एक घने वृक्षके नीचे बैठ गये। हृदय तो मिल ही चुके थे, परन्तु एक-दूसरेका पूरा परिचय अब शुद्ध भावसे दिया और लिया जाने लगा।

सबसे पहले हनुमानने स्वयं अपना परिचय देना शुरू किया “मेरा नाम हनुमान है। मेरी पूज्य माताका नाम अजना और पिताका नाम पवन है। इस समय मैं सुग्रीवके एक साथीके रूपमे इस ऋष्यमूक पर्वत पर रहता हू। आपको वडी दूरसे देखकर ही मैं आपके प्रति आकर्षित हो गया था। परन्तु मनमें कुछ शंका थी। आपके पास आते ही मेरी सारी शंका मिट गई है।”

लक्ष्मणजी बीचमे ही बोल उठे “आप आकृतिसे ब्राह्मण और स्वभावसे क्षत्रिय मालूम होते हैं।”

“नही, नही, जन्मसे मैं भले क्षत्रिय होऊ, परन्तु स्वभावसे शूद्र — सेवक — हू।” इस वाक्यसे हनुमानकी नम्रताकी लक्ष्मण पर वडी गहरी छाप पडी। सच पूछा जाय तो हनुमानने कोई शिष्टाचार नहीं ब्रताया था। शूद्र बननेमे और कहलानेमे ही उन्हें घन्यता अनुभव होती थी। इस अवसर पर रामके हृदयमे हनुमानकी छवि इस तरह अंकित हो गई कि रामके साथ हनुमानको भी उसने अमर कर दिया। आज भी राम, लक्ष्मण और जानकीके साथ जय तो हनुमानकी ही बोली जाती है और उस जयसे सारा वातावरण गूँज उठता है।

लक्ष्मणन रामका परिचय सक्षपमें इस प्रकार लिया

ये मेरे ज्येष्ठ भ्राता ह। सती साताके गिरच्छत्र ह। पिताजीके वचन पालनकी व्यक्तिगत साधनाकी और शोक हृदयक राज्यतत्त्वकी तालीम देते लेने ये सावेतका राज्य त्याग कर दडकारणमें रहते थे। वहा सीतामाताका अपहरण हुआ। अब उनकी सोजके लिए कवध और गवरीस समाचार पाकर चलते चलते यहा जा पटुचे ह। इस परिचयमें लक्ष्मणजीका परिचय तो आ ही गया।

हनुमानन चनुराईभरा वाणीमें कहना आरभ किया सुधावकी आप नामसे पहचानत ह और बालिके जयायके बारेमें भी आप भली भांति जानते ह। बालि सामाय मनुष्य नहीं है। वह इतना बडा गूर-बार जीर पराक्रमी है कि रावण जस महाबलीकी भी पलभरमें मसल डाले। तब फिर दूमराकी तो विसात ही क्या? पता नहीं क्या परन्तु गनिका सदुपयोग दुलभ है और महागनिका सदुपयोग तो इससे भी अधिक कठिन है। रावणने अपनी महागनिका अपनी गूर-बीरताका बहुत बडा दुुरुपयोग किया है। सुग्रीव भी समझ ह गुद हृदयवाले ह। हृदयकी गुदता बहुत ऊंचा गुण है। परन्तु मह गुण जब बालकी छाल निका रनेके आग्रह तब बर जाता है जब इसका अतिरक् हो जाता है तब या तो मनुष्य गूयमनस्व हो जाता है या निष्क्रिय कायर बन जाता है। यदि आपका स्नह और सहारा मिलनमे सुग्रीवका यह दाप मिट जाय, तो आप दोनोंकी जोड़ी जगतके कल्याणके लिए अनुपम सिद्ध होगी ऐसा मेरा विश्वास है।

जधीर लक्ष्मण बीचमें ही बोल पडे रावणका कोई पता है? "

रावणके बारेमें इस समय हमें कोई निश्चित ज्ञान नहा है। परन्तु सीताजीके अपहरणके बाद अनुमान यह होता है कि रावण स्वामें ही होना चाहिये। उमके रहनेके अनक स्थान ह। उसके पास बडी बडी सिद्धिया ह। वह केवल भूचर ही नहीं है परन्तु जलचर और नभचर भी है। परन्तु इसकी कोई चिन्ता नहा। सुग्रीवका मन यदि इस प्रश्न पर एवाग्र हो गया तो उसके पास इतना बिगाल और प्राणाकी बाजी लगाकर अपना ध्य सिद्ध करनेवाला समय है कि

पातालसे भी रावणका पता लगा लिया जायगा। आपकी प्रभुताके प्रतापसे यदि वालि वशमें हो जाय, तब तो किसी बातकी कमी ही न रह जाय। पर वालिका हृदय-परिवर्तन असंभव है। यदि उसका हृदय-परिवर्तन संभव हो जाय, तो वह जगतका एक अनोखा चमत्कार कहा जायगा। वालि-पुत्र अगद भी कम बहादुर नहीं है। बहादुरीके साथ उसका चरित्र-बल भी बहुत ऊँचा है, और अपनी बात दूसरोको समझानेकी उसकी शक्ति भी अद्भुत है।” हनुमानकी बातें सुनते सुनते रामचन्द्रजीने पूछा, “भाई हनुमान, रावणके बारेमें तो तुम बहुत कुछ जानते हो। परन्तु सीताके अपहरणका तुम्हें कैसे पता चला?”

“सबसे पहले रावणका विमान इस मार्गसे गया। वह धीरे धीरे उड़ रहा था। बहुत ऊँचाई पर भी नहीं था। सुग्रीव, मैं और दूसरे कुछ साथी गिरि-शिखर पर बैठे थे। इतनेमें एकाएक एक आवाज सुनाई पड़ी। आवाजसे मालूम होता था कि कोई स्त्री विमानमें बैठी है। उसके कुछ वन्य आभूषण भी थोड़े थोड़े अन्तरसे गिरने लगे। उन्हें एकत्र करके हमने सुरक्षित रख दिया है। आपसे मिलनेके वाद मैं तुरन्त समझ गया कि वह स्त्री सीतामाता ही होगी, और कोई नहीं।”

सीताजीके आभूषणोंकी बात सुनते ही सीतापतिको रोमांच हो आया। विरह-वेदनाकी एक लहर मनमें उठकर विलीन हो गई।

दोपहर हो गई थी। तीनों एक साथ उठे और गिरिराजकी वाकी चढ़ाई चढ़ने लगे।

हनुमानके कन्वे पर हाथ रखकर चलनेवाले रघुवीरका चित्र कितना सुन्दर लग रहा था।

सुग्रीवकी मित्रता

राम लक्ष्मण और हनुमानकी पवित्र त्रिवर्णी सुपीर निरागस समाप्त पद्वी गई। अतिथिपात्रा स्वागत करत करत सुग्रीव नमाम हर्षांशु टपरत नग। प्रत्यक्ष मिलनम उनका भ्रम और भय दूर हो गया। राम और सुग्रीवके मिलनत सारे वानावरणमें उदलाम छा गया।

दवन ही देखते एउ बिगाल बुझते नीचे दो मनोहर गण्डुनिया खडा हो गइ। उन बुनियामें तापस वसिष्ठ अनुदप सुविधायें गडी कर दी गइ। आखि एकाध इगारमें ही यह सारा काम सजाम हान देखकर लक्ष्मण प्रसन्न हो गये। थोडा बिग्राम लिया कि गरम जल आ गया। अतिथिपात्रा चकान उतारनवाली सबामें परिधारक लग गय। लक्ष्मण तुरन्त पणवुटियाका निरीक्षण कर आय। जहा जहा उनकी दृष्टि पडुवती वही सुग्रीवक सनिक किमी न किमी बापमें रत दिलाई पडते। सुग्रीव और उनक मुख्य साधियाके सिवा अब काइ रामचन्द्रको घेर कर बग नहा था। सबन एक बार जीभर कर अतिथिपात्रा स्वागत कर लिया दसनामृत पी लिया और उनकी मधुर वाणा सुन ली। इसके बाद सब अपने अपने काममें लग गय। भक्ति पूण हृदय और हायास किय जानवाल इस भ्रमने रामको प्री गदगद कर लिया।

जगलमें भगल करनवा और नव चेननडा सचार करनवाल ऐसे गतिगाली मानव समूह अनेक असभव वानोको सभव बना दें अनेक अभागाका भाग्यवान बना दें तो इसमें आश्चर्यकी काइ बात नही है।

एकाका मनुष्य चाहे जितना महान हो परन्तु एस प्रयत्न मानव समूहके अभावमें उसका समाज-व्यापी काय अधूरा ही रहता है। सुग्रीव पास ऐसा आनारारी समूह था। उसे देखकर हनुमानका यह

वाक्य सहज ही याद आ जाता था - “रामचन्द्र और सुग्रीवकी जोड़ी जगतका कल्याण करनेवाली सिद्ध होगी।”

राम, लक्ष्मण, सुग्रीव और हनुमान अशोक वृक्षके नीचे आ पहुँचे। सब विछाये हुए दर्भसिनो पर बैठ गये। राम और सुग्रीवके आसन इस ढंगसे लगाये गये थे कि दोनों सूर्यके दर्शन कर सकें। कुछ ही देरमें मन्त्रोच्चार करते हुए हनुमानजीने रघुपतिसे विनती की - “आपके पवित्र हाथका दान कीजिये।” तुरन्त रामका लम्बा हाथ आगे आया। सुग्रीवने तो अपना हाथ आगे बढ़ा ही दिया था। इतनेमें एक सेवकने लाकर अग्नि सामने रख दी। राम-सुग्रीवका कर-मिलन हुआ। हनुमानजी इस अवसर पर आनन्दमग्न होकर बोल उठे - “अग्निके समीप, सूर्य-चन्द्रकी साक्षीमें, पाँच पक्षोंके समक्ष पूरी हुई यह मित्रताकी विधि चिरन्तन आदर्शका रूप ग्रहण करे।” इस ध्वनिसे सारा वातावरण गूँज उठा। आसपास खड़े सरल, वफादार मानव-समूहने जयघोष किया। गीत गाये। बाजे बजे। जलचर, स्थलचर और नभचर जीवोंमें आनन्दकी लहर दौड़ गई। ऐसा धन्य पवित्र दृश्य प्रत्यक्ष देखनेका सौभाग्य विरले ही मानवको प्राप्त होता है, परन्तु उसका परोक्ष प्रभाव तो सारे विश्वमें फैल जाता है।

मित्रताकी विधि पूरी होनेके बाद रामने सुग्रीवको हृदयसे लगा लिया। सुग्रीवने आलिंगन तो किया, परन्तु तुरन्त ही वे रामके चरणोंमें गिर पड़े और बोले - “आपने मुझे अपना हृदय-प्रिय मित्र बनाया, इसमें आपकी अपार महत्ता है, परन्तु मैं आपके चरणोंका ही अधिकारी हूँ। यह सच है कि मेरे पास असंख्य सैनिक हैं, परन्तु मैं मस्तक-रहित धड़की तरह हूँ। आपके मिलापसे ही मैं मस्तकवाला महाभागी बना हूँ। सख्या चाहे जितनी विशाल हो, भले वह सद्गुणवाली भी हो, परन्तु यदि वीर्य, धैर्य, उदारता, तप और अनासक्तिका सुमेल न हो तो सब व्यर्थ है।”

“सुग्रीवराज, इस कथनसे तुम्हारी महत्ताका ही परिचय मिलता है। परन्तु सीधी-सादी लोकोक्तिके द्वारा अपनी बात कहूँ, तो मोर अपने पंखोंके कारण ही सुन्दर लगता है।”

हनुमान गन्धर्व होकर बहून लय हे नरपुंगवों आप जाना अपने अपने स्थान पर महान ह। परन्तु रघुवर्ग मणि आप ता मंग पुण्याके भी निर्गोमणि ह। य गूयदेव जग निरन्तर क्रियाशील रहन ह जग ही पट मन्त्रा भी निरन्तर क्रियाशील रहनी चाहिय। पापका समूह जहां सम्भावनाम एवम हा वहां व्यापका ईश्वरका स्वप्न मडा होता है यहा दसाका भी गुयाग प्राप्त हुआ है। अग्नि जिम प्रकार प्रत्यक्ष परमें तब, परिश्रमा और सेवा प्रदान करके मानव-जानिका उज्ज्वल बनाती है उसी प्रकार आप दानाकी मित्रता अपनारम्य जगपदी प्रकाशित करेगी।

‘नरश्रेष्ठो, आदम मित्रतामें लन देनेके व्यापारिक सौ नही हान, उसी तरह केवल बड़ी बड़ी बातें भी नहा होता। उसमें हाती है एक दूसरेके लिए सतत कतप्य पालन करनका भावना। दाना मित्र अपने अपन त्याग और समपणक मून ही माद रखत ह। इन त्यागा और समपणाके योगमें ही मन्त्रा उपभोग और अरण्य मानद प्रगट होता है। मुझे आशा ही नही परन्तु पूरा विश्वास है कि इस मित्रताके फलस्वरूप जानकी और कृपा दाना सतीरत्न हमें वापिस मिले। इसके सिवा परम्परा हरणके महापापका परिणाम बडसे बडे गक्ति सम्पन्न मनुष्यके लिए भी इसी लोरमें भयकर होता है इसका भी मानव जानिको प्रत्यक्ष प्रतीति हो जायगी।

एतनमें भाजनका निमग्न आपा और सब अपने अपने स्थान पर गय। रामक पाठ पाछ लक्ष्मण चल रहे थे। उनका मन विचारोंमें डूबा हुआ था। सीताजीका ठाठला देवर और रामका प्रिय लघुभ्राता इनका गम्भीर क्यों बन गया हागा?

लक्ष्मण सोच रहे थे कि अपरिचित मानव जगत और प्राणी जगतक सम्पन्नमें आनस जो ज्ञान और सुख मित्रता है वह अद्यायके रग महलमें और समीपके स्नहीजना और सगे-सम्बन्धियासे क्या मिल सकता था? परन्तु अन्तमें उनकी समझमें आ गया कि इस सबका मूल गुड पवित्र और विश्वव्यापी प्रेम ही है।

लक्ष्मणकी मातृदृष्टि

गिरि-शिखर पर बनी पर्णकुटियोसे थोड़े अन्तर पर एक सुन्दर वृक्ष था। राम और लक्ष्मण दोनों उसकी सुखद छायामे बैठे थे। वहासे एक ओर गहरी खाई और तलहटी दिखाई देती थी, दूसरी ओर ऋष्यमूक पर चढ़ने और उतरनेके लिए अनेक टेड़ी-मेढी पगडंडिया दिखाई पड़ती थी। कहीं कल-कल नाद करते हुए झरने बहते दिखाई देते थे, तो कहीं कूदते-फादते छलागे भरते हरिण दृष्टिगोचर होते थे। चारो ओर फैली हुई इस प्राकृतिक सम्पदाका दोनों भ्राता मूक निरीक्षण कर रहे थे। देखते देखते रामको सीताका स्मरण हो आया। साथ ही सती सीताका अपहरण करनेवाला रावण भी उन्हें याद हो आया। न्यायकी भावनामे अधिक गहरे उतरते हुए श्रीरामचन्द्र बोल उठे “लक्ष्मण, यह सच है कि सीताका अपहरण हुआ है। यह बात भी सच है कि रावणके सिवा इतना बड़ा खतरा उठानेकी दूसरे किसीकी हिम्मत नहीं है। जगह जगह हमने यह सुना कि इसके लिए रावण ही अपराधी है। परन्तु मुझे लगता है कि मेरे जैसे पुरुषको अपराधीके विरुद्ध सक्रिय कदम उठानेसे पहले इस प्रश्नकी कड़ी टीका और छानबीन कर लेनी चाहिये। ज्ञानीजनोने ठीक ही कहा है कि कोई भी ऐसा सार्वजनिक कदम उठानेसे पहले अधिक विवेकसे काम लेना चाहिये।”

“बड़े भैया, कोई साहस करनेसे पूर्व रुकना और विचार करना चाहिये, यह तो समझमे आता है। परन्तु एक ही बातको बार बार दोहराते रहना क्या उचित है? ऐसे कृत्य करनेवाले लोग क्या साक्षी रखकर इस तरहके काम करते हैं, जिससे हमें प्रत्यक्ष प्रमाण मिल सके? और क्या सारे प्रत्यक्ष प्रमाण सत्य ही होते हैं?”

“भाई, मैं अच्छी तरह जानता हू कि आखोसे देखा हुआ भी झूठा होता है, जब कि तटस्थ वृत्ति रखकर हृदयसे सोचा हुआ अधिक सच्चा होता है। यह भी सच है कि हम विचारोसे चिपटे

रह परन्तु उह आचरणमें न उतार तो उससे अनर्थ बन्ता है। फिर भी इस प्रश्नका स्वयं मेरे साथ भी व्यक्तिगत सम्बन्ध है इस लिए मेरा यह विशेष धम हो जाता है कि मैं अपराधीका यामपूण दण्डित विचार करनेकी अधिक सावधानी रख।

इतनेमें सुग्रीव और जजना-पुत्र हनुमान दोनों जानकीके वय आभूषण लेकर उपस्थित हुए।

रूपानाय उस विमानमें गिरे हुए वय आभूषण ये ह। आप इन्हें पहचान लीजिये।

रामन सारे आभूषण देख तो अवश्य परन्तु एकको भी पहचान न सके। कितने आश्चर्यकी बात थी। वर्यो साथ रहनेके बावजूद और अधिकतर दिन रात एकसाथ रहनेके बावजूद परम विचक्षण रघुपति सीताजीके आभूषणोंको पहचान न सके। कस पहचानें? वे केवल वेगस ही तापस महा थे परन्तु बत्तिस भी तापस थे। तापसी वृत्तिमें आनप्रान तपस्वी थे। यह काल अपनी पत्नाक अग प्रत्यगोको एकाध बार भी एकटक देखनवा काल नहीं था। यह तो अपनी पत्नीके साथ रहते हुए भी जिविकारी भावोंकी प्रबल साधना करनेवा विरल अवसर था। और राम इस साधनामें अभी तक सदा विजया ही सिद्ध हुए थे।

रामने लम्भणको इंगारेमें कहा य आभूषण किसके ह? पहचान लो। लम्भणने हार हाथमें लिया परन्तु पहचान न सके वक्ष्य देखे परन्तु उन्हें भी पहचान न सके। अन्तमें उन्होंने सामरे लम्बा और एकत्र बोल उठ बट भया न तो मैं सीतामाताके हारका पहचानता हू न उनका वक्ष्यको। परन्तु उनकी क्षात्रराको मन पचान लिया। मैं रोज प्रातःकाल सीतामाताके चरणोंमें प्रणाम करता था इसीलिए उनकी भावराको मैं पहचान गया।

हनुमान और सुग्रीव दोनों यह अनोखा दृश्य देखने ही रह। नरिन्द्र प्रह्लादारी हनुमानक व्रत नियमोंको इस दृश्यसे बहुत बड़ा प्रामाण्य मिला। विभीक अग प्रयग कभी दय ही न पाय यह संभव नही था मरना। परन्तु विषय-वृद्धिसे भावनासे दखे जानेवाले अग प्रयग नया माना-पुत्र भावम अथवा भ्राता भगिनी भावम देख जाने

वाले अग-प्रत्यगोमे आकाश-पातालका अन्तर होता है। इस घटनासे एक अत्यन्त सहज पाठ सीखना चाहिये। हमेशा साथ रहनेके वावजूद मनुष्य ऐसी कितनी ही बातोंसे अनजान रह सकते हैं। यह तो दृष्टि दृष्टिका भेद है। हमारा मन जिसकी ओर न हो वह व्यक्ति या वस्तु बार बार हमारे सामने आये तो भी अथवा उसके साथ रात-दिन रहने पर भी हमें उसका खयाल नहीं रहता।

इस्लामी सस्कृतिके इतिहासमें मुस्लिम सन्त महात्मा हवीवकी एक कथा आती है। वे अपने साथ रहनेवाली एक सेविकाको बारह वर्षके बाद भी पहचान नहीं पाते थे। वे नामसे उसे जानते थे, परन्तु मुहसे उसे पहचान नहीं सकते थे। घूघट निकालना, बड़े-बूढोका अदब करना, घरमें जानेके पहले खासना-खखारना — ऐसी कितनी ही प्रथाये उच्च माने जानेवाले समाजोंमें प्रचलित होती हैं। परन्तु निष्कुलानन्दजी महाराजके कथनानुसार मनुष्यके मनमें प्रबल विकार भरे हो, तब अगोको परस्पर छिपानेका प्रयत्न करने पर भी उन्हें देख लेना असम्भव नहीं होता। इसका अर्थ यह नहीं है कि समाजमें कोई नियम ही नहीं होने चाहिये। नियमोंकी मर्यादा तो होनी ही चाहिये, परन्तु उनकी आत्माका पालन मुख्य रूपसे होना चाहिये। आत्माका पालन भलीभाँति हो तो ही इस बातका विवेक करना आयेगा कि मर्यादा कहा तक पाली जाय और कहा तक न पाली जाय।

इस अवसर पर लक्ष्मणकी मातृभावपूर्ण सीताभक्तिकी भी सब पर सुन्दर छाप पड़ी। रामचन्द्रजीको जिसकी खोज करनी थी, वह वस्तु उन्हें मिल गई।

रामको अब इस बातका पूर्ण विश्वास हो गया कि रावणने ही जनक-सुताका अपहरण किया है। अपराधी कौन है, यह पता लगानेका काम — जो न्यायका मुख्य अंग है — आसानीसे पूरा हो गया। लक्ष्मण और हनुमान मानो आदर्श वकील बन गये, क्योंकि उन्हींके कारण रामचन्द्र इस घटनाके सत्यको प्राप्त कर सके। सत्यप्राप्तिका मुख्य साधन आन्तरिक पवित्रता है, परन्तु सत्यलक्षी तर्क उसकी प्राप्तिको निश्चित बना देते हैं।

देखो सुग्रीव तुम्हारे गरीरमें अपार चेतना गति नरी हुई है। परन्तु उस पर कुछ भयका आवरण चढ़ गया है। यह आवरण तुम्हें उतार फेंकना होगा। एक रहस्यकी बात भी मैं तुमसे कह दूँ। अपराधा चाहे जितनी प्रचण्ड शक्ति रखता हो परन्तु जिस समय वह अपराध करता है उस समय उस पर गतानकी सवारी आता है। उसकी सच्ची गति नष्ट हो जाती है। बाहरस वह चाह जितनी धाव धमकी दिखाता हो, परन्तु उसमें सच्चा पानी या सच्चा तेज नहीं रहता। अयायका प्रतिहार करनेके लिए जब कोई निःशस्त्र और अकेला चेतनावान देहधारी भी सच्चे हृदयसे निभय वनजर अयायीका चुनौती देता है तब सारा ब्रह्माण्ड काप उठता है ता बालि भला किस गिनतीमें है? भले आज ही तुममें यह उत्साह और यह साहस पदा न हो और संभव है कि चुनौती देनेका काम स्थूल दृष्टिसे तुम भी हारो, परन्तु तुम्हारी यह पराजय मेरी दृष्टिमें तुम्हारी सच्चा विजय होगा क्योंकि इसमें तुम्हारा आत्म बिक्रम बढ़गा। इतना ही नहीं यह काय यदि जगतके इतिहासके पन्ना पर चढ़ गया तो उससे किनने ही क्षोभित और अयाम-पीडितोंमें प्राणोका संचार होगा। बड़ीसे बड़े महासत्तावाले अयामका सामना करनेके लिए अकेला मानव भी अयायीका चुनौती देनेके लिए तैयार होगा। मुझे तुम्हें अपना पराधीन या अकम्प्य भक्त नहीं बनाना है, परन्तु मेरा दंड गुणानुसारी और स्वतंत्र साधी और भिन्न बनाना है।

अब सुग्रीवके मनमें अभयका प्रवेश हुआ और उनकी सुप्त चेतना जाग उठी। यह देखकर हनुमानके हृषिक और लम्पणक आश्चर्यका पार न रहा।

*

गय्या पर करवटें बदलते बदलते सुग्रीवन बड़ी कठिनाईमें रात बिताई। सोनके लिए उठोने अनेक प्रयत्न किये परन्तु सब निष्फल गये। एक विचार उनके मनमें यह आता कि बालि मेरा बड़ा भाई है मरगूर है उसके सामन जाकर उस चुनौती कसे दी जा सकती है? दूसरा विचार यह आता कि यह रामकी आना है, और रामकी

आज्ञा कैसे तोड़ी जा सकती है? इन दो विचारोने सुग्रीवकी नीद हराम कर दी। उष काल हुआ, पौ फटी, अरुणोदय होने लगा। सूर्यके प्रकाशके साथ साथ सुग्रीवमे शक्तिका संचार होने लगा। उन्होंने अपनी समूची हिम्मत इकट्ठी की और शौच-स्नान आदिसे निवटनेके पश्चात् वालि-नगरके महाद्वारकी दिशामे प्रयाण किया।

रामकी शुभेच्छाये तो उनके साथ थी ही। परन्तु सुग्रीवके अन्तर-मे शुभेच्छाओकी अपेक्षा रामश्रद्धाका बल ही अधिक था। परन्तु यह श्रद्धा काचनके समान शुद्ध नहीं थी, उस श्रद्धा पर चमत्कारका आवरण चढ़ा हुआ था। उनके दौड़नेमें श्रद्धाकी अपेक्षा चमत्कारकी मात्रा अधिक थी। उन्होंने यह मान लिया था कि रामने मुझे अकेला जानेके लिए कहा है, अतः कोई चमत्कार अवश्य होनेवाला है। नगरके मुख्य द्वार पर जाकर सुग्रीवने तुमुल नाद करना आरम्भ किया। उनकी किल-कारियोंने सारे नगरमे खलबली मचा दी। वालिको सूचना की गई कि सुग्रीवराज चुनौती दे रहे हैं। वह आगवबूला हो गया। क्रोधसे उसके अग-प्रत्यग जलने लगे। वह अपनी गदा लेकर एकदम खड़ा हो गया और दूसरे हाथकी मुट्ठी बाधकर उसने धरती पर अपने पाव पछाड़े। आसपासकी धरती हिल उठी। तारा तुरन्त अन्त पुरसे दौड़ी आई और पतिके पैर पकड़कर उसे रोकने लगी।

“स्वामी, आप साहस न करे। सुग्रीव ऋष्यमूक पर्वत छोड़कर नीचे आनेकी कभी हिम्मत नहीं कर सकता; उसके इस कार्यके पीछे अवश्य कोई बड़ी शक्ति और बड़ा सहारा होना चाहिये। इसके सिवा, न्याय भी उसके पक्षमे है। आपने बड़े भाईके नाते अपना धर्म तो भुलाया ही है, परन्तु साथमे मानवताकी भी हत्या की है। पशुको भी लज्जित कर दे ऐसा कुकृत्य आपने किया है। मुझे क्षमा कीजिये, परन्तु आपकी अर्धांगिनीके नाते आपसे यह सब कहना मेरा कर्तव्य है, इसीलिए मैं कह रही हूँ। मेरी यह हार्दिक प्रार्थना है कि आप मुझे अवला या मूर्ख मानकर मेरे वचनोको न ठुकराये।”

इन वचन-वाणोने वालिके हृदयमे गहरी चोट की। कुछ क्षणके लिए तो वह स्तब्ध हो गया, चित्रवत् बन गया। परन्तु उसके गर्वने

अधिर समय तब यह स्थिति मची रहती थी। उगत गरिब सीन्धवारी अपनी प्रियाव बचाने प्रयासों लगाता था। ब्रह्म ब्रह्म कर दिया। तागादा आगे बमर उड़ी। वह मोत गरी गरी और धाति भग्न नाता बरत आगे बमर बढ़ा लगा। बालिव पीछे गगर मति भी पतासमें बत पद। मर्यादाव पाग आगे ही उगत गुप्तावरी लज्जारा मुनी अब म अयापता महन मची कर गरुगा। भय सिन्धी ही बड़ी विपत्ति बयो न आर। उगत लो बकटवत लार विमा

१ ॥ है? अर वासर। बालिव इस उघ बाता गुप्तीव मह न मर। वह पीछे हट। अरमरका लाभ उठा कर बालिव एक छत्राव मारी और गुप्तीव बच पर एक जारता मुष्टिवा दहात दिया। गुप्तीव गरीर परत गिगानवा बालिव हाथा एक तत्र मगर बारण तसा मर्रा घाय हो गया कि गरम गरम मन गुप्तीव गरीरग बकव नीप गिरन लगा। अब क्या पूछना? गुप्तीव बालिका मह दगनव ति भी राह न रह। वह नध्यमूक पवनरी आ म बरक भागन लग। रामचन्द्रजा भागमें ही उह मित। परन्तु गुप्ताव गर न रह और पपतगी दिगामें भागते रहे। रामन उनक मनका माय निराल दिया। वे भी गुप्तीव पीछे दोड़। श्रृष्यमूरती तलहतीमें पदुवन पर गुप्तीवका जानमें जान आई और वह तत्र हा गव। रामक चरणामें उहान प्रणाम भी किया। परन्तु उनक मनमें रोष था। उहान रामका उलाहना दना गुन दिया

अपना गरीब मित्रका ऐसा धार अपमान और अयापी द्वारा दिया हुआ उसका तात्र दुख भी आपका नहा सतका। आप चाह तो पलभरम कुछ भी कर सकते ह। मन आपकी महान कमठारी माना था, परन्तु आज देख लिया कि आपमें कोई भी विषय शक्ति नश है। क्या आप दूर सडे सडे तमासेवी तरह यह सब देख रहे थ? रामन गुप्तीवक भाव पर अपना बरद हुनत रखा और उनके भाव पर मन स्पर्तिका छेप करके उहे शात किया। गुप्तीवका मन योग स्वस्थ हुआ तत्र जगवत श्रीरामन इस अवसरकी अपनी नीति स्पष्ट की।

“सुग्रीव, तुम्हे बुरा लगा हो तो क्षमा करना । तुम तो मेरे अभिन्न मित्र हो । इसलिए तुम्हारे सामने खुले मनसे सारी बातें कहने-का उत्साह होता है । चाहे जैसा निश्चित सत्य हो, परन्तु जिसका हम पर पक्का विश्वास न हो उस मनुष्यके सामने सत्यकी स्पष्टता करनेसे कोई लाभ नहीं होता । ऐसे उदाहरणमें तो मूक सत्किया ही समय पाकर अपने आप बोल उठती है । परन्तु मेरे प्रति तुम्हारी प्रबल श्रद्धाको देखकर इस विषयमें स्पष्टता करना मेरा धर्म हो गया है । देखो, पहली बात तो यह है कि चरित्र ही बड़ेसे बड़ा चमत्कार है; मैं मानता हूँ कि प्रत्येक देहधारीमें यह चमत्कार है । मुझमें जो चमत्कार है वही तुममें भी उत्पन्न हो सकता है । इसमें मुख्यतः स्वपुरुषार्थ ही आवश्यक होता है । मा बालकको चलानेके लिए हाथका सहारा भले दे, परन्तु बालकको अपने ही पैरोंसे चलना चाहिये । दूसरे, मैं तुमसे थोड़ी दूर इसीलिए खड़ा था कि जरूरत पड़ने पर तुम्हारी सहायता कर सकूँ । तुमने जिस हिम्मतसे बालिको चुनौती दी, उसी हिम्मतसे तुम्हे उसके सामने खड़ा भी रहना चाहिये था । परन्तु तुम ऐसा न कर सके । कोई चिन्ता नहीं, जो कुछ हुआ अच्छा हुआ । मुझ पर तुम्हारी जो अघश्रद्धा थी वह दूर हो गई, इससे तुम्हारी या मेरी कोई हानि नहीं हुई । मेरे कारण तुम्हारे मनमें साहसका जो थोड़ा भी संचार हुआ, उससे तुम्हे लाभ ही हुआ है । मैं फिर तुम्हे याद दिलाता हूँ मित्र, प्राणोकी और सम्पत्तिकी बलि चढ़ाकर भी नैतिक साहस बढ़ाना सदा वाछनीय है । अलवत्ता, इस नैतिक साहसका लक्ष्य सत्य होना चाहिये । और नैतिक साहसके संचारके बाद जो विजय प्राप्त हो उससे गर्वकी वृद्धि नहीं होनी चाहिये, परन्तु गहरे आत्म-निरीक्षणके साथ प्रेम और नम्रताकी ही वृद्धि होनी चाहिये । ”

रामचन्द्रजीका प्रत्येक शब्द सुग्रीवके हृदयमें गहरा पैठ गया । कैसी हृदयस्पर्शी उनकी वाणी थी ! रघुपतिका एक एक वचन सूत्रके समान था । सुग्रीव गद्गद हो गये । खूब पञ्चात्ताप करते हुए वे बोले “रघुवीर, आप तो दयाके सिन्धु हैं । मूर्खतावश मैंने क्षणभरमें-

आपक साय बिनना बड़ा अयाय कर डाला। जिससे भी भूतिरा भी अपना बालनरी हूँ तब मनुष्य बन जाना होगा मगरा मूत्र कारण अब मरी समझमें आ गया है। सबमुष दास स्वायक आपका मनुष्यकी सद्गुण्डि बन जाता है और दुःखि जार परबती है।

दीनानाय आपकी मित्रतान हृदयक नीतर पटकर गहरा निरी क्षण करनका जो अवसर मुझ लिया है उसके लिए मैं आपका योग्य तब कृणी रहूँगा। मेरे शरीरक राई जिनन छाँ छाँट टाँट कर लिय जाय ता भी अब मैं पीछ नहीं हटूँगा। आपकी दूसरी कान् भी स्थूल सहायता मैं नहीं चाहता। आपका शुभ आशीर्वाद और आपकी प्रेरणा ही मेरे लिए पर्याप्त है।

सुग्रीवकी बाणी भी अब तेज गतिमें चलन लगी। उनका पन्चा सापसे जा पवित्रता उद्भूत हुई उस पवित्रतामें मैं ही यह स्वयम्पन जोग फूट पड़ा था।

रामका यह प्रयोग पूरी तरह सफल हुआ। उनका हृदय पार न रहा। कुछ क्षणके लिए तो मैं भावाभिभूत हो गया। रामका इन दशा का लाभ उठाकर सुग्रीवक अपना सिर रामकी गोममें डाल लिया और रामका पवित्र हाथ उस पर धूमकर सुग्रीवको स्नहस्त पिलान लगा। इसी बीच लक्ष्मण और हनुमान उनकी राज करत करत पास आ पहुँचे। एक पड़की जाड़में खड़े रहकर पहले तो दोनों यह अनुपम दृश्य देखकर कृतार्थता अनुभव की। कुछ क्षण बाद मैं राम और सुग्रीवके पास पहुँच गया। तुरन्त चपल लक्ष्मणन रामका एक हाथ दबाना शुरू किया। सकल द्वारा रामकी आत्मा पाकर हनुमान भी सुग्रीवके दोनों पर दबान लग। रामकी आत्माके कारण हनुमान द्वारा सुग्रीवकी परिचर्या तो दोनों प्रकारसे उचित थी। परन्तु रामकी उप स्थितिमें अपन पाव दबानकी निया अनिवाय न लगनके कारण सुग्रीव सकोचस अकुल रहें थे। इसीलिए वे बार-बार अपन पर साचनका प्रयत्न करके हनुमानसे अपनी सेवा न करनेका अनुरोध कर रहे थे। परन्तु हनुमान क्या छाड़न लग ?

रामके वचन सुग्रीवने हृदयसे सुने थे। अब उनके मनमें थोड़ा भी सन्देह नहीं रह गया था। आज सुग्रीवने प्राणोकी वाजी लगाकर भी आखिरी हिसाब वसूल कर लेने या चुकानेके लिए कमर कस ली थी। उन्हें यह स्पष्ट समझमें आ गया था कि अपनी प्राणप्रिया रूमाको या तो वालिके पजेसे छुड़ाना चाहिये अथवा वालिके साथ युद्ध करके मर मिटना चाहिये। अब न तो सुग्रीवमें कायरता थी और न भातृ-भावका मोह। उनकी ऐसी तैयारी देखकर सुग्रीव-सखा रामचन्द्रजी अत्यन्त प्रसन्न हुए। उन्होंने सुग्रीवके गलेमें फूलमाला पहनाई। माथे पर कुंकुमका तिलक करके और हाथमें गदा लेकर सुग्रीव आगे बढ़े। सुग्रीवके पीछे उनकी सेना चली।

वालिको समय पर इसकी सूचना मिल चुकी थी। वह सुसज्ज होकर नगरके बाहर आया। वही सुग्रीवसे उसकी भेंट हो गई। दोनों वीरोका युद्ध आरंभ हुआ। दोनों ओरके सैनिकोको रोक दिया गया। सुग्रीवने चुनौती दी: "हम दोनों एक-दूसरेसे लड़कर अन्तिम निर्णय कर लेगे। एक भी सैनिक इस युद्धमें अकारण क्यों मरे?" वालिके मनमें जितना वैर और क्रोध था, वह सब वालि निकालने लगा। परन्तु पता नहीं किस कारणसे आज सुग्रीव किसी भी तरह हार नहीं रहे थे। संभव है, रामचन्द्रजीके आश्रयके कारण सुग्रीवमें इस बलका मंचार हुआ हो, अथवा नीति और न्याय उनके पक्षमें थे इसी कारणसे उनमें यह शक्ति पैदा हुई हो। जान पड़ता था कि सुग्रीवने आज मृत्युभयको जीत लिया है। बार बार वालिके भयकर घूसे पड़ते थे, परन्तु आज सुग्रीव उनकी परवाह नहीं करते थे। वालिने नीतिको तो पहलेसे ही एक ओर रख दिया था। अब युद्धके सामान्य नियमोका भी वह उल्लंघन करने लगा। कुछ देर विश्राम करके स्वस्थ होनेकी सुग्रीवकी मांग वालिने स्वीकार तो कर ली, परन्तु उसकी असावधानीका लाभ उठानेके लिए उसने अचानक अपनी गदा उठाई। कुछ ही दूर वृक्षकी आड़में खड़े रामचन्द्रजीसे अब रहा न गया। उन्होंने अपना अमोघ बाण वालिके हृदयमें भोक दिया। वह तुरन्त जमीन पर गिर पड़ा। उसकी गदा भी कहाकी कहा जा गिरी। उसकी छातीसे मानो

रक्तवा सोऽ वह निवला। उगे अपनी मृत्यु बहुत पाग आइ जान पड़ी। उसे अपनी मृत्युसे भी ज्यादा दुःख इस बातका हुआ कि उसकी गंगा निष्फल रही और सुग्रीव बच गया। वह बात उठा 'राज्य सुग्रीवके प्रति आपका इतना बड़ा धन्यताका क्या कारण है? और यदि भुक्त मानवका ही आपका इरादा था तो जान मानकर आकर मृत क्या न मारा? इस प्रकार छिपकर मारना गंधर्वा जैसा महापांडवों को भी नहीं देता। मैं आपका अनिमित्त क्षण तक निष्पक्ष मानता था। परन्तु मरी यह मान्यता खूबी सांगित हुई। इतना कहते कहते बालि मूर्च्छित हो गया। सुग्रीव तुरन्त अपने ज्येष्ठ भ्राताके पास दौड़ गये और उसकी सेवा गुरुपादों पर रत हो गये। रामन भी बालिका मस्तक अपनी गोदमें लेकर उसकी सेवा गुरु कर दी। अन्त पुरमें पता चलन ही तारा और रुमा दोनों शीघ्रती जाइ। दाना औरके सनिक भी परिचर्यामें लग गये। सुदृष्टान मानो सवाधाम बन गया। कसा जनोखा दृश्य था वह। धमपुद्ग बनवाले लाग विराधी पक्ष अधर्मों ह। तो भी व्यक्तिगत कर नहीं रखते। उनका विराध होता है गलत नीति रीतिके खिलाफ न कि व्यक्ति या समूहके खिलाफ। मानवताके मंगल काव्यकी यही महिमा है।

कुछ दूर बात बालि होनमें आया। उसका मन और मस्तिष्क दाना स्वस्थ हुए। उसने आखें खोली और देखा तो उसका मिर रामकी गोदमें रखा हुआ था। उसे थोड़ा सकोच हुआ।

बालिराज तुम जरा भी सकोच न करो। 'बल्कर रामन अपनी बांधारा बहायी पुत्रवधू छोटा भाईकी पत्नी बहन और कुंवारी क्या — य चारों क्रम ससुर जट भाई और समीपके समाज से सुरक्षित रहनी चाहिये। जिससे रक्षण प्राप्त होना चाहिये वही यदि भक्षण करे तो इससे बड़ा भयकर कृत्य दूसरा नहीं हो सकता। तुमने छोटा भाई सुग्रीवकी पत्नी रुमा पर कुदृष्टि डाली तभीसे यह भयकर कृत्य तुमने आरम्भ किया है और इसी कारणसे तुम वधके पात्र बने हो। अब तुम समझ गये न? फिर भी मैं अन्त तक यह मानना रहा कि सुग्रीव स्वयं ही इस विषयमें निणय कर और हम प्रन्नका

निवटारा करे। सुग्रीव पर तुमने पिछली वार जो प्रहार किया और इससे पहले जो प्रहार तुम करते रहे, उन्हें तो मैं सर्वथा मौन रहकर देखता रहा। परन्तु जब तुमने सामान्य युद्ध-नियम भी तोड़नेका प्रयत्न किया, तभी मुझे यह कदम उठाना पड़ा। तुमने मुझे पक्षपाती कहा, यह एक प्रकारसे सच है। सत्य और न्यायका पक्षपाती मैं सदासे रहा हूँ और आगे भी रहूँगा। प्रेमके सामने मैं गुलाम हूँ और रहूँगा।”

वालिको अब अपने अपराधका भान हुआ। उसकी आखोंसे अश्रुधारा बहने लगी। पिताके आँसू पोछते पोछते अगद भी रो पड़ा। लक्ष्मण, सुग्रीव, तारा, रूमा और देखनेवाले सब लोगोके हृदय गद्गद हो गये।

“मुझ जैसे पतितको पावन करनेवाले रामचन्द्र, मैं हृदयसे आपका आभार मानता हूँ। ऐसा लगता है मानो आप मेरे उद्धारके लिए ही अयोध्यासे इतनी दूर चलकर आये हैं। मेरा जीवन तो विगड़ा। परन्तु अन्त समय आपके सान्निध्यमें आया, इसे मैं अपने जीवनका परम सौभाग्य मानता हूँ। दुख इतना ही है कि यह पापी गरीर आपके सत्सगका अधिक समय तक लाभ नहीं उठा सका।” कहते कहते वालिकी आँखें फिर गीली हो गईं। कौन कह सकता है कि महापापीके पास भी कोमल हृदय नहीं होता? विश्ववन्धु राघव अब तटस्थ कैसे रह सकते थे? वे वालिकी फिरसे गीली हुई आँखोंको अपने प्रेमल हाथसे पोछने लगे। कृतज्ञतावश वालि छोटे बालककी तरह फूट-फूटकर रोने लगा। उसने अपना मस्तक रामकी पवित्र गोदमें रख दिया। और वालिके मस्तक पर रामके दाहिने हाथकी हथेली धूमने लगी। अपना वध करनेवाले रामकी गोदमें वालि जैसे महायोद्धाने भी भक्तिसे अपना मस्तक रख दिया इस दृश्यकी प्रशंसा की जाय, या पापपुज वालिके अन्यायोके कारण उसके शरीरको पराजित करके भी अंतिम समयमें उस पर अपने हृदयकी प्रीति बरसानेवाले रामचन्द्रजीके हृदयकी विशालताकी प्रशंसा की जाय?

क्रूर हृदयवाला वालि अब बदल गया था। मृत्युके समय भी हृदय-परिवर्तन हो जाय, यह क्या सौभाग्यकी बात नहीं? ‘जिसका अंत

अच्छा हो उगना सब कुछ अच्छा है यह लोनाबि बालिक परिवारा।
देगना आगामी समयमें आ जायगी। अब उसने एक एक अग्रविष्टिमें
बिन्दन ही पाप-शुद्ध धुन्ध और पुनः लय ध। गवग प्रथम उगन मुषी
यरा बुनाया। मुषीर इग समय कम दूर रह गया ध ? बालि बाल इग
पहल ही मुषीय बोल उठ बह भाई आपकी हस्याका निमित्त म बना
हू। मुझ क्षमा करना, भाई ! मुषीवने इस दण्डाको बालि सत् न गया।
उमन कहा कुछ भूषण मुषीय तुम मरी मृत्यु दुर्भाग्यपूर्ण निमित्त
महा परन्तु सौभाग्यपूर्ण निमित्त बन हा। मर जग पापगुजरी धम गुरपर
रामन भेंट करानबाल मर भाई म बार बार तुम्हारा आभार मानना
हू। तुम मेरे अपराधी नहा हा इसलिय मर क्षमा करनेका प्रान ही नहीं
उठना। बेव अपराधी ही नहीं परन्तु महाअपराधी ता म हू। परन्तु
तुमन क्षमा मागनका अधिनारी भी म कहा रह गया हू ? मुझ क्षमा

वाक्य पूरा करनेस पहले ही बालिका हृदय भर आया,
गला दध गया। उमन अपन वापने हाथसे अपनी आँखें ढर ला।
मुषीवने नम्र भी आ हो गये। रुमा मुषीवने पास ही खड़ी थी।
रामने उस सबेन किया। वह बालिके पास आई कि तुरन्त रामने
आँखा परस बालिका हाथ हटा लिया। रुमाका देखते ही बालिन फिर
लज्जासे अपनी आँखें बंद करनेका प्रयत्न किया। मुषीव और रुमा
दोनान समीप जाकर बालिका हृदयस क्षमा प्रान की। रघुपति बोड

बालि अब तुम्हारा यह महापाप हल्का हो गया। बालिस रहा न
गया। उसन बड़ी कठिनाईसे टूटी पूटी वाणीमें नीचेवे वचन कह जग
वल्लभ राम ! रुमा जीर मुषीवन तो मुझ क्षमा कर दिया। आपन
भी क्षमा कर दिया। आज कभी ससार भी मुझ क्षमा कर देगा। प
र तु यह मेरा पापी हृदय जरूरे दुःख भोगनवे बाल भी मुझ
कम पाति देगा ? इस विकार इस क्षतानवे जालमें

पसकर अपन छोट भाईकी पवित्र स्त्री जीर मरी पुत्री जसी रुमा
पर मन कुण्टिट डाली। जाह अघम बालि। कहत कहते बालिने
अपने हाथकी मुठठी बाधकर अपन कपाल पर घूसा मारनेकी तयारी
की परन्तु राम उसकी मुठठी छडाकर उस सात्वना देने लगे

“भाई वालि, पश्चात्तापकी भी कोई सीमा होती है और होनी ही चाहिये। शोक जैसे मनुष्यको ऊँचा उठाता है, वैसे ही उसे नीचे भी गिरा देता है। अब अंतिम समय है। कुछ ही समयमें अनेक कार्य पूरे कर लेने हैं। जिस शैतानने तुम्हें नीचे गिराया था, वह तुम्हारे भीतरसे पलायन कर चुका है। अब तुममें दैवी सम्पत्तिका उद्भव हुआ है। उसका लाभ तुम उठा लो।”

“मेरे हृदय-स्वामी राम, अब मुझे ताराका स्मरण हो रहा है।”
तुरन्त रोती हुई तारा स्वामीके सामने आ खड़ी हुई।

“सती, महासती! तुम्हारी एक भी सुन्दर सीख पर मैंने कभी ध्यान नहीं दिया। तुम्हारे जैसी पवित्र नारीके पतिके नाते मैं अयोग्य और बेवफा सिद्ध हुआ।” वालि पुनः भावाभिभूत हो गया। परन्तु इस भावावेगमें पाशविकता नहीं, दिव्यता भरी थी। ताराने अपने दोनों हाथ पतिके चरणों पर रखे। तारा चरण-रज ले इसके पहले ही वालिने ताराके चरणोंकी धूल अपने सिर पर रखकर कहा “केवल कहनेके लिए ही नहीं किन्तु सच्चे हृदयसे मैं कहता हूँ कि आजसे तुम मेरी माता बनती हो। पतिके नाते मैंने जिस अधिकारका उपभोग किया, उसका मैं अधिकारी नहीं था। आज मैं तुमसे पुत्रके अधिकारकी याचना करता हूँ।” रामने वालिका हाथ अपने हाथमें लेकर उसके भीतर उठी इस भव्य भावनाका मूक समर्थन किया। वालिने अब अंगदको अपने पास बुलाकर कहा “बेटा, आजसे मैं तुम्हें सुग्रीवके कार्यके लिए राम-चरणोंमें अर्पण करता हूँ। वैसे सच्चा अधिकार तो तुम पर ताराका ही है।” फिर सुग्रीवसे उसने कहा “भाई सुग्रीव, रूमाको तुम पुनः हृदयसे स्वीकार कर लेना।” अन्तमें ताराकी ओर मुड़कर कहा, “तारा, महासती! तुम्हारे इस तथाकथित पतिके पापोंमें तुमने स्वेच्छासे भाग लिया था, अब उन सारे पापोंको धोकर शुद्ध हो जाना। हे माता, पुण्य-पावनी अवा! तुममें यह शक्ति अवश्य है। सुग्रीवके साथ मैंने जो अन्याय किया है, उसका ऋण तुम्हारे सिवा दूसरा कौन चुका सकता है? वस . अब मैं जाता हूँ।” यहाँ वालिने तीन बार ‘राम राम राम’ का उच्चारण किया और प्राण छोड़ दिये।

गवन वालिने महाप्रयाणन। मूर प्रणाम किया। अन्तर निष्काममें
 दाहि गिरिरा दुग्धपाय उमर दुग्धपायन जानकारी प्रतिनिग और
 अन्तमें जात। पावना पापमान — यह मारी कथा प्रसिद्ध है। मर।
 अपमम अपम पतिर पापारा उन्मम रात्रिरा प्रमम कर्मकारी ममे
 गानना १ मित्र पर अत आमुमान उ हें धानरा प्रमम कर्मकारी
 ज्ञा ता पापी गिरिरी अपांगिनी बनी रहकर जगतर आताता। मन्त्र
 चरनकारी तथा अतमें अत बलिपाय गिरिरी भूतारा विवाह कर्म
 यागी तारा जती माताभारी कधी सन्त्रा त्रिम रात्रमें है। उम रात्रमें
 जम लतर लि कौनगा दव लालापिन मरी हागा ?

कर्मचिन् इमात्रि कटा गया है जननी जमभूमिन् मर्गा
 दपि गरीयसी ।

३८

मुषीयका राजमारोहण

मनुष्य जीवित होना है तब तक समाज उमर गेहारा अधिर
 देवता है परन्तु जब उसकी मृत्यु हो जाती है तब समाज उमर
 गुणारी ही अधिर मान करता है। वालिनी मृगु तो मुधर गई मतिता
 उसकी गुणवत्ता खूब लम्बी बली। रामचन्द्रन गनी तारा अमर मुषीय
 और अमर तत्र लमावो आश्वासन देने हुए कर्म

'हमारे भीतिर जीवन इस समाज-सागरमें पानीर बग्यगारी
 तरह है। एक बलबुला दूसरेसे मिलता है और अलग हो जाना है।
 मिलता और अलग होना यह एक निश्चित कर्म है। इमम सीमने
 जसी वस्तु तो निर्लेपता है। यह मिद्धि प्राप्त करनेके लिए ही मानव
 गरीरका विमाण हुआ है। वालिने गरीरके लिए हम न रोयें उसकी
 भूलाके लिए भी दुःखी न हा उसका अन्त सफल हुआ इमीरा स्मरण
 कर और इसा जानमें ओतप्रोत हो जाय। किसी दिन बडमे बडा पापी
 भी पुण्यात्मा बन जाता है और किसी दिन महासत्त भी पितृवर
 सपने गहरे वनमें गिर जाता है। अभिमान और स्वच्छन्ता ऊपर

चढे हुए आदमीको नीचे गिरा देते हैं, और नम्रता तथा हृदयकी शुद्धता गिरे हुए आदमीको ऊपर चढा देती हैं। हम अपनी इन आखोसे जिन निमित्तोको देखते हैं, उन्ही पर सारे दोष थोप देते हैं; अथवा असावधानीसे आचरण करके दैव पर सारा आधार रखते हैं। प्रारब्ध क्या है, शक्ति क्या है, ऐसा क्यों हुआ या होता है—आदि अनेक प्रश्नोके उत्तर हमे बालिके जीवनसे मिल सकते हैं। ये सब बातें जान-मीखकर हम अपने जीवनको सार्थक बनानेका प्रयत्न करें।”

रामचन्द्र जैसे समर्थ पुरुषके इस उपदेश और आचरणसे सबको अमूल्य सीख प्राप्त हुई। बालिकी मृत्युको कई दिन बीत गये। एक शुभ दिन शुभ मुहूर्तमें किष्किन्धाके राजाके नाते धूमधामसे सुग्रीवका राज-तिलक हुआ। अगदको युवराज-पद देनेकी घोषणा की गई। और तारा, रूमा तथा अन्य सब कुटुम्बीजन सुख और शांतिसे रहने लगे।

वह युग ‘राजा कालस्य कारणम्’ का युग था। बालि विगडा इसलिए उसका राज्यतन्त्र भी विगड गया। राज्य-कर्मचारी प्रजाकी सेवा करनेके बदले प्रजाका खून पीते थे। प्रजाके कुछ वर्गोंको थोड़ी सुविधायें देकर, कुछ अश तक उनके अभिमानका पोषण करके और उनका थोड़ा स्वार्थ पूरा करके ये कर्मचारी मनमानी कर सकते थे। प्रजाके इस त्रासके वारेमें सुननेकी न तो बालिको कोई परवाह थी और न भोग-विलासमें रचे-पचे रहनेके कारण क्षणभरकी उसे फुरसत रहती थी। प्रजा भी खुशामदसे जीना सीख गई थी। बहन-बेटियोंकी इज्जत-आवरू जानेका अब उसे दुःख नहीं होता था। इससे शैतानके चेलोको मनचाहा करनेकी आजादी मिल गई थी। राज्यमें बड़ेसे बड़े प्रतिष्ठित व्यक्तिके लिए भी स्वाभिमानसे जीना असंभव हो गया था। ऐसे अन्यायी राज्यतन्त्रके कारण कुछ लोग घरवार छोड़कर दूसरे राज्यमें चले गये और जो लोग वहीं रहे वे इन सारे अन्यायोको सहनेके आदी बन गये। कुछ लोग तो स्वयं अन्याय करनेमें सम्मिलित हो गये। किसी भी तरह जीवित रहनेका ही एकमात्र ध्येय उनके सामने रह गया था। सुग्रीवको इस सड़ी और विगडी हुई रचनाके बीच काम करना था। प्रजाकी मनोदशा ऐसी नहीं थी कि तुरन्त जडमूलसे किये

जानेबाज किसी परिवर्तनको वह सहन कर सके। परन्तु रामचन्द्रक जायमाने तथा हनुमानकी काय-कुसन्ताने इस स्थितिको सुधारनेमें बड़ा नाग लिया। राज्य छोड़कर गये हुए प्रजाजनोंको स्वाभिमानके साथ धीरे धीरे वापिस लाकर पुन अपनी जमभूमिमें बसाया गया। राज्यके अधिकारियाम ने कुछ भ्रष्ट लोगोंका राज्यसे निकाल दिया गया कुछको सुदिया देकर दूसरे घरामें लगा लिया गया कुछको अपना व्यवहार सुधारनेका मौका दिया गया और बाँट जा उसमें काटिक अधिकारी से उह अधिक प्रतिष्ठा प्रदान की गई। प्रजाकी मनोन्मा बलनेमें रामन सम्मनका और विगपन ताराका बहुत सुन्दर उपयोग किया। इसमें नीतिको, सन्तुष्टिको फिरसे प्रतिष्ठा प्राप्त हुई और प्रजाका सो हुई चेतना अगड़ाई लेकर फिरसे जाग उठी। किष्किधाकी प्रजाकी और राजनप्रकी सबसे प्रशंसा होन लगी। यह सारी समझा जब तक पूरी तरह हल नहो तब तक राम किष्किधा नगरीकी सीमा पर बसाके बीच तापस-व्रतिस रह। वहा बैठ बठ व किष्किधाकी सामान्य जनताका तथा राज्यतक कामराजका मागन्तन करत रहे। अर उतना यह पुष्पकाय समाप्त हुआ।

श्रीमश्रुतु भी पूरा हान आई थी। वर्षादि समय पवन पर बिनाने की रामकी इच्छा थी। वादि-वध वादिके परिवारक साथ बधा व्यक्ति मन मन्त्रय सुधीवका राजारोठण राज्यतककी अन्तर उल्लवने सामान्य जनताके गमायकी वजह से अन्तर कन्वे मीड अनुभव — इन सबके अमरता दूर करनेक लिए रामको एकान्तवाम और विलिनकी जाव गराता बाटूम लेनी थी। सम्मानक लिए इनकी विगप आवश्यकता थी। जनता गीत्य दमरर, गवरी जम भक्तका अमृत पीकर तथा वज्रतार मड और विगप स्तहम मिबिन ओवर सम्मनको ओ लाभ हुआ या उपमने गगने कामोरी वज्रय कुछ बमी आ गई थी। जन उपमने हुउ नतीन पावन ओम्ना जगरी था। समक मिया सुधीवकी मिया भी गमरा बापी दूर खना जावयक था। राम यन्नि बहुत पाग वा गने तो या ना मुयाइ निर्बन्त ओर पदु ले जात जयका रामके सम्मानका उपाय हुई मरका भर कारा है एसा मानकर व मूटा

अभिमान करने लगते। ये दोनों वाते हानिकारक थी। वेशक, एकदम रामके दूर चले जानेमें भी खतरा था, परन्तु वह खतरा मोल लेना जरूरी था। अतः सवने अनिच्छा होते हुए भी रामके प्रस्तावको प्रेमसे स्वीकार कर लिया, और किष्किन्धाके अत्यन्त समीप स्थित प्रवर्पण नामक एक छोटेसे पहाड़की गुफामें राम और लक्ष्मण जाकर रहने लगे।

३९

लक्ष्मणकी अकुलाहट

रघुपतिके लिए आजकी रात्रि बहुत लम्बी हो गई थी। उनका मन विचार-मन्यनमें डूब गया। विछौने पर बार-बार करवटे बदलते हुए वे बहुत समय तक पड़े रहे। अन्तमें लक्ष्मण अपनी हलचलसे जाग न जाय इसकी पूरी सावधानी रखकर वे उठ बैठे और विछौना छोड़कर गुफासे बाहर निकले।

अपने स्वामीके साथ एकरूप बने हुए सेवकको भी ऐसी स्थितिमें नींद कैसे आ सकती थी? बड़े भाईको पता चल जाय कि लक्ष्मण भी जागता है तो वे पूछेंगे, इस भयसे अभी तक आखे मीचकर निश्चल पड़े हुए लक्ष्मण भी अब विछौनेसे उठे और धीमी गतिसे बाहर निकल आये।

मध्यरात्रि व्यतीत हो चुकी थी। चन्द्रमा अपना स्निग्ध शीतल प्रकाश फैलाने लगा था। राम एक शिला पर बैठकर चन्द्रमाकी ओर अनिमेष दृष्टिसे देखते हुए विचार-प्रवाहमें वह रहे थे। “रजनी और रजनीनाथका यह सुयोग कितना आह्लादक है। इस गिरिवरकी विविध औषधियाँ कैसी प्रफुल्ल दिखाई देती हैं। आकाशमें विहार करनेवाले पक्षीगण कैसे सुस्थिर बनकर विश्राम ले रहे हैं।” फिर सुग्रीवकी नगरीकी ओर नेत्र घुमाकर बोल उठे। “अहो, मानव-मात्र निद्राकी गोदमें विश्राम ले रहे हैं। परन्तु मेरी सीता? सीते, तुम कहा होगी? क्या कर रही होगी?” मनके इन विचारोंके कारण उनके होठ थोड़े फड़क उठे। जरा पीछे मुड़कर देखा तो लक्ष्मण दिखाई पड़े। राघव

विषकी तरह कड़वी लगती है और इस कारणसे अर्थकी अपेक्षा उसका अनर्थ अधिक होता है। तुम्हारी बात सच है कि सुग्रीवकी सीताकी शोधका अपना वचन पालना चाहिये। परन्तु जिस बातसे हमारा अपना सम्बन्ध हो, उसके बारेमें कर्तव्यका भान करानेमें भी खतरा है। मेरे उद्बोधनसे कही सुग्रीवकी मुझमें भी स्वार्थ-प्रियताकी गंध आने लगे, तो उससे अनेक लोगोके हितको हानि पहुँचेगी। एक प्रकारसे देखा जाय तो मेरे जैसे व्यक्तिमें अपनी बातके सम्बन्धमें स्वार्थ भले प्रवेश न करे, परन्तु अति आग्रहका भय तो रहता ही है। और लक्ष्मण, हमारे हनुमानके विषयमें यदि तुम्हारे मनमें कोई शका हो तो उसे निकाल देना। उसकी भक्तिके लिए मेरे मनमें बड़ा आदर और उसकी कर्तव्य-परायणताके विषयमें पूरा पूरा विश्वास है। हमारे मनकी शका दूर किये बिना और सुग्रीव आदिके मनका समाधान किये बिना यहाँसे चले जाना भी उचित नहीं होगा।”

लक्ष्मण चातकके समान रामरूपी चन्द्रकी वचन-किरणोका आकठ पान करते रहे। कुछ देर बाद दोनों गुफाके भीतर चले गये।

४०

अंधाधुंधी और पश्चात्ताप

आज अरुणोदयके पूर्व ही हनुमानजी सुग्रीवके पास पहुँच गये। सुग्रीवने उनके प्रणामका उत्तर देकर पूछा “क्यों हनुमान, आज तुम्हारे मुख पर उल्लास क्यों नहीं दिखाई देता? और मित्र, आज तुम थोड़े जल्दी भी आ गये हो। ठीक है न?”

हनुमानने सिर हिलाकर हा कहा और तुरन्त चल पड़े। परन्तु सुग्रीवने अपने प्राणप्रिय साथीका हाथ पकड़कर उन्हे रोका और अपने पास बैठकर कहा “हनुमान, तुम्हें मंत्री कहूँ, अभिन्न मित्र कहूँ, हृदय खोलनेके लिए समीपवर्ती द्वार कहूँ या अपना हितेच्छु कहूँ — जो भी कहूँ, परन्तु तुम्हीं मेरे सब कुछ हो। इस अपार ससार-सागरमें मित्रके सिवा दूसरा कौन ऐसी सहायता कर सकता है?”

मुग़ीबजी जिनासाको समझकर हनुमानन भी नि सकाच भावसे कहना आरम्भ किया

मुग़ीबराज, आरम्भमें मैं राजनीतिजी बानें कहूंगा। क्योंकि अब आप मिथिला नगरीके बघानिक राजा बन गये हैं। अब राज्यके गान्वा प्रजाजनके प्राणा और सम्पत्तिका रक्षाकी जिम्मेदारी मुख्यतः आपक सिर है। मनुष्य जगतमें केवल जीवनके लिए ही नहीं जीता, वह सिद्धा अपने खानिर जीता है। मनुष्य किसी वस्तुका संग्रह सेवाके लिए करता है, दूसराके शोषणके लिए नहीं। यह दखनका काम भी मुख्यतः आपका ही है। सार यह कि राजाका लक्ष्यमें रखनेवाली राजनीतिमें धर्मनीतिको अलग नहीं किया जा सकता। सीमाव्यस हमें रामचन्द्रजी जस धर्म धुरधर भाग्यशक्त मिल गये हैं जिनमें आज सापसत्त्व, ब्राह्मणत्व और दास्यत्वका जिवेणी-मगम हो गया है। आप रामके समान चाहें न बन सकें परन्तु रामके जाइसोंका जीवनमें उतारनका प्रामाणिक प्रयत्न तो आपको करते ही रहना चाहिये।

मुत्स्थिर बननके लिए किसी भी राज्यतन्त्र—या सरकार—को आर्थिक और बाह्य दोना प्रकारके बलास लाहा लेना पड़ता है। इसके लिए हमारे इस जिला देगम चार साधन बताये गये हैं। य धर्मस साम दाम दण्ड और भदक नामस पठवाने जाते हैं। सामका अर्थ है आरम्भिकनाके साथ प्रजाकर सम्पन्न सामना। दामका अर्थ है एक और राज्यक कमचागियोंका समुचित बतन दना और दूसरी ओर प्रजाके सामाज्य लागाका भारी न मालूम हा एस थोड और हलके कराम गसन बगाना। दण्डका अर्थ है प्रजाकी हानि पनुबानगाने माग पर आन बन या भूलमे लग हुए लोगको पश्चात्ताप हो एसी परिस्थिति उत्पन्न करना। और भदका अर्थ है इस तरहका प्रयत्न करनेके बाद भी कुछ एने ला प्रजामें रह जाय तो उन्हें समाजमे अलग करके रखना और मुजरनका मौना रना। इनती बान आन्तरिक बलाके बारेमें हुई।

‘बाह्य बलाके सम्बन्धमें सामका अर्थ है मीड आन्तर राष्ट्रीय सम्बन्ध स्थापित करना। दामका अर्थ है अर्थ देगाका शोषण न करना तथा अपन देगाका गायण न होने रना। इस दगाके बीच होनवाले आर्थिक

करार भी कहा जा सकता है। दण्डका अर्थ है जो राष्ट्र हमारे राष्ट्रके वारेमे गलतफहमी रखते हो उनकी गलतफहमी दूर करना। थोड़ेमे, इस बातका ध्यान रखना कि हमारे राष्ट्रके साथ अन्य राष्ट्र आर्थिक अथवा अन्य किसी प्रकारका अन्याय न करे, साथ ही इस बातका भी ध्यान रखना कि हमारा राष्ट्र दूसरे राष्ट्रोंके साथ अन्याय न करे। कही ऐसा अन्याय होता दिखाई पड़े, तो अन्यायसे पीडित राष्ट्रकी सहायता करना। और भेदका अर्थ है सिद्धान्त-भेदके कारण अथवा साधनोंकी अशुद्धिके कारण जिन राष्ट्रोंके साथ हमारे राष्ट्रका मेल न सधे, उन राष्ट्रोंके साथ अपना सम्बन्ध घटा देना। इसका अर्थ यह है कि ऐसे राष्ट्रोंमे उन्ही प्रजाजनोको चुन चुनकर भेजना चाहिये या जानेकी छूट देनी चाहिये, जो अपने राष्ट्रकी शुद्धिकी रक्षा करके वहा सुन्दर प्रभाव डाल सके।

“ इस दृष्टिसे देखा जाय तो कुछ प्रश्नोका हल तो आपके राज्या-रोहणके बाद हो गया है, और आप और मैं दोनों यह बात स्वीकार करेगे कि इस हलका मुख्य श्रेय श्रीरामको है। इन प्रश्नोका तात्कालिक हल तो सामान्यतः हमे मिल गया। परन्तु भविष्यमे क्या होगा? आप मुझे क्षमा करे, परन्तु मुझे यह कहना चाहिये कि आपके जीवनमे भोगवृत्ति अब प्रधान पद लेती मालूम होती है। भोग-विलासका दास बना हुआ राजा तानाशाही और हिंसाके बिना अपने शासनको टिका नहीं सकता, और तानाशाही तथा हिंसा अन्तमे राज्यतंत्र, राजा और प्रजा तीनोंको नीचे गिरा देती है। आपके बड़े भाईका उदाहरण आपके सामने विलकुल ताजा है। इस स्थान पर मुझे यह भी कहना चाहिये कि वालिकी धाक ऐसी थी कि उसका राज्य तो इतना लम्बा भी चला, परन्तु आपका राज्य इस तरह जरा भी लम्बा नहीं चलेगा। यदि आप समय रहते नहीं चेतेंगे, तो आपकी स्थिति ऐसी नहीं है कि आप तानाशाहीको या अधी हिंसाको जरा भी पचा सकें। ”

हनुमानके एक एक वाक्यको सुग्रीव जिज्ञासु विद्यार्थीकी वृत्तिसे सुन रहे थे। उन्होंने हनुमानसे कहा : “ प्रिय मित्र, तुम्हारी बातोंमें बड़ा आनन्द आ रहा है। तुम ऐसी बातें मुझे और सुनाओ, सुनाते ही

रहो। तुम्हारे वचन कबल मरे अतः करणको ही नहीं छूने, किन्तु जिस दुःखका मैं बुद्धिसे तबसे दूर रखता था उस दुःखको मैं वचन फिर से ताजा और स्पष्ट करता हूँ।

मुद्रावरण आप चाहें जैसे हूँ, फिर भी आप राजा हैं। प्रजा के प्रिय नरपति हैं। आप भले भूझे अपना साथी और मित्र मानें और भले ही हम दोनों यहाँ एवान्तर्गते हूँ फिर भी आपसे सम्बन्ध रखनेवाली मेरी टीकामें विवककी मर्यादाका पूरी तरह पालन होना ही चाहिये। यह आपके व्यक्तित्वगत सम्मानके लिए तो आवश्यक है ही परन्तु जनता जनार्दन के एक सेवक के पद के सम्मानके लिए विशेष आवश्यक है। ऐसा मानते हुए भी थोड़ा खतरा उठाकर मैं जो बात कहना आगम्य का है उस में आग बगलाऊँगा। मेरी आशा है कि मेरे गुण जाग्यम ईश्वर भी मेरा सहायक होगा। और यह मेरा सीमावर्त है कि आपसे मेरे इस गुण जाग्यको सपन्नकर ही मेरी बात सुननेकी उत्सुकता प्रकट की है।

अब आप अपना दिग्दर्शक देखिये। मैं तो आप जानते ही हूँ कि जिस राज्यत्रयमें राजाका स्थान मुख्य होता है उसमें राजाकी प्रत्यक्ष गिरा पर जाधार रखकर ही प्रजाका जीवन चलता है और उसका निमाण होता है। आप ही कहिये आप काय मन्त्रमें उठते हैं ? प्रमुख स्मरणका समय निकाल पाते हैं ? मायालयमें नियमित उपस्थित रह सकते हैं ? छोटस छोटे प्रजाजनक सम्पर्कमें आ सकते हैं ? अथवा, राज्य-कर्मचारियों पर भी दृष्टि रख सकते हैं ? महाराज भोगवत्ति ऐसी हैं जो भाग्यिक उपभोगम कभी गमन नहीं होती। उसमें मैं आनन्द दाप कर निरालस हूँ। इसका असर आपके पूरे राज्यत्रय पर तो होने लगा ही है परन्तु राज्यकी प्रजा पर भी होने लगा है। मैं कहूँ दो सज्जनारु क्षात्रात्मके गुण रूपम गमना मुना था हमने तो यह माना था कि बार्हिक राज्यत्रयम छूँ तो अब सम्पत्ति और मन्त्राचारकी दिशामें आग योंही परन्तु हम तो वृष्टिसे निकलकर लार्डमें गिर गये। मिथ्याचार बारा सूर-पात्र, हया लगभग बन्धन है गये मे परन्तु य भा अब पुष्ट होने लग है। राज्यक कर्मचारी स्वच्छन्द बनने जा रहे

है। न्यायालयोमे प्रभाव और वसीलेका जोर बढ़ने लगा है। 'यह टीका सुनकर मैं चौक उठा हूँ। मुझे तो यह भी भय है कि आपने रघुपति रामचन्द्रको जो वचन दिया था, उसे भी आप भूल गये होंगे। 'यथा राजा तथा प्रजा' अथवा 'राजा कालस्य कारणम्' यह ऋषि-वचन सत्य ही है। आज सबसे पहले तो मैं आपसे यह आग्रह करूँगा कि आप रामचन्द्रजीको दिये हुए अपने वचनका पालन करें। इस वचन-पालनके साथ हमारी राजनीतिक स्थिरता और उन्नतिका प्रश्न स्वाभाविक रूपसे जुड़ जाता है। राज्यतन्त्रकी दृष्टिसे रावणकी शक्ति किष्किन्धाके लिए क्या भयरूप नहीं है? समझ लीजिये कि अब रावणको वालिका भय नहीं रहा है, क्या वह हमारे राज्यतन्त्रको स्थिर रहने देगा? अभी तक हम अपने किष्किन्धा राज्यके आंतरिक सगठन और उसकी नैतिक शक्तिको भी दृढ़ नहीं बना सके हैं। वालिराजके कुछ दोषोको छोड़ दे, तो उनका प्रभाव ऐसा भयकर था कि बाहरी शत्रु, भीतरके अपराधी और राज्यद्रोही उनसे थरथर कापते थे। आज अनुचित भय तो दूर हो गया है और उसका मिटना जरूरी ही था। परन्तु आज सच्चा भय भी चला गया है। राजाके व्यक्तिगत उज्ज्वल चरित्र तथा निष्पक्ष न्यायतन्त्रके बिना यह भय पैदा नहीं हो सकता। इसे पैदा करनेके लिए राज्याभिषेकके बाद कुछ समय तक आपने कर्तव्यकी जो लगन और आत्म-शोधनकी जो भावना बताई, वह फिरसे जाग्रत होनी चाहिये। आज राज्यतन्त्रमे शिथिलता तो आ ही गई है। ऐसा होते हुए भी यदि उसकी दिशा सन्मार्गकी ओर होती, तो मुझे इतना दुःख नहीं होता; परन्तु हमारा वर्तमान राज्यतन्त्र गलत दिशामे जा रहा है। आपको एक बात जानकर दुःख होगा। परन्तु मुझे यह भी कह देना चाहिये कि हमारे भावी राजा अगदको भी सग्तिका दोष लग जानेका भय खड़ा हो गया है। और हमारे राज्यके स्तम्भ जैसे मुख्य मंत्रीगण भी रिश्वत खाने लगे हैं। मैं नम्रभावसे यह मानता हूँ कि इस सारी सडाघ-को माफ करनेके लिए आपको गहरा आत्म-शोधन करना चाहिये। आज अवसर मिल जानेसे यह बात मैंने आपसे कह दी है। मेरे लिए यह बड़ी चिन्ताका विषय हो गया है। मुझे इन सारी बातोका मूक साक्षी

वनना पन्ता है इससे बड़ा दुःख होता है। दिन रात इसी चिन्तामें म जलता रहता हूँ। मैं श्रीरामचन्द्रके पास भी क्या मुह लेकर जाऊँ? हमारा जोर हमारी प्रजाका यह जहाभाग्य है कि यद्यपि अपने अनुपम अतिथि परम मित्र और जगद्वल्लभ महापुरुष रामचन्द्रको हम सबन भुला दिया है परन्तु रामचन्द्रन हम लागाको नहा भुलाया है जो सबथा उनक असहयोगके पात्र ह।

इतना कहत कहते हनुमानजीके नानाम आसू वह निकल। सुग्रीव का नीचे झुका हुआ मुख ही उनकी अश्रुधाराका छिपा रहा था वस उनका अश्रु प्रवाह तो कभीका आरम्भ हो गया था। सुग्रीवकी कबल जाखें ही नहा रो रही थी उनका राम रोम रो रहा था।

आसू पाछकर घीमी पावाजस सुग्रीव बहने लग

मित्र हनुमान मित्रभावस तुमने मुझे जो सीख और उलाहना दिया उसका मैं स्वागत करता हूँ। मैं अपनी मनादगाता क्लिप्तपण करता हूँ तो भोगामें अतिथि लिप्त हानका कारण भी मुझे नसी मनाङ्गामें से पदा हुआ मालूम हाता है। भयके बिना राज्यतन चल ही नहा सकता इस मान्यताके कारण निष्पक्ष चापके बल सजा पर मन ज्यादा भार देना शुरू किया। इसके फलस्वरूप मन प्रजाका प्रेम खो दिया। इसका बर मनमें रखकर मन प्रजाका दवान और प्रजा प्रिय व्यक्तियोंको वगमें करनके लिए पुलिसको जरूरतस ज्वाला सत्ता मौप दी। पुलिसकी वृत्ति हमारा लोगोका सजा बनकी ही रहती है इसलिए अधिक सत्ता मिल जानसे वह गलत रास्ते चली गई जो प्रजा चारा जोरम दवाई और कुचला जान लगी। गरावखारा यभिचार चारी लूट रिश्वतखारी आदि प्रजा घातक दाप फलने फूलन लगे। प्रजामें अपराधको बल देवकर मैं अधिक कठोर बन गया और जन सत्रके भारसे मुक्ति पानक लिए मैं सुरा और सुन्दरी आदि दापाकी आर मुडा। कुछ समयम यह भाव भी मेरे मनम दूर हो चला था कि प्रजाकी बहन-बहिया मेरी भी बहन-बहिया ह। ऐसी स्थितिमें मैं राज्य बमचारिया तथा प्रजाको पीना पटुचानवागत भला क्या कह सरता था? मेरे सामने बवल खुगामदी लोगका दल बन और वह मेरी

आडमे अन्याय और अत्याचार करने लगा। ऐसी स्थितिमे मैं अपने परम हितैपी मित्र और मेरे गिरच्छत्र रामचन्द्रसे क्या मुह लेकर मिलने जाऊँ ? इसके सिवा, मेरे मनमे यह बात भी पड़ी थी कि राम जैसे तपस्वी राजनीतिको क्या समझे ? पवित्र तारामती और रुमाने मुझे बहुत समझाया, परन्तु उनकी तो मैं परवाह ही क्यों करने लगा ? अब मुझे अपनी गलतीकी जड़ मिल गई है। इसके लिए प्रिय मित्र, तुम्हारा मैं जितना आभार मानू उतना थोड़ा है। मुझे इस बातका विश्वास हो गया है कि त्याग और समय ही राज्यतत्र चलानेवालोंके सच्चे साथी और परम मित्र हैं। सज्जनोकी पूजा और प्रजाका स्नेह-पूर्ण सम्पर्क ये ही राज्यतत्रकी सुव्यवस्थाके प्राण हैं। राज्यकी सुरक्षितता इसी बातमे है कि शासनका सारा कामकाज प्रजाके हाथमें सौंपकर तटस्थ भावसे देखा जाय और आवश्यकता हो वहा उसकी सहायता की जाय। अन्य राष्ट्रोंके साथ मीठे सम्बन्ध रखने ही चाहिये। आंतरिक युद्ध कभी भी शोभाकी बात नहीं हो सकता। बाहरके देशोंके साथ भी अनिवार्य परिस्थितियोंमे ही युद्ध हो सकता है। ये सब बातें अब मुझे प्रकाशकी तरह स्पष्ट दिखाई देती हैं, और मुझे यह विश्वास हो गया है कि रघुवग-मणि रामचन्द्रजीने राजनीतिको धर्ममय बनानेका जो मार्ग बताया है वही सच्चा मार्ग है। कुछ खुशामदियों और जवरदस्ती बड़े बड़े लोगोको अप्रसन्न करके भी हमें इसी मार्ग पर चलना चाहिये।”

इतना कहनेके बाद सुग्रीवने रामके पास जाकर क्षमा मागनेकी आतुरता दिखाई। हनुमानको भी ऐसा लगा कि सुग्रीवराजकी खोयी हुई नात्त्विकता सचमुच जाग्रत हो गयी है, इसलिए उन्होंने तुरन्त अपनी सम्मति दे दी। अब दोनों अपने वस्त्रोंको व्यवस्थित करके अन्य किसीको नाथ लिये बिना रामके पास जानेके लिए प्रवर्पण गिरिकी दिगामें एकाएक चल पड़े।

सीताकी शोधमें

काका सुग्रीव और बोर हनुमान दोनों एकाकी प्रवचण गिरिकी ओर जा रहे हूँ यह समाचार मिलते ही अगदने राज्यके उपमप्रियात्रा वुलाया और उन्हें कुछ सूचनायें देकर पवनकी गतिस वह उसी क्षणमें ढोडा । देखते ही देखते अगदने सुग्रीव और हनुमानको जा पन्ना । राके बिना ही उसने सुग्रीवको आदरपूर्वक प्रणाम किया । सुग्रीवने ममतास उसकी ओर लेखा । अगदने इतनमे ही सत्ताप कर लिया । सुग्रीवके मनमें गहरा मयन चल रहा था । उनका मन लज्जाके भारसे दब गया था । हनुमानजी प्रसंगसे अनुरूप गभीर हो गये थ । सीता धुपधाप आने वन्ने जा रहे थ । उनके पावाकी मयन गति भी अवसर की गभीरताको प्रकट कर रही थी । कुछ ही देरमें तीना रामचन्द्रकी पणकुटीके पास जा पहुँचे ।

पधारो प्रिय मित्र पधारो धीर-गभीर स्वरम वालन हुए राम पणकुटीमे बाहर आये और उहान सुग्रीवका स्वागत किया । परन्तु सुग्रीवके मुहसे जानन्द प्रकट करनवाल उल्गार कसे निकलन ? उहान आखें नीची करके रामको मूक अभिवादन किया ।

कुछ ही क्षणमें राम सुग्रीव लम्पण हनुमान और अगद पाचा एक सुन्दर वृक्षके नीचे आकर बठ । सुग्रीवका गुमसुम बठा दल लम्पणको दयाके बदले उन पर श्रोष जाया । मन हा मन ब बाल उठ भूत कहीका कसा ढाग कर रहा है । जब हनुमानन रहा न गया । रामचन्द्रकी ओर देखकर ब बाल उठे नाथ आपक मित्रमे गम्भीर भूल हो गई है । आपके समान श्रेष्ठ पुरुषाकी यह चतावनी यथाथ है कि मनके जानन्दकी तरगास मदा सावधान रहा । यह सुनकर सुग्रीवकी आखें सजल हा गई । उहाने रामके चरणामें बबल मस्तक ही नहा अपना हृदय भी चुका लिया । रामकी आगामे भा

प्रेमाश्रु उमड़ आये । कुछ क्षणके लिए सारा वातावरण करुण बन गया । इतनेमें सुग्रीवका महादल वहा आ पहुँचा । एक साथ पाव उठानेकी उसकी अद्भुत छटाका किन शब्दोमे वर्णन किया जाय ? चारो दिशाओसे पवित्रबद्ध होकर बढता आ रहा वह सेनादल अपने दटनाय-कोकी आज्ञाका पालन करके आमने-सामने दो दिशाओमे व्यवस्थित खड़ा हो गया । राम सहित पाचोकी मण्डली सेनाके बीचोबीच आ गई । 'हाथ . . उठाओ' का आदेश मिलते ही हजारो सैनिकोके हाथ एक साथ ऊपर उठ गये और सबने एक ही पद्धतिसे प्रथम रामको और उसके पश्चात् सुग्रीवको प्रणाम किया । प्रणाम स्वीकार करते समय राम खड़े हो गये । वे और उनके साथी एक एक सैनिकको ध्यानसे देखते हुए इस छोरसे उस छोर तक गये और उसी तरह तेजीसे वापिस भी आ गये । ऐसी अनुशासनवाली — तालीम पाई हुई — महा-सेनाको देखकर लक्ष्मण तो स्तब्ध हो गये । अब सुग्रीव पर उन्हें जो क्रोध आया था वह भी प्रेममें बदल गया ।

सब लोग विशाल मण्डपकी तरह फैले हुए वटवृक्षके नीचे आकर बैठ गये । सब कोई रामचन्द्रजीके दर्शनामृतका पान करके अपनी हृदयकी पिपासा शान्त करने लगे ।

वह कितना अनुपम और विरल दृश्य था ! रामचन्द्र और लक्ष्मण दोनोके मुख पर प्रसन्नताकी आभा देखकर सुग्रीवके चेहरे पर भी प्रसन्न मुसकान फैल गई । अब पाचो अपना अपना मत व्यक्त करने लगे ।

अन्तमें सब लोग इस निश्चय पर पहुँचे कि चुने हुए मुख्य ५०० सैनिकोको सबने पहले दक्षिण दिशामें ही जाना चाहिये । किसीको पहले जाकर लकामें सीताजीका पता लगा आना चाहिये । सीताजीकी शोधका कार्य एकमतसे महाचतुर और महावीर हनुमानको सौंपा गया । उन्हें दूसरी क्या तैयारी करनी थी ? उन्होंने बिना किसी आताकानीके यह प्रस्ताव स्वीकार कर लिया । उनके लिए इसमे सम्मानका नही परन्तु जिम्मेदारीका प्रश्न था । हनुमानके चुनावके औचित्यके विषयमे किसीको शका भी नही थी । अगद, जाम्बवत, हनुमान तथा अन्य मुख्य नेताओके छोटे-बड़े दल बन गये । सभी नायकोने रामचन्द्रके पाम

जाकर उनके आशीर्वाद माग। रामने सबको हाथिब आशीर्वाद दिया। सबने एक-दूसरे उनके चरणों में प्रणाम किया। प्रणाम करनेवालों में सबमें अंतिम हनुमान थे। उनका एक हाथ खींचकर रामने अपन दो हाथों की हथिनियों के बीच दबाया और स्नहम उसे चूम लिया। इसका बाद उनके दूसरे हाथ में सीताजी की प्रतीतिक लिए एक मुद्रिका भी दी जो बड़े वस्तुओं की बनी थी और सीताजी को प्रिय था। मुद्रिका को सिर में छुआकर हनुमानने आदरपूर्वक उसे ग्रहण किया। अब रघुपति राम सीताजी के लिए सदाश देते हुए बोले 'देखा भाई जानकीस कहना कि रामके हृदय में सत्यक साथ ही आपकी मेवामय स्नहमति भलीभांति अंकित है। दिन की प्रवृत्ति में और रात की निवृत्ति में जल में स्थल में आकाश में वन में बस्ती में जहाँ भी राम बैठते हैं, उठते हैं, जाते हैं, देखते हैं, सुनते हैं, खाते हैं पीते हैं स्पष्ट करते हैं सुषने हैं वहाँ सबत्र और सबमें व एकमान आपकी ही प्रतिमा का अनुभव करते हैं। जितने दिन बीते उतने दिन अब नहा बीनेंगे उससे पहले ही हम सब फिरसे मिलेंगे। सीतामे मरी जोरस यह भी कहना लक्ष्मण तुम्हारी अनुपस्थिति में एक पुरुषसे जो कुछ भी हो सकता है वह सब पुत्रभावम कर रहे हैं। हमारे तन मन की तुम जरा भी चिन्ता न करना। अभी जिस तरह रहती हो उसी तरह बिरह की वेदना सहते हुए भी निश्चिन्त रहना।

ऐसी गहन आश्रमीयता का सदाश सुनकर हनुमान का रोमाच हो जाया और उनकी आँखें छलछला जाई। मुद्रिका को उहाँन गाँठ में बांध दिया और सत्पाना होठा पर तथा हृदय में अंकित कर लिया।

प्रभा एक बात में पूछूँ? और रामचन्द्र की सम्मति लेकर जान जान हनुमानन पूछा यदि सीताजी यह कह दें कि मुझे जल्दी रामम मिला दो तो मैं क्या करूँ?

इसालिए मन अपन मन्त्रों में सीतास धीरज रखने को कहा है। मैं यह जानता हूँ कि तुममें एसा महान्क्ति है जिसके बल पर तुम अपनी माता का कष्ट पर बठाकर मेरे पास ला सकते हो और राम सीता को भेंट करा सकते हैं। लेकिन भाई रावणने जो चोरी की उस

चोरीके लाछनको दुनियासे मिटानेके लिए हमें इतनी साहूकारीकी रक्षा करनी होगी।” रामके अंतिम वाक्यको रटते रटते हनुमान विदा हुए।

सब सैनिक शस्त्रोसे सज्ज होकर उनका रास्ता ही देख रहे थे। उनके आते ही सैनिकोंकी कूच तेज गतिसे आरंभ हो गई। लक्ष्मण तो इस वीरतापूर्ण दृश्यको देखते ही रहे। परन्तु सामान्य सेनाकी कूच और इस सेनाकी कूचमें अन्तर था। यह सैन्यकूच युद्धकी नहीं परन्तु मुख्यतः अयुद्धका मार्ग खोज कर सिद्धान्तकी रक्षाका उपाय खोजनेकी कूच थी।

×

किष्किन्धामे निकले हुए सैनिक यद्यपि दक्षिण दिशामे लकाको अपना लक्ष्य बनाकर आगे बढ़ रहे थे, परन्तु उनकी चलनेकी रीति अनोखी थी। उन्होंने पचास पचासके दल बना लिये थे। किष्किन्धासे लकाकी ओर प्रयाण करते हुए दक्षिण दिशाके एक भी गुप्त स्थानकी भलीभाँति जाँच किये बिना वे आगे नहीं बढ़ते थे। उनके मनमें एक निश्चय तो था ही कि रावण सीतामाताको लकाकी ओर ही ले गया होगा। फिर भी वे मार्गके प्रत्येक गुप्त स्थानको इस विचारसे देखते चले जा रहे थे कि रावण चतुर राजा है। उसके गुप्तचर रामचन्द्रकी छोटीसे छोटी बात भी उसके पास पहुँचाते होंगे। इसलिए वह एक ही स्थान पर सीताजीको नहीं रहने देगा। एक कारण यह भी था कि भविष्यमें कभी रावणसे युद्ध करना पड़े, तो हमारी महासेनाको सुख-दुःखमें ठहरनेका स्थान मिल जाय इस दृष्टिसे भी जितने गुप्त स्थान खोजे और देखे जा सकें उतने खोजकर देख लिये जाय। प्रत्येक दलके नायक उन स्थानोंके नक्शे भी बना लेते थे। इस प्रवासमें सैनिकोंको कितने ही नये नये अनुभव होते थे। इन अनुभवोंकी डायरी भी वे रखते थे। सामान्य रूपसे प्रत्येक दलका अलग अलग पड़ाव होनेमें जाने-पीनेकी सुविधा सबको आसानीसे मिल जाती थी। यह सारी यात्रा अधिकतर पहाड़ी प्रदेशकी थी। मार्गमें अनेक छोटी-बड़ी नदिया आती थी। फलोंके भारसे झुके हुए विविध प्रकारके वृक्ष जगह जगह मिलते थे। कहीं कहीं वनराजियोंमें जगली मानवोंकी छोटी

छाटी बस्तिया भी मिल जाती था। परन्तु अधिकतर ये सनिक दल एस म्याना पर पड़ाव डालते थे जहाँ उन्हें मानवावे सम्पत्तमें न आना पड़। भोजनमें वे कामल पर्णकुबुरोस भी अपना काम चला लेते थे। फल उन्हें बहुत प्रिय थे। किसी समय नय फलावाला काई बक्ष नियाई पत्ता तो उन फगारी पूरी जाच करनेके बात ही वे उन्हें पान थे। कौनसा फल गरीरको नुक्सान करता है, यह जाननेकी कला भी उन्हें हमनगत थी। मागमें अनेक प्रकारके पशु-पक्षी, मुकुमार पुरग और बलरल नाद करते सरन उनका स्वागत करते थे। प्रकृतिकी जपरपार लीलाआ तया जन्भुन रस-गोप्यका अनुभव करते करते सब आग बढ़ते थे। ये सारे दल कमन कम आठ न्निमें एक घार जहूर एक स्थान पर मिलते थे। विविध प्रकारके अनुभवाका आनान प्रानन करनेके बात जो सार रूपमें लिपन जसी बातें हापी उनका समग्र गार भी लिप लिपि जाता था। सारे न्निमें मिलनेका जो न्नि हाता था उस न्नि पुर ५०० सनिक एक स्थान पर एकत्र हो जाते थे। वह न्नि महर्षिवाक समागम और समाराट्क जसा जानन्ना न्निग बन जाता था।

एक ही एक समारोहकी उपा एक न्नि प्रकट हुई। उस न्नि सरन यह निगय किया कि अर आग १०-१२ मीलका यागन मह-रपल जसा प्रानन जाता है उसगिए हम सर गाथ गाथ की जाग योंग। पाइ फल और जग गाथ न्नि सरन सबर सनिरान बूच आरम्भ की। उनका गति बन्त तज थी। न्निग की दगन उहाने आरज मायका पागन तय कर दिया। एक सा गरमीक न्नि। फिर गुप्ता बन बिगिन प्रानन। उस पर तज गति। सर सुद प्याग हा न्नि। आगद फल गाथर सारा पानी सनिक पी गय। सरन मान दिया था कि नीन पाग माग जाग जान पर फल जग और उसम स्या मिग। पागद मीन बन्त पर जगद जग ना मिग। प्याग भा सबरा निगन न्निग जाग था। ल्निग पानी नमक जगा सारा था। कुछ प्यागन आगे बग बगद पाना पीना गग किया ल्निग न्निग नाक की। न्निग? यू यू बरन निगन न्निग पडा।

अब उन्होंने देखा कि इस रास्ते आगे जानेसे तो समुद्र आयेगा। इसलिए उन्होंने दिशा बदलकर दूसरा रास्ता लिया। दो तीन मील मुश्किलसे गये होंगे कि एक पर्वत दिखाई दिया। दुर्भाग्यसे वहा न तो कहीं एक झाड़ था, न कहीं पानी था। शरीर सबके थककर चूर हो गये थे। गले प्यासके मारे सूख रहे थे। ऐसी दशामे पर्वत पर चढ़नेका उत्साह किसमे होता? और कैसे होता? परन्तु अब पीछे लौटनेमे भी कोई लाभ नहीं था। आगे बढे सिवा कोई चारा ही नहीं था। अन्तमे चार सौ निन्यानवे सैनिकोको पीछे छोडकर वीर हनुमान रामका नाम लेकर आगे बढे। सैनिकोने अब जीनेकी आगा छोड़ दी थी। मृत्युका तो उन्हें कोई भय था ही नहीं, क्योंकि मृत्युसे जूझनेका सकल्प करके ही वे घरसे निकले थे। परन्तु रामका कार्य अधूरा रह जानेका उन्हें गहरा दुःख था। ऐसे सकटके समय हनुमानने एक आश्चर्य देखा। एक गुफाके द्वारमे से लम्बी कतारमे कितने ही पक्षी आ-जा रहे थे। उन्होंने नीचे झुककर देखा। एक सुन्दर सरोवर दिखाई पडा। तुरन्त पीछे घूमकर हनुमानने सुरक्षितताकी सीटी बजाई। सारे सैनिक दलोमे नये प्राणोका सचार हुआ। आशाने सबके पावोमे नई शक्ति, नया उत्साह भर दिया। तेज गतिसे सब सैनिक हनुमानके पास पहुँचे। एक एक करके सर्व गुफामे प्रविष्ट हुए। उन्होंने देखा कि वहा केवल सरोवर ही नहीं था, परन्तु स्वादिष्ट मीठे फलोसे लदे हुए वृक्ष भी थे। एक सुन्दर मन्दिर भी दिखाई दिया। उसमें दयाकी देवीके समान एक लावण्यमयी महिला बैठी थी। उसका मुखारविन्द देखते ही सब उसके चरणोमें झुक गये। दयाकी उस देवीने सबको आशीर्वाद दिया और हाथके इशारेसे फल और जल ग्रहण करनेकी आज्ञा की।

हेमा

भूख गान्त होनक बाद कुछ दर इधर उधर वनकी गोभा निहार कर सब सनिक मंदिरमें आय और उन देवीको भक्तिभावसे प्रणाम करके शिष्टतासे बठ गया। हनुमानस गान्त न रहा गया। वे बाल

मानाजी आपका मुसाराबिंद देखकर हममें स हरएकके मनमें स्वाभाविक रूपमें ही भक्तिभाव उत्पन्न होता है। आपका कोई आपत्ति न हो तो आप हमारे लिए उपयोगा सिद्ध हानवाला अपना प्रत्येक जीवन वृत्तान्त हमें सुनायें और इस वनका भी थोड़ा परिचय करायें।

बटा तुम कोई चतुर मनुष्य लगत हो मुसकुराते हुए उन देवीन कहा। फिर प्रथम वक्ता और उसक साथियाका परिचय करनक बाद वे कहन लगा म महसावर्णीकी पुत्री हू। मेरा नाम स्वयंप्रभा है। वर्षोंस मन लाक-नायक रामचंद्रजाका नाम सुन रखा है और उनक दशनाकी मेरी भूख तिनोदिन बन्ती रही है। आप सब रामकायक लिए और रामके पासस ही आ रहे ह यह जानकर मुझे अपार आनंद हो रहा है। वह त्ति और वह क्षण मेरे लिए अत्यंत पवित्र होगा जब म भी रामक दशन कर सकूंगी। म कुमारिका हू और किसी पवित्र स्थानमें अपना नय जीवन बिताना चाहती हू। परन्तु इसमें रामचंद्रका सलाहस मुझ बड़ा लाभ होगा क्योंकि उह गृहस्थ वानप्रस्थ आर त्यागी तीना अवस्थाआका व्यक्तिगत अनुभव है। यह वन मय दानवका भाना जाता है। इसकी एक विशेष प्रत्येक क्या है। यहां अगुली दिखाकर उहान एक अत्यंत शक्तिशाली स्त्रीकी जोर सबका ध्यान खाचा और जागे कहा

देवी पुत्रा यह मेरी सखी है। इसका नाम हेमा है। आज यह वन मुख्यत इसके अधिकारमें है। इतना कहकर एकाएक मानी आधान लगा हा इस तरह वे रुक गई। कुछ क्षण तक सारा वाता

वरण शान्त रहा । उनके मुसकाते चेहरे पर क्रोधकी रेखाये उभर आई । जरा गहरा श्वास लेकर वे बोली . “क्या पुरुषोंने यही मान रखा है कि स्त्रियोका सौन्दर्य, उनकी सुकुमारता, पुरुषोकी विकारी और रोगी मनोवृत्तिका पोषण करनेके लिए ही है ? वे किसी भी सुन्दर स्त्रीको देखते ही इतने पामर क्यों बन जाते होंगे ? वेशक, राम जैसे एकपत्नी-व्रतधारी विरल महापुरुष इसके अपवाद माने जायेंगे । परन्तु अधिकतर पुरुषोंके बारेमें यही अत्यन्त दुःखद अनुभव आया है । वे सामान्य शिष्टता और मानवताको तो क्या, परन्तु पशुताको भी लज्जित करनेवाली हीन मनोवृत्तिके देखे जाते हैं । मय दानव उन्हींमें से एक था । उसके पास विपुल शक्ति और समृद्धि थी । नारिया भी बहुत थी । किन्तु नारियोसे एकपति-व्रतका पालन करानेकी इच्छा रखनेवाले ढोगी नर-भ्रमरोको तृप्ति कैसे हो ? इस मधुर वनमें अतिथिके रूपमें आई हुई इस मेरी सखी हेमाके प्रति ‘अतिथिदेवो भव’ की श्रद्धामयी दृष्टि रखनेके बदले उस नर-पिशाचने इस पर पापकी दृष्टि डाली । हेमाने उसे समझानेकी बहुत कोशिश की । लेकिन विपके कीड़ेको समझ कैसी ? वह समझा नहीं और हेमा बड़ी कठि-नईमें फस गई । उसके पजेसे भागकर या अन्तमें प्राणोकी वलि देकर भी उसने अपने शीलकी रक्षा करनेका दृढ सकल्प कर लिया । प्रकृतिने स्त्रीके शरीरको कैसा परावलम्बी बनाया है ? पापी पुरुषके शिकजेमें फसा कि क्षणभरमें उसे भ्रष्ट किया जा सकता है । परन्तु ऐसी परावलम्बी दशामें भी प्रकृतिने शीलकी रक्षाके लिए स्त्रीमें प्राणोकी वाजी लगाकर पापीका सामना करनेकी और आत्म-वलिदानकी स्वाभाविक हिम्मत भर दी है । हेमा भागी तो जरूर, लेकिन मय दानवकी स्थूल शक्तिके सामने उसकी क्या चलती ? हेमाने जीभको कुचलकर मर जानेका प्रयत्न किया, लेकिन वह मर न सकी । उसने गलेमें साडीका फन्दा लगाकर फानी खानेका यत्न किया, लेकिन मय दानवने उसे पकड़ लिया और ऐसा न करने दिया । अब हेमाके पास भगवानके नामके सिवा कोई आधार न रहा ।”

हमा भी नीची आखें करके यन् मय मुन रही थी। यह अनिम वाक्य मुन कर उसकी आत्मा आमुकी धार वन् निकली। थाताशर्म से भी कुछ लोमाकी जाखें छलछला आन्। कुछ लोमाके दात बटबटान गग। बहूनाके होठ पन्क उठ। माना ऐम महालम्पट मानव पर सब अभिगायका वषा कर रह हा। पुरुषाके नात व लज्जित भी हुए।

उन माता जागे कहा

मन्भाग्यम उमी समय किसी महामानवन मय दानवका लल कारा 'ए दुष्ट छाड द दम देवीका जोर इसके चरणामें प्रणाम कर।' यह मुनकर हेमामें नये प्राणाका सचार हुआ। उमन एक ही क्षटकमें उस पामर दत्यका एक जोर फेंक लिया। अब वह दानव ललकारने बाल मानवकी ओर पपटा। वासनाक गुलाम उम दानवका एस समय भा समति नहा मूझी। अतमें वह इमा वनमें उम महामानव द्वारा मारा गया। और मरी यह मल्ला दम वनमें रन्कर उस पापीकी आत्माके उद्धारक लिए प्रायना मंदिर बनाकर प्रायना कर रही है। मर गरीरक कारण मय दानवकी माहवत्ति बनी और उसका एसा परिणाम आया यह मानकर हमा उस दानवके प्रति अपना कृत्य पालन कर रहा है। म ता समग और सहायताक लिए यहा रसक साय रहसी हू। म जा करक नहा धता मकी वह हेमाने करक लिखा लिया। इसलिए हमा ही पूजनीय है। अच्छा बधुआ अब मरा मकल्प पूरा हुआ। इतना कहकर स्वयप्रभा रामके पास जानकी तयारी करनेके लिए उठी। जनमें हमा और स्वयप्रभा दानाने एक दूसरेका आलिंगन किया।

इस दृश्यने जोर ऊपरकी कथान हरएक थाताक मनमें होना महानारियाक लिए बडा जातरभाव पटा कर लिया। हमाकी मति ता मवके मनमें अरिन ग हा गई।

चात्र जमा हो फिर भी श्री दम डालत विश्वका आधार-स्तम्भ है। चात्र जितना जवग ग फिर भी नारी जगतका अगदम्बा है। पुरुष जानिक घोर पापाक गामन अन्ति रन्कर पुण्यकी वषा करनेवागी तम नपामर्तिका गल लाल प्रणाम ह।

एक विचित्र महाप्राणी

सब सैनिक सज्ज हो गये। इन दोनों महानारियोंको भक्तिभावसे वन्दन करके उन्होंने विदा ली। कुछ प्रसंग ऐसे होते हैं जब थोड़े क्षणोंका महायोग जीवनमें स्थायी स्थान ले लेता है। ऐसा विरल स्मरण हमारी जीवन-नीकाका दीपस्तम्भ भी बन जाता है। शायद गोस्वामी तुलसीदासजीने ऐसे अनुभवोंके बाद ही कहा होगा

आधीमें आधी घड़ी, आधीमें पुनि आध।

तुलसी सगत साधुकी, कटे कोटि अपराध॥

अब आगेका मार्ग ऐसा था कि कोई सैनिक अलग पड़ जाता, तो फिरसे उसके मिलनेकी कोई सभावना न रहती। इसलिए सब सैनिक एक साथ कतारमें चलने लगे। सबके पैर इस तरह एक साथ उठते और गिरते थे कि देखनेवालोंका मन अनुशासनवद्धता तथा व्यवस्थाकी ओर आकर्षित हुए बिना रह नहीं सकता था। खाड़ीके किनारे चलते चलते सारे सैनिक लगभग विशाल सागर-तटके समीप पहुँच गये। अब कहाँ और कैसे जाना चाहिये, इसका विचार वे कर रहे थे कि एक भयंकर आवाज सुनाई पड़ी। उस आवाजसे एक बार तो सबकी छाती दहल उठी। देखते ही देखते एक महाकाय प्राणी उनके पास आ पहुँचा। यह पशु है, पक्षी है, मानव है या दानव है—इस आश्चर्यमें सब निमग्न थे कि उस प्राणीने एकाएक सैनिकों पर आक्रमण कर दिया और पाँच-दसको नीचे गिरा दिया। क्षणभरमें ही यह सब हो गया। हनुमान सावधान हो इसके पहले ही उस प्राणीने उन पर आक्रमण किया और अपनी महाकायाके नीचे दबाकर उन्हें रगड़ना शुरू कर दिया। अनायास ही हनुमानके मुहसे 'हे राम, श्रीराम' निकल पड़ा। दूसरे सैनिकोंकी हिम्मत टूट गई। वे इधर-उधर भाग-दौड़ करने लगे। परन्तु अगदने स्वस्थ होकर सैनिकोंकी वीरताको

जगानके लिए उन्हें ललकारा जटायु उस गिद्धन जिन सीताजीर लिए अपन प्राण अर्पण कर लिये उन साताजीवी राजमें जात जात यदि हम मर जाय तो इससे उत्तम मृत्यु और नौनमी हो सकती है? हम जबरदस्ती लड़ना नहीं चाहते। लेकिन इस महाप्राणीरा यदि युद्ध ही करना हा तो हमें इसे आहूता न निवर्तत वचन सत्य सिद्ध कर दिखाना चाहिये। एक स्थान पर धमधमट्ट हुआ मनुष्य दूसरे स्थान पर धमका पालन उत्तम रीतिस नहीं कर सकता।

ऐसा कहकर अगलवे सावधान कहते ही सारे सनिकामें नव चेतनका संचार हो गया।

परन्तु कुदरतकी गति यारी है। जटायु और राम-सीताका नाम सुनते ही उस महाकाय प्राणीरा आवेग शांत हो गया। हिंसाके स्थान पर उसमें वात्सल्य जाग उठा। उसकी जाखोंमें प्राधकी अग्नि गान्ध हाकर प्रियजनकी स्मृतिवे जासू छलछला आय। उसन हनुमानक चरणामें भाया नवाकर अपन दुब्यवहारके लिए क्षमा मागी और नव सनिकाको प्रणाम किया।

युद्धका शातावरण शांत मन्त्रीमें बदल गया। प्रेम और वन्दुताकी सरिता वह निकली। सब सनिक हनुमानजी और उस महाप्राणीक आसपास गोल धरेंमें बठ गये। उस महाप्राणीन जटायु मेरा परम मित्र था कहकर उसकी सारी पूवकया सुना दी। रामकृपाका चार चार स्मरण करके वह गदगद हा जाता था। हेमा और स्वयंप्रभाकी भेंटके बाद इस प्रसंगने एक नई ही छाप सबके मन पर डाली।

सबकी आश्चर्य हुआ जहा इतनी दूर बठे हुए रामन प्रति ऐसी भक्ति इस प्रकारके प्राणियामें किस तत्त्वके कारण स्फुरित हानी होगी।

विश्वप्रेमीके प्रमते लिए देग काल गति लिये या वेशक कोई बाधन कोई सीमायें बाधक नहीं होती। वह सारे जगतका व्याप्त करके उस पार चला जाना है।

अहिंसाके सूक्ष्म स्वरूपमें

“महासती जानकीजी अशोक वनमें हैं। रावण त्रिकूट पर्वतके शिखर पर लंका नगरीमें रहता है। लंका नगरीमें ही अशोक वाटिका है।” इतना कहकर वह महाकाय प्राणी चला गया।

जाम्बवत, विकट, अगद, हनुमान आदि सब सेनानायक सामने फैले समुद्रको देखकर विचार करने लगे। कुछ क्षण पश्चात् जाम्बवत बोला : “बड़ेसे बड़े शक्तिशाली पर भी बुढ़ापेका असर हुए बिना नहीं रहता। एक समय मेरी ये भुजाये चाहे जैसा पराक्रम करनेके लिए तैयार रहती थी। किन्तु आज वह भुजबल बिल्कुल क्षीण हो गया है।” विकट आदि साथी जाम्बवतके स्वरमें स्वर मिलाकर बोले : “बुढ़ापा मृत्युका अग्रदूत है। वह मृत्युकी आगाही करता है। परन्तु मूर्ख मन कहा समझता है? शरीर भले जीर्ण हो जाय, परन्तु मनकी तृष्णा कभी जीर्ण नहीं होती।” सबने हनुमानको ललकारा “उठो महावीर, महाकाय बनो और समुद्रको पार करो। तुम जानकीजीसे मिलकर वापिस लौटोगे, तब तक हमारा निवास इस सागर-तट पर ही रहेगा।”

एक ओर छावनिया तैयार होने लगी। दूसरी ओर हनुमानजी रामचिह्न — मुद्रिका — लेकर सागरके उस पार त्रिकूट गिरि पर स्थित लंकाकी दिशामें जानेको सज्ज हो गये। अहा, कैसा था वह महाशरीर ! अणिमा और गरिमा जैसी सिद्धिया आजीवन ब्रह्मचारी हनुमानके चरणोंमें खेलती थी। परन्तु उस परम-भक्तकी कैसी धीरता और कैसी नम्रता थी ! उन्होंने जाम्बवतको बार बार प्रणाम करके जानेकी आज्ञा मागी। जाम्बवतने अपने वरद हस्त ऊंचे करके आशीर्वाद दिये “विघ्नोको पार करके और सीताजीकी शोध करके शीघ्र लौट आना।” यह वाक्य सुनकर हनुमान पर्वतके समान उड़े। देखते ही देखते वे

गमना पर कर गये और तिरु वडा पर बड़ा लगे। दादा दूरे जान पर एक बड़ाव पूरा हुआ और मुन्ना पन्धरी सिगाई दी। उगमें बडाव पूरा हो पोष हा मरी य पडाव भाग्य हुए हुए मकर भी य। छात्र-बेट सरावर भी य। रिगी भी पवित्री उग साहिबमें विद्याम जेवी इच्छा हो मरगा थी।

हनुमानजीरा अमने जीर भूग-प्रागन ध्यातु कर लिया था। परन्तु महापुरुषार्थीक लिए विद्याम बना। भाग बना। आन बना। वे ता गानामानाव स्नानक लिए प्रधीर हा गये य। पन्ना बाड़ा भादा चुराया गरीरको कुछ क्षण विद्याम लिया और पुन मन्त्र हा गये। अब उदान अपना मामाय गरीर धारण कर लिया।

व्याण भागमें विद्याम बाउ ता रिछ ही रहत ह। फिर एक विघ्न ग्रस्थित हुआ। एक रागसी जसी भयकर स्त्रीन हनुमानको चुलीना दी ए सदा २० मुक्त तरा भक्षण करना है। य भूला हो ग ह। हनुमानन उत्तर लिया अभी फल ॥ आता ह। तुम फल पारर अपनी भूय मिटाना। स्त्री बागी 'नही म ता तुझे श्री निगलना चाहती ह। उत्तर मिला गरीरको मुक्त चिन्ता नही है। परन्तु अभी रामराम बहुत बाकी है। इसलिए घर गरीरका भिक्षा तुम्ह नहा २ सरता।

जतमें ता लपटकर हनुमानकी बायाको उग स्त्रीन अपनी भुजाआमें भर लिया। ज्वा ही उसन हनुमानका बायाको उछालनका प्रयत्न किया त्या ही वह काया बन्न लगी। कुछ हा क्षणमें दस गज लम्बा उस गन्धमीरा गरीर हनुमानके महागरीरक सामन बहुत छोटा मालूम होन लगा। उसका फटा हुआ मह फटा ही रह गया। इतनेमें ला जाता ह तुम्हारे मुखमें' कहते कहते हनुमान फिर लपटकर वन गये और उसके मुन्ने घुसकर नाकसे बाहर तिरुल आये तथा मूत्र स्वरूपमें आकर राम राम रहने लगे। उस स्त्रीका सारा जमिमान गल गया। रामनामक श्रवणय उसके हृदय पर जादूका सा कमर हुआ। क्षणभरमें वह भा राम राम रहने लगी और उसका रागसी बायाका स्फातर हा गया।

कभी कभी जो कार्य राम स्वयं नहीं कर सकते, वह रामनाम कर सकता है। उसी तरह जिन प्राणियोंको राम नहीं तार सकते, उन्हें भी रामके भक्त तार सकते हैं। क्योंकि प्रभुमें तो केवल प्रभुता ही रहती है, परन्तु प्रभुभक्तके हृदयमें प्रभु और उनकी प्रभुता दोनोंका वास होता है। सगुण प्रभुमें कुछ अंश तक देहका भान भी होता है, परन्तु सगुण भक्त तो काया और माया सब कुछ निर्गुणको ही समर्पित कर देता है। प्रभुनामके सिवा और किसी वस्तुमें उसकी आसक्ति नहीं होती।

।

४५

सीताजीकी कसौटी

अगोक वाटिकामें आते ही लकापति रावण गरजा “सीता, सीता! अब भी तू ममज्ञ जा। अभी तक मैंने एक स्त्रीके नाते तेरी प्रतिष्ठाकी रक्षा की है। तेरे स्वमानकी रक्षा करनेके लिए मैं अपने स्वभावके विरुद्ध जाकर भी अधिकसे अधिक नम्र रहा हूँ। परन्तु अब मेरा धीरज खूट गया है। आजसे पहले तूने मेरी बात मान ली होती, तो तेरा स्थान मेरे अन्तःपुरमें सबसे पहला होता। लेकिन तूने हाथमें आये मुवर्ण अवसरको हठ करके खो दिया है। केवल तेरे ही कारण अपनी प्राण-वल्लभा मदोदरीके कितने ही कठोर वचन मुझे सहन करने पड़े। लेकिन अब मुझे लगता है कि तू इस तरह नहीं मानेगी। तेरे लिए अब मुझे पशुबलका ही आश्रय लेना पड़ेगा।”

अभी तक पीठ फेरकर बैठी हुई जानकीजीने अब रावणके सामने मुह किया, परन्तु तिनकेकी ओट रखकर। इस अपमानसे तो रावण आगबबूला हो गया। खड़े होकर उसने धरती पर एक पाव पछाड़ा और एक हाथ पर दूसरे हाथकी मुट्ठी मारी। धरती काप उठी। उसकी आवाजने सारे आकाशको गूँजा दिया। तुरन्त राक्षसों और राक्षसियोंका समूह दौड़ा आया। सारा वातावरण भयकर बन गया। जनक-पुत्रीने रामचन्द्रका स्मरण किया और स्वस्थ रहनेका प्रयत्न किया।

कुछ क्षण बाद फिरसे दात कटवटाता हुआ रावण बोला 'तू निसलिये मेरे सामने तिनका रखा है? अब सीताजी शांत न रह सकी। उनका आन्तरिक तेज प्रकट हुआ। रामपत्नीने कहा तुम्हारे प्रलोभना और कष्टाका मूल्य मेरी दृष्टिमें तणवत है। म यह भी कहूंगी कि इस तिनकेसे तुम्ह सच्ची नम्रता सीखनी चाहिये। विषयीमें आयी हुई नम्रता सच्ची नम्रता नहीं होती वह नारी-सुलभ कोमल भावना ओझो छलनेवाला कपट होता है।" इतना कहते कहते सीताजीका पुण्य प्रकोप भडक उठा मुझ बड़ा आश्चर्य होता है कि तुम्हारे जस लम्पटाके पल्ल मन्दोदरी जसी महानारिया कसे बध जाती होगी। तुम्हारे जसे नराधम केवल विषयके पीडे होने ह। तुम सारी नारियाका केवल उनके गरीरसे नापते हो और उस गरीरके मांस, रक्त और रूप पर ही तुम्हारी नारी भक्तिका आधार होता है। चक जाओ यहासे और अपनी आखा हाया और हृदय पर कालिल पोत लो।

इसके बाद तुरन्त ही ओषको गान्त करके सीताजी भावाधानमें आकर बाली रावण तुम वही रावण हो जिसन ब्रह्मचर्य प्रिय महाश्वके चरणामें अपना मस्तक अपन कर लिया था? कहा वह मन्मथ समरण करनवाला रावण और कहा यह धामर विषय-वामनाका पीडा रावण। अंतिम वाक्यन रावणरो रुजित कर लिया। उस सन्निधिका एकपत्नी-ग्रन्थ मान आया। परन्तु यह उन्मत्त स्मरण कब तक टिकता? अभिमान और विषय-वामनाका वह पूरा पूरा शिखर धन धुका था। वह कहन लगा वम सीता यह वनवाम बन् कर। गुरुगंगा जमी नारीजी अपनी आम्नाक सामन हुई दुगतिरो मग्नवाली भीना नू ही है? मल मेरी वह कहन थी परन्तु तेरी ता वह जानिरी थी।

रावणने इस कथन-वाक्यन जानरीको निम्तर कर लिया। वे वनन विज्ञान लिय विज्ञानमें नहीं उतरी था। उन्हें ता रावणने इन अनधिकारी कथनामें म भी मारकी बात निवाल लनी थी। व मोक्षमें पर नई। थोड़ी रुजित भी हुई। उन्हें अपनी गन्धी गमामें आ गई। गुरुगंगाने भीनाजीकी उन्मिषिनिमें सन्ध्याम जा लम्पटा

दिखाई, वह नारी-जातिके लिए महान कलककी बात थी। राम और लक्ष्मण जैसे महामानवोंके सामने ऐसा दुराचरण और भी बुरा कहा जायगा। फिर भी सीताजीने भूल की थी। अपनी जातिकी एक सदस्याके बुरे व्यवहारके लिए प्रायश्चित्त करनेके बदले उसके साथ लक्ष्मणके व्यवहारसे उन्होंने आश्वासन अनुभव किया। इतना ही नहीं, अपने सामने लक्ष्मणने शूर्पणखाको जो शारीरिक दण्ड दिया, उसके लिए गौरवका अनुभव किया। समस्त नारी-जातिकी दृष्टिसे यह गलती सीताजीके समान विश्व-सन्नारीके लिए साधारण नहीं मानी जायगी। अपनी इस गलतीके साथ सीताजीको स्वर्णमृगके लिए अपना मोह भी याद हो आया। एक ओर यह सोचकर उन्हें सन्तोष होने लगा कि मुझे अपनी गलतीका उचित बदला मिल रहा है, दूसरी ओर अपनी गलतीके स्मरणसे दुःख भी होने लगा। उन्होंने अपनी आखें नीचे झुका ली। रावणको जानकीके इस व्यवहारमें आशाके चिह्न दिखाई दिये। जगतकी घटनाओंको सब लोग अपने अपने मापदण्डसे ही मापते हैं। रावणने तत्काल तो सीताजीके पाससे चले जानेका निर्णय किया। जाते जाते वह बोला गया “अभी भी मैं तुझे अधिक सोचनेका समय देता हूँ। अब मेरी शरणमें आये बिना तेरे लिए दूसरा कोई चारा नहीं है।”

इतना कहकर वह राक्षसों और राक्षसियोंके सामने देखकर बोला “हमारी लाज लेनेवाले पुरुषों और लिवानेवाली इस नारीसे हम पूरा पूरा बदला लेंगे। रामकी हत्याका खतरा उठाकर भी हमें सीताको यह दिखा देना है कि उसका अपना हित अब किस बातमें है। राक्षसियों, तुम्हें इस मानव-नारीको अब दिखा देना चाहिये कि तुम्हारी नगरीकी एक नारीकी दुर्दशा करनेवाली इस सीताकी कैसी दुर्दशा होती है।” सारे राक्षस और राक्षसिया हर्षसे उन्मत्त हो गये। उन सबने तालियोंकी गड़गड़ाहटके बीच रावणके शब्दोंका स्वागत किया। रावण जैसे सर्वसत्ताधारी भोली-भाली प्रजाको भुलावेमें डालकर इसी तरह उसे अपने हाथका खिलौना बना लेते हैं।

रामभक्त हनुमान सीताजीकी इस कड़ी कसौटीके समय लका-गढ़में प्रवेश करके धीमी गतिसे कदम उठा रहे थे। उन बेचारोंको

क्या पता कि सोनेकी इस लका नगरीमें विश्ववन्द्य सीताजीका कितना कितनी कसोटियामें से पार होना पडा है और आज भी पार हाना पड रहा है।

४६

विभीषण

हनुमानजी लका नगरीमें ता पट्ट च गये। परन्तु उस खबर व परेगानीमें पड गय। नगरीकी बनी बडी सड़कें राज भवनका ओर जा रही था। उसके मकान और मन्दिर सीधी पक्षिमें सप्रमाण और कलारमक उगस बने हुए थ। उनके गिबरा पर लग मुवण कल्ल मूयकी किरणाके पुजसे जगमगा रहे थ। नगरीकी गली गलीमें मनुष्या नागा और गधवोंकी ब्यायें अपने सौन्दर्यस ऋषि-मुनियाना भी माहित करती थी। अखाटामें पहलवान कमरतके दाव आजमात हुए एक-दूसरेको मल्लयुद्धकी चुनौती दे रहे थे।

ये सारे दृश्य देखत देखत हनुमानजी धीमी गत गतिम जाग बड रहे थ। इतनमें एक पवित्र मन्दिर जम सुखवर भवन पर उनकी दृष्टि पडी। उसके आगनमें तुलसीका क्यारा बना हुआ था। उसके पास ही एक सुन्दर हृष्टपुष्ट गाय अपने स्तनपान करते बछ्का ममनासे चाट रही थी। लिपी-पुती दीवालके ऊपर राम शब्द धान्कर उममें रग पूरा गया था। हनुमानजीका मन बोल उठा जहा इस घरका वानावरण कसा पवित्र है। मन सीतामाताम मिलनक लिए आनुर है फिर भी अन्त करण मुच यहा क्या रोक रहा है? गने हृदय-बल्लभ रामचन्द्रजीक पास जाने पर मुचे जमी पवित्रताका जनभव होता है वैसा ही सुख पवित्रताका अनुभव हृदयको इस स्थानमें हा रहा है। इस मुवणपुरीमें (मुवण जिम अत्यन्त प्रिय है ऐसी नगरामें) चारा जोर स्वाय और अनीनिका वाग्जाला निखा दना है। ऐसी नगरीमें इतना पवित्र वानावरण निकाय रखनवाला कौन भक्त यहा रहता होगा?

हनुमानजीने ब्राह्मणका रूप धारण करके विभीषणके आगनमें वेश किया। विभीषणको भी स्वप्नमें ये ही विचार आये थे। वे पैसे बावरे हो गये और स्वप्नमें उन्होंने जो कुछ देखा था उसे प्रत्यक्ष अनुभव करते मालूम हुए। वे बोल उठे। “प्रभु, मैं बहुत समयसे आपकी प्रतीक्षा कर रहा हूँ। राक्षसोंकी इस नगरीमें, जहाँ खुलेआम त्य और मानवताकी हत्या हो रही है, मैं अब अधिक समय नहीं रह सकूँगा।” विभीषण ब्राह्मण-वेशधारी हनुमानको राम समझकर ही ये दिगार प्रकट कर रहे थे।

हनुमानने विभीषणके भावोंको समझ लिया। उन्होंने तुरन्त पण्डिता की “मित्र, आप जिस महामानवका पवित्र स्मरण कर रहे हैं, उनका मैं केवल एक दूतमात्र हूँ। मैं सीतामाताकी शोधमें यहाँ आया हूँ। आप मुझे बतायेंगे कि उन्हें कहाँ रखा गया है? परन्तु एक बात आपसे पूछनेका मन होता है। ऐसे राक्षसोंके बीच आप यहाँ कैसे रह सकते हैं?”

विभीषणने उत्तर दिया

सुनहु पवनसुत रहनि हमारी।

जिमि दसनन मह जीभ विचारी॥

“पवन-सुत, मेरे रहनेकी बात सुनो। मैं यहाँ उसी स्थितिमें रहता हूँ, जिस स्थितिमें दातोंके बीच बेचारी जीभको रहना पड़ता है।

विभीषण रावणके छोटे भाई थे, परन्तु उनकी विचार-सरणी रावण और रावणके खुशामदी तंत्रसे बिल्कुल विरुद्ध थी। रावण सीताजीका अपहरण करके उन्हें लकामें ले आया तभीसे उन्हें अपार वेदना हो रही थी। रावणकी तानाशाहीकी सबके मन पर ऐसी भारी आक जमी हुई थी कि कोई लकावासी रावण या रावणके तंत्रके खेलाफ एक शब्द भी बोलनेकी हिम्मत नहीं कर पाता था। सारे राजाजन भीतर ही भीतर कुढ़कर, मन मसोसकर, बैठे रहते थे। विभीषणके मनमें अवर्णनीय मन्थन चलता रहता था। अभी तो वे अपने जीवनको शुद्ध बनाने और शुद्ध रखनेकी सावधानी रखकर ही सन्तोष

मातन थ अधिक अधिक अपने मित्रों सामने रावण के अत्याचारी चर्चा करते उन्हें अपनी बातों में हानना विश्वास बरा देते थे।

मृत्यु उनका परम वर था। इसी वक्त की नींव पर वे अपने शिवालयों की स्थापना बना रहे थे। उनके अमरपुत्रों द्वारा अनुभव करने के बाद माधव के जीवन में ऐसा एक समय आ जाता है जब वही चमत्कारपूर्ण घटना हो जाती है। हनुमान का मिला विभीषण के जीवन की लम्बी हो एक चमत्कारित घटना थी।

अतः विभीषण की भवभूमिका हनुमान के रूप में उनके वरदानों में परम-भुक्तने प्रमाण दिया।

४७

त्रिजटा

विभीषण का भवन छोड़कर हनुमान आगे बढ़ा। शिवालयों में आगे बढ़े थे। उनके वे अपने गन्तव्य स्थान पर पहुँच गये। एक-एक साताजीव सामने चल आता उन्हें उचित नहीं लगा। इसलिए वे बुधवार रात के वन पर चढ़कर बैठ गये और सीताजी की गतिविधि को देखने लगे।

उस रात की नीचे जानकी बठी थी। उनका मुख चिन्ता से भरा हुआ था। सुन्दर होत हुए भी वह वन हुए बाला की स्टे मुह पर इस उमर उठ रही थी। आकाश आसू भरा मानो हनुमान के आगे राम वियोग की जाग से भूत गये थे। वनाक भारत बोलिल धनी हुई आगे जमीन पर झुक गई था।

कुछ ही क्षणों में सीताजी का सारा शरीर इस तरह काप उठा मानो कोई गहरा आघात लगा हो। वे एक-एक सड़ी हो गई। इधर उधर दृष्टि घुमाई। आसपास की राक्षसों की निद्रा को मादूम हुई। सीताजी अपने हाथों में मूली रख दिया चमक लगे। धाडा हा देर में उन्होंने लकड़ियाँ ढेर लगा दिया। उस दर में आगे लगाने का प्रयत्न जानकी कर रही थी कि एक राक्षस चौंकर उठ बैठी। उसका नाम

त्रिजटा था। त्रिजटाका मन मानवताकी ओर मुड़ चुका था। सीताजीके प्रति उसके मनमें बड़ा आदर पैदा हो गया था, यद्यपि रावणका कोप सहकर सीताजीकी सहायता करने जितना नैतिक साहस उसमें नहीं था। लेकिन निगरानी रखनेका काम करते हुए भी वह सीताजीकी सुविधाओका यथासंभव ध्यान रखकर उनकी सेवा करती थी। त्रिजटाने अपनी जाग्रत विवेक-बुद्धिसे प्रसंगकी गंभीरताको तुरन्त समझ लिया। वह अपनी जगहसे उठी और बिना आवाज किये धीमी चालसे सीताजीके पास पहुँच गई। दोनों हाथोंसे प्रेमपूर्वक उसने जानकीका हाथ पकड़ लिया। पहले तो जानकी चौकी। त्रिजटाका प्रेम सीताजीसे छिपा नहीं था, परन्तु इस समय उन्हें त्रिजटाका हस्तक्षेप पसन्द नहीं आया। न चाहने पर भी उनके मुहसे ये वचन निकल पड़े। “छोड़ दे त्रिजटा, तू मुझे छोड़ दे। इस स्थितिमें जीना मुझे जरा भी पसन्द नहीं। कुछ ही दिनोंमें रावण फिर आयेगा। आकर वह क्या करेगा, यही विचार मुझे अकुला देता है।”

“जानकीजी, मैं आपको उपदेश देनेकी जरा भी योग्यता नहीं रखती। फिर भी कुछ बातें कहनेकी धृष्टता मैं करूंगी (१) आत्म-हत्यासे बड़ा पाप दूसरा कोई नहीं हो सकता। (२) रावणके भयसे त्रस्त होकर आप यह मार्ग ले, तो यह आपके जैसी समर्थ सतीके लिए लज्जाकी बात है। जगतकी नारियाँ आपके इस कृत्यसे क्या सीख लेगी? (३) रावणके हृदयको हिलाकर उसे जगानेमें आपको जो हाथ बटाना है, वह आपके न रहनेके बाद कौन बटायेंगा? (४) आज तक रामचन्द्रके प्रति आपके मनमें जो अटल श्रद्धा थी, वह एकाएक कहा चली गई? (५) ससारका नारी-जगत — आजका और भविष्यका — आपकी इस सेवाके बिना क्या करेगा, उसकी क्या दशा होगी?”

इनमें से कुछ बातोंने तो रामप्रिया सीता पर जादूका-सा असर किया। कुछ क्षण तक वे अवाक् बनी रही। उनके मनमें अनेक विचार उठे, पनपे और शान्त हो गये।

हनुमान यह दृश्य देखकर स्तब्ध हो उठे थे। परन्तु सीताजीको स्वस्थ देखकर वे भी निश्चिन्त हुए। एक सामान्य दासी राक्षसीके

मनमें भी ऐसा मानवना एसी कुशाग्र बुद्धि, एसी यावप्रियता और एसी आत्मीयता हो सनती है यह देखकर अनुमानने हृदयमें नारी समाजके लिए बहुत बड़ी जागा बधी।

बबल निमित्त भर मिलना चाहिये फिर ता नारीक भीतर छिपी परा बुद्धि कोमलता और करुणा चाहे जिस स्थानमें चाह जिस देहमें और चाहे जिस कालमें चमके बिना नहीं रहती। गीतामें भगवानने इसीलिए गाया हागा “नरमें भ हृदयस्थमें वास करता हू जब कि नारी हृदयमें भ कीर्ति गाभा बाणी स्मरण गकिन मघा धय क्षमा जाति मदगुणाने साथ सालहा कल्याणमें चमक उठता हू।

४८

मुद्रिका तो रामकी है।

मिजटाक वचना और हृदयके स्नहस सीताजी गन्गद हा गइ। अपने हृदयकी कमजोरीके लिए उ ह थोडा परचात्ताप भी हा जाया। ठीक उसी समय उनकी गान्में एक मुद्रिका आकर गिरी। व चौक पड़ी। मुद्रिकाको हाथमें लन ही रामकी स्मृतिया ताजी हा गइ। सारा गरीर रोमांचित हो उठा। कुछ क्षणके लिए ता जानकाजी अगाध प्रणय-सागरमें डूब गइ। फिर उहान आखें सालकर ऊपर बक्षकी जार देखा। जासपास भी नजर दीछाई। परन्तु न तो कही प्राणप्रिय रामके दान हुए न किसी रामदूतके। रामभक्त हनुमान त्रिना त्रिले डुन स्थिर भावसे अगोच बक्षकी घटानार गाखा पर छिपे बठ थ और सीतामाताकी सारी चेष्टाआवा प्रकट हुए बिना भक्तकी भावनास देख रह थे।

सीताजी मन ही मन बोल उठा मेर राम उमी स्वस्थ प्रमन्न स्थितिमें हागे जिसमें मुझ उह छोटना पडा था? यह कय मुद्रिका तो रामके कर-कमलमें सग मुशोभिन रहती थी। यहां कस जायी यह? किमलिए जायी?

प्रेमियोंके हृदयमें ऐसी शकाकी तरंगें इतनी तेज गतिसे क्यों उठती होंगी ? क्या प्रेमियोंके विरह-मिलन हर्ष और शोकके द्वन्द्वोंसे ही घिरे रहते होंगे ?

हनुमान सीताजीकी मन स्थितिको ताड़ गये । वे प्रकट हुए और सीतामाताके चरण-कमलोमें सिर रखकर सिसकने लगे । जनक-पुत्रीने अपने वरद हस्तसे हनुमानके सिरको सहलाया । उनके इस वात्सल्यसे तो हनुमान शान्त होनेके वजाय छोटे बालककी तरह फूट-फूटकर रोने लगे । माताके चरण आमुओंसे भीग गये । उन्होंने दोनों हाथोंसे हनुमानका सिर ऊंचा उठाया । हनुमान स्तब्ध भावसे माताके मुखकी ओर एकटक देखते रहे । अभी भी अश्रु-प्रवाह हनुमानकी आँखोंसे सतत वह रहा था । सीतामाताके सिवा एक और भी पात्र इस पवित्र दृश्यका साक्षी था — वह थी विजटा । करुण रसके वे कैसे मीठे क्षण थे !

हृदय शान्त और स्वस्थ होनेके बाद सीताजीने पूछा “ भाई, तू कौन है ? कहाँसे आया है ? ”

हनुमान बोले “ माताजी, मैं आपका धर्मपुत्र हूँ । मेरे रामने मुझे आपके पास सन्देशवाहकके रूपमें भेजा है । ” सीताजीने मातृ-वात्सल्यसे पुत्रको छातीसे लगा लिया और उस पर एकके बाद एक प्रश्नोंकी वर्षा कर दी “ भाई, तेरा नाम क्या है ? तेरी और रामकी भेट कैसे हुई ? इस समय वे कहाँ हैं ? वे मुझे भूल तो नहीं गये ? मेरी याद यदि उन्हें आती हो तब तो अपार शक्ति रखनेवाले रामको स्वयं मेरे पास आनेमें क्या देर लग सकती है ? परन्तु मेरी याद उन्हें क्यों आने लगी ? वे तो अब मेरा बोझ न रहनेसे आनन्दमें मग्न रहते होंगे । ” इतना कहते कहते सीताजीकी आँखें छलछला आईं ।

“ माताजी, मेरा नाम हनुमान है । मैं माता अजनीका अगजात पुत्र हूँ । सुग्रीवके साथ किष्किन्ध्यामें रहता हूँ । सुग्रीवके दुःखोंका क्या वर्णन करूँ ? परन्तु भगवान रामकी कृपासे सुग्रीव पर छाये हुए विपत्तिके सारे बादल बिखर गये । सुग्रीवके ज्येष्ठ भ्राता वालिका अवसान हो गया । परन्तु सारा परिवार फिरसे प्रेमके वनवनमें बंध गया ।

एक अनेक लाख-कल्याणके काय करते हुए रामचन्द्रजी प्रवर्षण गिरि पर एक समय निवास करते हैं। अनेक भाग्यशाली मानव उनकी चरण सेवा करते हैं। म उनमें सबसे निचली श्रेणीका एक तुच्छ सेवक है। म और मेरे अनेक योद्धा साथी आपकी शोध करनेके लिए जाये हुए हैं। भगवान रामकी अपार कृपा और मेरे प्रिय माथियाकी उदारताके कारण मेरे जैसे तुच्छ सेवकको इस सत्कारा मीभाग्य प्राप्त हुआ है। वास्तवमें म इस सेवाके योग्य जरा भी नहीं हूँ। रामचन्द्रकी कृपासे ही समुद्र लाघकर म यहाँ तक आ सका हूँ और आपकी सेवामें उपस्थित हो सका हूँ।”

हनुमानके एक एक शब्दमें नम्रता टपक रही थी। अब उन्होंने रामकी जानकी प्रमत्ता अपनी भर्षादामें रह कर वृणन आरम्भ किया।

माताजी मने गुप्त रहकर आपमें रघुपतिके विषयमें जो प्रगाढ़ ममता दया उमीका प्रतिबिम्ब भगवान राममें मने देखा है। लेकिन ये पुरस् मुझ दिवक और भर्षाका पालन करने गाय ही कभी उसे बाहर प्रस्तुत करने दन ह। परन्तु मर जम निवट रहनेवाले बालकम उनकी यह ममता छिपी नहीं रहना। जिना किसी अतिशयाक्तिने म इतना ता वन सकता हूँ कि आपका प्रेम यदि मटगी है ता रामका प्रेम गान्त जल मरावर है। उन असाधारण पुष्प पर मरा अगाध और सहज श्रद्धा जाने ए भी आपका ये निरान जा रहन करत रहने थ उसने म परगानीमें पन जाता था। परन्तु आपकी स्थिति ऐतदक वा मुझ प्रमत्त विनानका गुन रम्य क्षण भरमें ममत्तमें आ गया। मेरे जैसे अविवाहितका मम्याप्रमत्त निव्य प्रमत्ता जान कम हो सकता है?” अनानत अग्री बाग्यारा कुछ तरह गि रोनी और जानकीके लोचन दन आ गये।

प्रमाजनारी ममा मकर प्रमत्तमनिया कुछ नी दानामें सन्ध जिम अगाध और अमीम आनन्दका जनमन वगना = वन विन्य मुक्तिरी मा तन्य दना म्मा है। प्रम प्रम और प्रम! प्रमत्त गिवा दम अगाध मगाधमें दूसरा वीनगा मारनून तव है?

लंका-रहन

हनुमानसे मिलकर, उनके मुहसे रामकी बातें सुनकर तथा रामकी मुद्रिका देखकर जानकीके हृदयमें प्रेम-सागर हिलोरे लेने लगा। उसके प्रभावमें एक क्षणके लिए सीताजीके मनमें यह विचार उठा — हनुमान जब इतना शक्तिशाली है, तो वह मुझे अपने कन्धे पर बैठाकर तुरन्त रामके पास क्यों नहीं ले जा सकता? लेकिन कुछ ही क्षणोंमें वे स्वस्थ हो गईं। उन्हें इस सत्यका भान हो गया कि 'प्रेमके मार्गमें विरहकी व्यथा अनिवार्य है, कर्तव्य अथवा सिद्धान्तके भगमें प्रेम नहीं परन्तु मोह है।' अपने मनकी यह कमजोरी उन्होंने हनुमानके सामने प्रकट भी कर दी।

हनुमान बोले: "माताजी, आप तो स्वयं योगेश्वरी हैं। जिस योगीकी आत्मा जाग्रत है, उसे वह आत्मा ही जगा देती है। मेरे मनमें भी ऐसा विचार आया था कि एकाध बार राम स्वयं आकर गुप्त रूपमें आपसे मिल जाय तो कितना अच्छा हो! किन्तु इसमें मुझे चोरीका महादोष दिखाई दिया। आपको भी यही लगता है न, माताजी?"

सीताजीने कहा: "चोरीका महादोष तो इसमें है ही, परन्तु सारे ससारकी दृष्टिसे देखा जाय तो अपनेको समर्थ मानकर जगतको डरानेवाले रावणके अन्यायका सामना न करनेकी निर्बलता भी इसमें है। विश्व-भूषण राघव स्वप्नमें भी ऐसा करनेके लिए तैयार नहीं होंगे।"

इतनी बातें हो जानेके बाद एकाएक जानकीने हनुमानसे पूछा. "बेटा, तुम्हारे भोजनका क्या होगा?"

"मेरे भोजनकी चिन्ता आप न करे, माताजी। मैं इन वृक्षोंके नीचे गिरे हुए फल खाकर और मीठा जल पीकर तृप्त हो जाऊंगा।"

भूय गान्त वरुने वाद हनुमान जानकी तपारा करन ला
इतनम जवानक राममान आनर हनुमानका पवड लिया और कहा
तू परगनी लगता है। चल हमारे राजमाहलके पास।

हनुमान जिस अवसरकी खोजमें था वह अनायास मिल गया।
सम उह अपार आनन्द हुआ। उहान कुछ समयक लिए सीताजीम
जानकी अनुमति ल ली। अपन कामल स्वभावक कारण साताजीको
स घटनास दुःख हुआ। परन्तु हनुमानकी हिम्मतन उनका दुःख कु
श क्षणमें दूर कर दिया। तज चालस चलकर हनुमानन ऊचा मस्तक
रावन हुए भी नम्र हृदयन रावणकी राजसभामें प्रवण किया।

रावणकी राजसभामें घमडका झूठी खुशामतका जोर विहृत
विलासिनाका बोलबाला था। हनुमानका देखते ही रावणका हृदय
पराजित हो गया। परन्तु इस कामल भावनाको रावणके भीतरका
दत्यभाव कब तक टिकन देता? उसन हुकार किया जरे परदगी
याना तू कौन है और किसलिए यहा आया है?

किसी भी तरहके भय या घबराहटके बिना हनुमानन तुरन्त
उत्तर लिया मैं रामका अत्यन्त तुच्छ सेवक और सनिक हूँ। रावण
राजाक अयाय और जनीतिकी गिकार बनी हुई एक महासतीकी
गोधम यहा आया हूँ।

य वचन सुनकर रावणका राम रोम जल उठा। उसन और कोई
प्रश्न किय बिना ही हनुमानको जिन्दा जला डालनकी आज्ञा अपन अनु
चराको दी। अनुचरोन हनुमानक वस्त्रामें जाग लगा दी। लेकिन
हनुमान कोई जलनवाल था? उनक वस्त्र जहर जलने लग परन्तु
उनक शरीरको न जान क्या काई जाच न आई। उहान अपनी
कामाको फूलके समान हलकी बनाकर जहा तहा उटना शुरू कर दिया
और खलते ही दलने सारी लका जागकी लपटास घिर गई।

अभिमानी रावणन जलती लकाकी आग बुझानके अनेक प्रयत्न
किय परन्तु काई परिणाम न हुआ। एक जगह आग बुझती थी तो
दूसरी जगह ज्वालायें घघक उठती थी। जो मेघ रावणके पास सदा
रहता और उसकी सेवा करता था वह मेघ भी इस आगको गान्त

करनेमें असफल रहा। रावणने अपने पासकी अनेक वैज्ञानिक शक्तियोंका उपयोग इस भयकर आगको बुझानेमें किया, परन्तु इस समय उसकी एक भी शक्ति काममें नहीं आई। सब बेकार गई। अन्तमें रावणने अपने छोटे भाई विभीषणकी सहायता मागी।

विभीषणके पास दूसरी कोई करामात नहीं थी, दूसरा कोई विज्ञान भी नहीं था। केवल उनके हर श्वासमें नीतिमत्ता थी, नम्रता थी और लकावासीके नाते लकाके प्रति कर्तव्य-पालन करनेकी बुद्धि थी। विभीषण भगवानका नाम लेकर आग बुझानेका प्रयत्न शुरू करे, उससे पहले ही आग स्वयं बुझ गई। प्रकृतिने रावणके अभिमानका पारा नीचे उतार दिया। रावणको अपनी जिन शक्तियों पर इतना अभिमान था, जिन शक्तियोंका उसे पूरा भरोसा था, उन शक्तियोंकी ऐसी निष्फलता देखकर वह थोड़ी देरके लिए गहरे विचारमें पड़ गया। परन्तु अभी वह ऐसी कक्षाको नहीं पहुँचा था कि यह नम्रता अथवा विराग-वृत्ति उसके भीतर स्थायी रूपमें टिक सके, यद्यपि रावण जैसे अभिमानके अवतारोके अभिमानको थोड़ा भी घक्का लगे, तो वह मानव-संस्कृतिकी दृष्टिसे जगतको होनेवाला एक बड़ा लाभ ही माना जायगा।

अब हनुमान सीताजीके पास आये और उनके चरणोंमें प्रणाम किया। अपने लका-दहनके कृत्यकी बात उन्हें बताई और उसके लिए पश्चात्ताप करने लगे।

“माताजी, लकावासी प्रजाको आगके सकटका भोग बनानेके लिए मुझे गहरा दुःख है। यद्यपि नगरीका एक भी मनुष्य या पशु आगसे मरा नहीं, फिर भी असंख्य छोटे छोटे जीवोंका और बहुमूल्य सामग्रीका नाश तो हुआ ही। लेकिन मैं क्या करता? प्रकृतिने ही मुझे इसमें निमित्त बनाया।”

जानकीजीने हनुमानके सिर पर हाथ फेरकर कहा, “भाई, आज मैं लकामें हू इसलिए मुझे भी इस बातका दुःख है। परन्तु तुम इसका अधिक शोक मत करो। तुम्हारी रामभक्ति और पश्चात्ताप तुम्हें ऐसे नैमित्तिक रूपसे होनेवाले अनासक्त पापके दुःखद परिणामोंसे

उवार लेगे। तुम्हारी सात्त्विक वृत्तियाँ विजय हो! अब तुम निश्चिन्त होकर जाओ। मेरे हृदय बल्लभ रामस कहना कि मेरी जरा भी चिन्ता न कर। मेरे भाई लक्ष्मणको मेरे हृदयका स्नेह पहुँचाना।

इनना कहकर सीताजीन राम मुद्रिकाके बन्नेमें अपनी चूड़ामणि निवालकर हनुमानको दी और रामके चरणोंमें सीताकी स्मृतिक रूपमें अर्पण करनेको कहा। हनुमानने भस्त्व झुकाकर चूड़ामणि हाथमें ली। उनकी आँखोंमें हँस और विरहक आँसू उमड़ आय। परन्तु मनको मजबूत बनाकर उठाने सीताजीस विदा ली। सीताजी बड़ी दूर तक हनुमानको निहारती रही।

५०

लक्ष्मणका स्वप्न

बड़ भया जाज तो मने अपनी जानकी माताके मानो प्रत्यक्ष दान किया। परन्तु वे बड़ी उदास और खिन्न थी। राखव, क्या स्वप्न भी सत्य हो सकता है?

अरण्योपस पहले रामके पवित्र दशन करते करते लक्ष्मणके मुहस ये गन्ध निकल पड़े।

राम भाई स्वप्न भी एक अवस्था ही है। स्वप्नमें बाहरकी आँखें बंद हो जाती हैं और भीतरकी आँखें खुल जाती हैं। बाहरकी आँखें देखी हुई वस्तुके भी अनेक पहलू होते हैं। एक मनुष्यको जो पहलू सत्य मालूम होता है वह दूसरेको सत्य न भी लग। स्वप्नको भी यह बात लागू होती है। सब पूछा जाय तो समूचा ससार एक स्वप्न ही है। सीता मैं और तुम अलग अलग तीन मालूम हान हैं लेकिन एक दृष्टिसे देखें तो हम तीना एक ही हैं। अयोध्या छाड़नके बाद हम तीनाही। एक-दूसरेके विचारोंके सिवा दूसराके विचार गायब हो बची आते हैं। यही वाँ प्रतिबिम्ब हमारे स्वप्नमें पड़ यह स्वाभाविक है। मरी तो पिछड़ कुछ जिनसे यह स्थिति हो गई है कि हनुमान

और सीताके विचारोके सिवा और कोई विचार ही मनमें नहीं आते। मस्तिष्क पर कुछ बोझ-सा भी बना रहता है। परन्तु हृदयकी गहराईमें मुझे पूरा विश्वास है कि सीताका बाल भी वाका नहीं होगा, भले वह कहीं भी हो और कैसी भी परिस्थितिमें हो। अब तुम्हीं बताओ कि इस विचारके सामने स्वप्नके सीता-मिलनका हर्ष कितने समय तक टिक सकता है? ”

हर्षसे पागल बने हुए बाल-स्वभावी लक्ष्मण रामके वचन सुनकर कुछ क्षणके लिए अवाक् हो गये। उनके निर्दोष मनके सामने अयोध्याके रामको राजगद्दी देनेके मंगल प्रसंगसे लेकर आज तकके अनेक प्रसंग-चित्र एक साथ आकर खड़े हो गये।

लक्ष्मणकी मनस्थितिको रामने समझ लिया। वे जानते थे कि लक्ष्मणकी मनोदशावालेको मन्थनामृतका बिन्दु ही दिया जाना चाहिये। तुरन्त उन्होंने लक्ष्मणका कन्धा पकड़कर उनके माथे पर अपना दाहिना हाथ रखा। दोनों भाई पर्णकुटीके बाहर आये और आकाशके सामने देखने लगे। पूर्व दिशासे सूर्य-नारायणकी सवारी तेजीसे चली आ रही थी। इस दृश्यने लक्ष्मणके मनमें पुनः तेजस्विनी आशाका संचार किया। वे अपनी दिनचर्यामें उत्साहपूर्वक जुट गये। इतनेमें सुग्रीव आ पहुँचे। भगवान् रामको दण्डवत् प्रणाम करनेके बाद उन्होंने राजनीतिसे सम्बन्ध रखनेवाली कुछ बातें कीं। फिर भविष्य-सम्बन्धी जो थोड़े शुभ सूचन उन्हें मिले थे उनकी जानकारी सीतापति रामको कराई।

✽

‘जय सियाराम ! जय सियाराम ! जय सियाराम !’ की मंगल धुनका उच्चारण करते हुए हनुमानजी समुद्रके इस किनारे सैनिकोंके बीच आकर खड़े हो गये। उन्हें देखकर सब आश्चर्यचकित हो गये। शिथिल और निराश बने हुए प्रत्येक सैनिकमें हनुमानके आ जानेसे नये प्राणोंका संचार हो गया। सबमें नयी शक्ति आ गई। सब लकाकी और सीताजीकी बातें सुननेमें लीन हो गये। सबके बीचमें बैठे हुए हनुमानने आरम्भसे अतः तक सारी बातें कह सुनाईं। उनके एक एक

वाक्यम मानो विविध रम मूर्तिमत हो रहे थे। कुछ देख लिए श्रोताओं की आत्माएं बोलने का धम लाल हो जातीं। क्षणभंगू के लिए उन्हें रोमांच हो जाता। कुछ क्षणों के लिए उनकी आत्माएं आसुओं से छूटकर उठतीं। तो कुछ क्षणों के लिए सारी महशुसों में अट्टहास की स्फुरत दौड़ जाती। इतना मेघसवाका लय मिलन पर भी समय लकामें जाग लग गई यह जानकर तो सबके आश्चर्य का पार न रहा। इन सब कामों के पीछे रामरूपी सत्य के प्रभाव के सिवा और कुछ श्रोताओं की जिंदाई नहीं लिया। जल में जिस धाव के लिए मन जाये वे उसमें सफलता मित्रता सबके हृदय आनंद से नाच उठ।

एकाध पहर उस प्रकार वाता में ही बीत जाने के बाद उनमें से एक ने भूचक्रा स्मरण कराया। सब सज हो गए और पास के मधुवन में पहुंच गए। विविध प्रकार के फलामे लद हुए मधुवन की मनोहर गोभा देखन ही बनती थी। पेट भर कर सबन मीठ एक साथ खेज-कूदकर मनागजन भी किया और बड़े रात सुखपूर्वक वहां बिताई।

सबसे सब प्रस्थान करनेवाले थे। लेकिन हनुमान ने एक बात सुनाई। हम इस स्थान के बड़े ऋणी हैं। इस ऋण को उतारने के लिए उस गिराल तरावर के आसपास हम एक सुन्दर चबूतरा बना दें जो हमारे श्रम का स्मारक होगा। सबने प्रमत्त उनसे उस प्रस्ताव का स्वागत किया। सबड़ा सनिकोवा विवक्षुण श्रम इस कार्य में लग गया फिर क्या देर लगती? देखते ही देखते चबूतरा तैयार हो गया। और तो पहर के बाद सबने विविध धानी लिये प्रयाण किया।

अनेक सुन्दर दृश्य देखते देखते तथा तरह तरह से स्मृतिचित्र बनाते बनाते इस बार सब लोग दूसरे मास में लौट रहे थे। जब कभी साधा साग जाता तब सनिक नाना प्रकार की बातों में रम जाते थे। कबल एक हनुमान ही विचारमान रहते थे। उनके मन में यह मथन चला रहता था कि लकामें जाकर मन जा कुछ किया वह राम के सबको गोभा दे ऐसा हा था या वही मन भूल की?

मन्दोदरीका मन्थन

“वह्न त्रिजटा, इस वार तो तू बड़े लम्बे समयके वाद मिली। बता, सीताके क्या समाचार हैं? उनके सन्धे समाचार तेरे सिवा दूसरे किसीसे जाननेको नहीं मिल सकते। मनमें बहुत वार यह विचार आता है कि एक वार मैं स्वयं जाऊँ और उनके दर्शन करके पावन बनूँ। परन्तु पतिकी अनुचित आज्ञाकी अवगणना करनेकी हिम्मत भी मेरी नहीं होती। यह भय भी बना रहता है कि चारों ओर फैले हुए सर्वसत्ताधारी शासनमें इक्के-दुक्के आदमीकी हिम्मतसे कोई काम नहीं हो सकता। मुझे अभी तक यह भी डर बना रहता है कि यह राक्षसी नगरी कहीं स्वयं सीताका ही भोग न ले ले।” कहते कहते मन्दोदरीका गला रुध गया। उसकी आँखें भर आयीं। त्रिजटाने अपने आँचलसे रानीके आँसू पोछकर उसे हिम्मत बधाई।

“सती, पहली बात तो यह है कि आप अब सीताजीकी जरा भी चिन्ता न करें। उनकी हत्या करनेकी शक्ति तो इस जगत्में मैं पहलेसे ही किसीमें नहीं मानती थी। अभी तक मुझे सीताजीकी ओरसे आत्महत्याका डर जरूर रहता था। परन्तु अब वह डर भी मिट गया। रामसेवक हनुमानके आ जानेके बाद तो अब मेरे मनमें यह महाभय पैठ गया है कि थोड़े ही समयमें लका पर भयकर आपत्ति आनेवाली है। आज भी लकापति समझकर सही मार्ग ग्रहण करें, तो यह महासंकट टाला जा सकता है। आप जरा अधिक कठोर बनकर महाराजको अपना कर्तव्य समझनेके लिए मजबूर कीजिये। नहीं तो अभी तक तो पौलस्त्य कुलकी कीर्तिको ही कलक लगा है, परन्तु अब कीर्तिके साथ मारे कुलका तथा निदोष सैनिकोंका भी नाश हो जायगा। इस विशाल सेनाके खर्चका भार अतमे तो हमारी प्रजा पर ही पड़ता है न! इस त्रास और इस संकटको टालनेकी शक्ति केवल

आपमें ही है। अतः इस बार मैं केवल सीताजीके कुशल समाचार ही देने नही आई हूँ। इस बार तो मैं आपसे यह प्रार्थना करने भी आई हूँ कि आप लकावासियोंके कुशल क्षमकी रक्षाका निमित्त बनें। विवश होकर ही मैंने छोटे मुहसे इतनी बात आपसे कही है। मैं अबिवेकके लिए मैं आपसे क्षमा मागती हूँ।'

मन्त्रोन्नी त्रिजटा तूने समय पर उचित बात कही है। तब तो यह जागाही निरा कल्पना ही नही है। इसमें मैं ठोस सत्यका स्वरूप हूँ। इसमें तब अबिवेक नही परन्तु सुविवेक है। वहन मैं भी यह समझ गई हूँ कि हनुमानके साथ छेड़छाड़ करनेकी जरा भी जरूरत नही थी। बाड़ीसी छेड़छाड़ करते ही सारी रक्तमें आग भस्म उठी। त्रिजटा भरा मन अपार कष्टकारी आगजल रहा है। लेकिन मैं क्या करूँ? गन्धर्व्यवस्थामें रक्तपति भरा एक एक यक्ष तोल-तोल कर स्वीकार करते हैं। परन्तु राजबाजमें भाँभरी बात उसी तरह स्वीकार करण या नही। इसमें मुझ सन्देह है। एक बात मैं जरूर कहूँगी। नील और मन्त्राचारका दुष्टिभ मन सीताजीके सम्बन्धमें नही। राजका बचाना पूरी आवश्यकता है। और उस मन्त्रमन्त्रालकी रक्षाके लिए यदि प्राण देनेकी भाँनौरन आप तो मैं अपने प्राण जपण करनेका तयार हूँ। मैं मरकर भी उनका मनीषकी रक्षा करूँगी।

अवसर देखकर त्रिजटन अपना हृदय बाण अधिन गाता

मन्त्राजीका अभी तक तो मुझ भी उमा लगता था कि हमारे जगत्तमाम्य प्रजापतिका राजनातिका बानामें नही पन्ना चान्दिय। लेकिन जब राजमता पर कोई अज्ञान नही रहता तब निरक्षर राजा

है, उसका कुछ तो प्रभाव उन पर पड़ेगा ही। महारानीजी, सामान्य परिस्थितियोंमें राजनीतिसे दूर रहना अच्छा है, परन्तु जब राज्य-व्यवस्था करनेवाले प्रमुख व्यक्तिके व्यवहारके साथ सम्पूर्ण राष्ट्रका भाग्य जुड़ जाता है, उस समय तो राजनीतिसे दूर रहा ही नहीं जा सकता। मैं तो मानती हूँ कि आज एक एक लकावासीको अपने महाराजसे कह देना चाहिये कि 'आप हमारे महाराज अवश्य हैं, परन्तु आपने सीताजीका हरण करके भयकर गलती की है। जब तक आप यह गलती नहीं सुधारेंगे तब तक आपके इस कार्यके प्रति अपना विरोध प्रकट करनेके लिए हम हड़ताल और उपवास करेंगे।''

त्रिजटाकी स्त्रीशक्ति उसके प्रत्येक शब्दसे प्रकट होती थी।

रानी मन्दोदरी बोली "वहन, धन्य है, तुझे धन्य है। बार बार धन्य है। तेरी इस बातचीतसे मुझे अपना भी एक दोष समझमें आ गया है। आज तक मैंने व्यक्तिगत शुद्धिकी रक्षाका दृढ़तासे प्रयत्न किया है, जिसके फलस्वरूप मैं अपने जीवनको तो शत-प्रतिशत शुद्ध रख सकी हूँ। परन्तु एक राजरानीके नाते लकाके राज्यतन्त्रमें भी मेरा कोई कर्तव्य है, यह मेरी समझमें नहीं आया था। आज मुझे अपना यह कर्तव्य समझमें आ गया है। मानव-समूहोंके साथ रहना और जीवन विताना हो, तो व्यक्तिगत शुद्धिके आग्रहके साथ समूहकी शुद्धिका प्रयत्न भी होना ही चाहिये। समूहकी शुद्धिके कार्यमें अकेली कठोरता ही काम नहीं दे सकती। उदारता तथा धीरजके साथ विनाश दृष्टिवाली सतत सावधानी और जागृतिकी भी जरूरत रहती है। मुझमें अभी इन सब सद्गुणोंका विकास नहीं हुआ है, इसीलिए 'लकापति मानेंगे या नहीं' इस भयसे मैं बहुतसी बातें उनसे कहनेमें हिचकिचाती हूँ। परन्तु अब केवल रानीके नाते ही नहीं बल्कि लकाके प्रजाजनके नाते भी मैं उनके कार्यका विरोध करूँगी। इसके कारण मेरी आज तककी पतिभक्ति पर पानी फिर जाय तो भले ही फिर जाय।"

मन्दोदरीके अन्तिम शब्दोंके पीछे दृढ़ताका जो भाव था, उसका भी त्रिजटा पर बहुत गहरा प्रभाव पड़ा। परन्तु उन शब्दोंके सच्चे रहस्यको वह नहीं समझ सकी। इसलिए वह रानीके आशीर्वाद लेकर अगोक

वाटिकाकी लिंगाभें तज गतिस बना तो जरूर परन्तु उसके मनमें यह प्रश्न बना रहा पतिमक्ति पर पानी फिर जाय तो भले फिर जाय य गल सतीने क्या कहें हागे ? इस वचनको बितना ही प्रयत्न करने पर भी वह समझ नहीं सकी। समझती भी कैसे ? प्राचीन रुद्रियाक जालमें पत्नी हुई लनाकी प्रजा मन्त्रोन्नीके इस काम पर घममगका आरोप लगावेगी, इसकी कल्पना त्रिजटाकी कैसे है। सकती थी ? इस समय तो उस समूचा विश्व आत्मवत् दिगई दता था।

लकाके सबसत्तापारी राजाके पाल पकी हुई रानी मन्दाग्री यह धान भगीभाति जानती थी कि सुवचन और मौजगोचमें डूबा हुआ प्रजा और राज्यक मन्त्रीगण सत्याग्रहके लिए तयार नहीं है। इतना ही नहीं य सब आमानीम टाल जा सकनवाल भावी महायुद्धका निमन्त्रण दनवाल महाराजक कुविचारा पर एकमतस अपनी स्वीकृतिना मुहर लगा देंगे।

५२

उमिला और माडवी

१

नहीं देख पाती। इस जगतमें मेरे जैसी हतभागिनी कौन होगी? मैंने अनेक लोगोके जीवनोको छिन्न-भिन्न कर डाला है। रामका वनवास, महाराजकी मृत्यु, अयोध्यामें उल्कापात, भरतकी हृदय-वेदना, मेरे साथ ही मेरी दो बहनो—कौशल्या और सुमित्राका वैधव्य। क्या क्या गिनाऊ, बेटो उर्मिला? मेरी समझमें ही नहीं आता कि मैं किसलिए जी रही हूँ।”

इतना कहते कहते कँकेयी रो पड़ी। भरतकी पत्नी मांडवी और उर्मिला अपने अपने आचलसे सासके आसू पोछने लगी और उन दोनोंकी आंखें भी छलछला आईं। नारीका हृदय अत्यन्त कोमल होता है। उसकी सक्रिय सहानुभूति तुरन्त प्रकट हो जाती है।

उर्मिला बोली “माताजी, आप इतनी दुःखी न हो। सच कहूँ तो मुझे किसी प्रकारका दुःख ही नहीं है। उल्टे मैं तो अपनेको भाग्यशाली मानती हूँ। सुमित्राजी, कौशल्याजी तथा आपकी सेवाका लाभ मुझे सदा मिलता है। यह कोई ऐसा-वैसा लाभ है? मेरी जेठानी मांडवीजीको ही देखिये। ये अपने जटाधारी पतिको प्रतिदिन देखकर अपने हृदयमें किस तरह शान्ति रख पाती होगी।”

“बहन उर्मिला, सच कहूँ तो जब मैं इस दृष्टिसे देखती हूँ तब मुझे लगता है कि मैं, तुझसे अधिक सुखी हूँ, क्योंकि मुझे प्रतिदिन कँकेयी-पुत्रके दर्शन करनेका सौभाग्य तो मिलता है। जब जब वे नदी-ग्रामसे चलकर अयोध्याके राज-दरबारमें पधारते हैं, तब तब इस झरोखेमें दूर खड़े रहकर भी उन्हें प्रत्यक्ष नमस्कार करनेका महालाभ मुझे अनायास ही मिल जाता है। इसके सिवा, जब वे माताओंको प्रणाम करनेके लिए रनिवासमें पधारते हैं तब उनकी चरण-रजका लाभ भी मुझे आसानीसे मिल जाता है।” मांडवीके प्रत्येक वचनसे तपस्याका तेज झर रहा था और यह भाव टपक रहा था कि वह उर्मिलासे ज्यादा सुखी है।

अहा, चरित्रका कैसा अद्भुत चमत्कार है! चरित्रने ही कँकेयीसे पश्चात्ताप करवाया। जानकी, मांडवी और उर्मिला सब अपनेको सुखी मानती थी, यह भी चरित्रका ही प्रताप था।

राम और लक्ष्मण प्रणव पत्र पर अपन स्निग्धीता कर रहे थे। नन्हीपाममें भरत भी तपस्याका जीवन बिता रहे थे। एत आर राम-लक्ष्मणने जंगलमें मगल कर लिया था ता दूगरी आर भगने राजभयना और बाग-बगीचारा त्पागनर न्हीपामरी शागडामें हा मगल मान लिया था। एक थ वनध तपस्वी ता दूगर में बसीथ तपस्या।

राज-परिवारक अत्यन्त भय आगन पर तिराजकर भरत त्रिग प्रकार रायका कामकाज चलाने थ उन दंगनर अन्ध जन्ध पम मूर्ति पुण्याका मन्तर भा श्रद्धाग शुरु जाता था। जपि मुनियकि हृदय पुनरित हा उल्ले थ। राजनीति और धमता तेंगा गुमन अचन बहा त्पनका मिल सतता था? वगिष्ठ जग सर्वोच्च महर्षि इत गुमलर उत्तम सागी थे। मुद्गीस भरतको सग ही प्ररणा मिन्ती रत्ता था। आसपासर प्रदेशानो न तो भरतके आत्रमणका भय था और न भरतकी सावेन भूमिको अन्य किसी राज्यके आत्रमणका भय था। अयाध्याका महकता रायसत्र कसा गुनोभिग हो रहा था।

प्रजा राज्य-कमचारी और राज परिवार सत्र अपने अपने कन्य पालनमें रत ह। यह सत्र रामकी पादुकाआवा टी प्रताप है—एसा मान कर भरत सत्तानी तरह दनिक कायोंका विचार करते हुए रातमें गम्मा पर लट थे। लेकिन आज प्रयत्न करन पर भी उनकी आर्षें लग नहा रही था। एक बार उनका मन दम्बारण्यकी ओर घूम आया। कुछ क्षणके बाद वह मिथिलानी यात्रा कर जाया। उनका जय सियाराम का रत्न तो बल ही रहा था। लेकिन दस सवके बाबजद भरतका चित्त न जाने क्या शात और स्वस्थ होता ही नहीं था। क्या रामचन्द्र पर कोई भारी आपत्ति जा पड़ी होगी? क्या जननीके समान जानकी और ज्येष्ठ भ्राता रामका वियोग हा गया होगा? एस विचार भवरमें भरतका मन फस गया था। बहुत रात तक चल्ते रहे अपार मयनस धक कर अतमें भरतकी आर्षें लग गइ। प्रात काल हुआ। भरत नित्य कर्मों से निवृत्त हुए। लेकिन अभी तक उनका मन शात और स्वस्थ नहा हो

रहा था। रामकी आज्ञाको तोड़कर उनके समाचार मगाये नहीं जा सकते थे। ऐसे मनोमन्थनमे भरतके कितने ही दिन बीत गये। अतमें अपने भीतरसे ही उन्हें समाधान मिल गया।

५३

पुत्रीका स्मरण

जानकीकी माता सुनयनाजी जनकराजके चरणोमे प्रणाम करके कहने लगी “स्वामिन्, अयोध्याके समाचार तो समय समय पर मिलते रहते हैं। भरतकी आप बार बार प्रशंसा किया करते हैं। परन्तु मेरे मन पर तो भरतकी सबसे ऊँची छाप पड़ी दडकारण्यमे राम और भरतकी भेटके समय। अहा, भरत तो भरत ही है।”

“सुनयना, भरतकी क्या क्या बात मैं तुम्हे सुनाऊँ? आज साकेतका राज्य भरत एक तपस्वीके रूपमे चला रहा है। उसकी जोड़का दूसरा शासक सारी दुनियामे नहीं मिल सकता।” इतना कहते कहते जनकराजका हृदय गद्गद हो गया। सुनयनाकी आँखें भी हर्षके आसुओसे छलक उठी। कुछ क्षण मौन रहकर वे बोली

“मेरे रामके क्या समाचार हैं?”

“राम तो हम सबके अतिम मिलनके बाद उस स्थानको भी छोड़कर आगे बढ़ गये हैं; क्योंकि वे जानते थे कि उन स्थानसे परिचय बढ़नेके बाद नगरजन उनका पीछा नहीं छोड़ेंगे। वे तपस्वी बनकर जिस अरण्यमे गये हैं, वहाकी आरण्यक प्रजाके साथ उनका सतत मपक बना रहे यही एक उनकी अभिलाषा थी। सामान्यतः राम आरण्यक सस्कृतिको आगे बढ़ानेकी अभिलाषा रखते मालूम होते हैं।”

“यह सब तो बड़ा अच्छा है। परन्तु पिछले दो-तीन वर्षसे मेरे मनमे जानकीकी बड़ी चिन्ता रहा करती है। माताके हृदयमें अपनी पुत्रीके लिए कितना प्रेम रहता है, इसे अनुभवके बिना कोई नहीं जान सकता।” इतना कहते कहते सुनयनाके नेत्रोसे आसू टपकने लगे।

उ हे डांस बघाते दूए राजा वाले तुम जानरीरी जग भी चिन्ता न करो। जिसके पास एकमात्र गील और चरित्रकी पूजा है उसे कही भी आच नहा जानी।'

जाचलसे आगू पाछने पाछन मुनयना बोला विपत्तिकी ता मन कई चिन्ता नहीं है। फिर जहा रघुवंग मणि राघव जस रक्षक और लक्ष्मण जस सबक हा वहा बिम बानकी कमा हो सकती है? 'अन्तु वयोम उन तीनबे कई समाचार नहीं मिले इस कारणम मनमें विषाद बना रहता है। म मनको बहुत समझाती हू लेकिन वह किसी भी तरह हाथमें नहीं रहता। आपके जसे बीतरागाको ता काद दुख नहा हो सकता। फिर आपका हृदय पुरपका है।

इस अंतिम वाक्यस जनक-राजका हृदय पसीज उठा। मनमें देवावर रखी हुई धिरह वदना आत्माके द्वारा बाहर प्रकट होकर बहने लगा। वे इतना ही कह पाय देवी हृदयमें कितना ही दुःख क्या न हा लेकिन सिद्धांतके लिए उस सहन करना ही होगा। सिद्धान्त प्रम हा मनुष्यक कल्याणका केंद्र है। राम समाचार न भजें इसमें उनकी गाभा है। हम समाचार न मगायें इसमें हमारा कल्याण है। वस जनरके ताराको लो मिलनसे काइ रोक नहा सकता। व ता जगम्य रीतिम निरंतर बातें करते हा रहत ह।'

किन्तु दानाको इस बातका पता नही था कि उनकी पुत्री जानकी एक एम रा उसके पजमें फमकर दुःख भोग रही है जिसे लका नगरीके किसी भी स-जनका भय नहा है। विभीषण जस सत्पुरुषको जिसन शान माखर निकाल दिया है मगदरी जसी सतीकी जो मग हसी उडाना रहा है एम राक्षस रावणकी अगाव बाटिकामें अकेली साना पूण आनन्दमें रन्ती है—एकमात्र अपने सनीत्यके प्रतापस और इस आगाके वर पर कि कभी न कभा ता राममे अवश्य मिलाप होगा। कबिन टीक ही गाया है कि लाला निरागाजामें भी एक जमर आगा छिपी रहती है। और हम आगाक पीछ ता अगड सदगुण माला था फिर अमर आगा सफल क्या न हलती? जनक और सुनयनाक जामुआके पीछे भी ता बिराग वृत्तिवाली एक उदात्त आगा थी ही।

मन्थराका हृदय-परिवर्तन

“सुवीर शत्रुघ्न, आप दोनों भाई ननिहालसे अयोध्या पधारे हैं, यह समाचार सुनकर सबसे ज्यादा आनन्द मुझे हुआ था। लेकिन वह आनन्द लम्बे समय तक टिका नहीं। हमारी सारी आशाये क्षण भरमें धूलमें मिल गई। माता कैकेयीकी आरती उतारनेकी क्रिया जहाकी वहा रुक गई। ‘कहा है मेरे राम और कहा है पूज्य पिताजी?’ — भरतजीके इस वाक्यको सुनकर मैं स्तब्ध हो गई। उस समयका कैकेयी माताका चेहरा याद आता है, तो आज भी मन दुःखी हो जाता है। आपने मेरी ओर कठोर दृष्टिका जो बाण फेका था, उसका घाव आज भी वैसा ही है। कैकेयी माता तुरन्त सावधान हो गई थी। सौभाग्यसे उन्हें राजमाता कौशल्याजीके साथ रामके दर्शनका लाभ मिला था। वनवासी राम, सीता और लक्ष्मणकी त्रिवेणीको देखकर लौटनेके पश्चात् तो उन्होंने अपनी सारी दिनचर्या ही बदल डाली है। इन सब बातोंसे सावधान होनेके बदले मैं बहुत समय तक बैरकी भावनासे भरी रही। मैं कमर कसकर निन्दाके महासागरमें कूद पड़ी। रामकी निन्दाका तो एक अक्षर भी कोई अयोध्यामें सुननेवाला नहीं था और लक्ष्मण पर मेरा अनुराग पहलेसे ही अधिक था। इसलिए मैंने जानकीकी निन्दा शुरू की। प्रजाके उच्च वर्गमें तो मेरी बात कोई नहीं सुनता। इसलिए मैं निचले वर्गके लोगोंके पास जाने लगी और सीताजीके बारेमें चाहे जैसी बातें करने लगी। मैं मानती थी कि सीता और राम दोनों शरीरसे भले ही भिन्न हों, परन्तु हृदयसे एक हैं। रामको दुःखी बनाना हो तो सीता और रामके बीच मनमुटाव पैदा कर देना चाहिये। अगर दोनोंके मन अलग पड़ जाय, तो राम अवश्य पागल हो जायगे। ऐसा हो तो ही भरत अयोध्याके सच्चे राजा बन सकते हैं। और अगर भरत स्वयं अयोध्याके राज-सिंहासन पर बैठ जाय, तो राजमाताकी

दासाँ नाने मेरा सम्मान अवश्य ही बहुत बड़ जायगा। एसी एसी बातें मेरे मनमें पड़ी हुई थी। परन्तु आज अचानक मुझे भरतजीके दंगल हा गय। उनका पवित्र मुख दलन ही मेरे हृदयको एक अगम्य आघात लगा। मेरा अन्तर जाग उठा। मुझ जगार परचाताप होन लगा। मैं आपके पास अपना हृदय खोलने तथा पदचानापकी अग्निम न्यून हुई अपनी आत्माको क्षान्ति दिमानेके लिए आई हूँ और आपस क्षमाकी भाव भागता हूँ।

तबना कहकर मेघराजने गान्धर्वको नमस्कार किया और एक शिष्यका नम्रतासे उसका सामन बैठ गई।

बहुत मंदरा नून जो भावना प्रकट की है उसकी मैं बदल करता हूँ। परन्तु मुझमें उपलब्ध तेनकी यादना नहीं है। मुख स्वयं भी तुमसे क्षमा मागनी चाहिये। मैं भयाँक साथ रहनस कुछ अच्छ गुण पापद मुझमें जाये होंगे। माता पिताकी विरामतक रूपमें हृदयकी गदगता तथा बचन-यात्राके गुण भी मुझे मिले होंगे। लेकिन उनजना जात्रया तथा पूर्वाग्रहाका जोर भी मुझमें खूब है। जिस समयका यात्र अभी तूने दिलाया उस समय एक नारी पर हाथ उठानकी सीमा तक मैं उत्सजित हो चुका था। उस बातको तू भले पढ़ जाय लेकिन पिछले कितने ही क्षितिम उस मनश्चितिका यात्र कर-करक मैं बहुत बार पछताया हूँ। आज तू प्रत्यक्ष आ गई है तो इस मुअवसर पर मैं भी अपना हृदय खोलकर तुझसे क्षमा मागता हूँ। मैं तुमसे क्षमा करनेकी माग्यता नहीं रखता। लेकिन तू क्षमा मागन आ ही गई है, तो मैं हृदयसे तुमसे क्षमा करता हूँ।

अन्तमें एक छोटी बहनके नात तुझसे दो-एक बातें मैं कह दूँ। दल घन! निन्हाका जहर भयकर होता है। अच्छा हुआ कि यह बात समय पर तूरी समयमें आ गई। निन्हा और ईष्या केवल हमें ही नहीं निन्हु हमारे साथ सपूण समाजको भी जलाने नष्ट कर देती है। यह भारी भूल एक छोटेस वाग्यस तारा समयमें आ गई यह तेरे हृदयकी उन्नाका सूचक है। अब तू उसका बहुत दुःख न मान। लेकिन जहाँ जहाँ तूने सानाजीकी निन्हाका जहर उठेला तो वहाँ वहाँ तू जा

और उसे धोकर साफ कर डाल। यद्यपि निन्दामे इतनी ज्यादा चिकनाहट रहती है कि अधिकसे अधिक जोर लगाकर साफ करनेके बाद भी समाजमे उसके कुछ दाग तो रह ही जाते हैं। मेरी दूसरी बात यह है कि राम और सीताके प्रेमको तू, मैं या अधिकतर दूसरे लोग समझ नहीं सकते। वे दोनों केवल नर-नारी नहीं हैं, वे तो प्रभु और प्रभुता हैं। उन्हें जगतका कोई भी तत्त्व अलग नहीं कर सकता।”

रामायणका एक छोटा माना जानेवाला पात्र शत्रुघ्न तथा विश्वके तिरस्कारका पात्र बनी हुई मन्थरा समाजके उद्धारका ऐसा गभीर सवाद कर सकते हैं, यह जानकर किसे हर्ष नहीं होगा?

वर्तुल छोटा है या बड़ा, इसका मूल्य नहीं है। परन्तु मूल्य उस वर्तुलके पीछे रहनेवाले बलका है। विचारोके सम्बन्धमे भी यही उपमा लागू होती है। विचारोकी सख्या कितनी बड़ी है यह न सोचकर ऐसा सोचना चाहिये कि किसी विचारके पीछे आचरणका बल और अनुभव कितना है, इसी पर उस विचारके प्रचारका और उसकी आयुका आधार रहता है।

५५

युद्धकी तैयारी

“भाई लक्ष्मण, सीताका पता लग जानेके बाद अब अधिक समय यहा बिताना हमारे लिए हितकर नहीं है। मेरे मनमें यह विचार तो बना ही रहता है कि युद्धके बिना यह सारा प्रश्न हल हो जाय तो कैसा अच्छा हो। हिसक युद्धमे अनेक निर्दोष मनुष्य बिना कारण मारे जाते हैं। तपस्वीके वेशमे अरण्यमे रहनेके बाद हिसक युद्ध लड़ना पड़े, यह मुझे जरा भी पसंद नहीं है।”

रामके हृदयस्पर्शी वचन सुनकर कुछ देरके लिए तो लक्ष्मण स्तब्ध बने रहे। अतमे उन्होंने मौन तोड़ा -

“बड़े भैया, पवित्र प्रेमके बलसे अथवा समझानेसे समझ सके, ऐसा वर्ग जगतमे सदा छोटा ही रहनेवाला है। अधिकतर अपराधी तो

द्विविध तथा मयदवे सेनापतित्वमें दो साथ और जा गय। ठीक सामनसे जायवतवे सेनापतित्वमें एक महासेना आई। उसके बाद हा विद्युत गतिस बाका भताजे सुग्रीव और जगद जाय जोर उहाने रामक चरणामें दडवत प्रणाम किया। लम्पणका हृदय उमग जोर उत्साहम भरा इम मनाको देखकर प्रफुल्लित हो गया। उनके मुखस य गज वरवस निरल पने हम जीते जोर रावण हारा यह निश्चित मानिय।

इतनमें समस्त सेनामें एवसाय यह तुमल ध्वनि गूज उठी जय हो जय हो रामचन्द्रकी विजय हो। सारा वातावरण बीररमम भर गया। क्षणभरक लिए सबका विजयश्रीका रोमाच हो जाया। स्वय राम भी इस अनुभवस नही बच। उहान तुरत जाकागकी जोर ब्रैला। मूय चमक रहा था। फिर वे भित्तिजकी जोर एकटक देखन लग। एक स्थान पर छाया थी तो दूसर स्थान पर धूप थी। हार-जीतके दृष्टका भा तो ऐसा ही है न? राम विचारामें लीन हो गय। कुछ ही दरमें जयाश्रास लकर मिथिला और लका तकने चित्र एक एक करक उनकी जाताके सामन लड होने लग। मिर उनका घाडा नीच झुका जोर गटाभामें स भलग पडी हुई एक लटन उनकी जालक सामन परदा डाल दिया।

वनका तपस्वी युद्ध लडगा? शाणितकी नटीका साक्षी बनगा? सक्रिय हथमें संग्राममें जुडगा? एस जनक प्रश्नान रामक मन बद्धि और चित्तसहित जत करणरो धर लिया। भीतरम उत्तर मिना

राम तू निम्पाय है। रावणके विरुद्ध इसक सिवा दूसरा कोई माग नथ है। यह आवाज वास्तवमें आत्माकी हागा या बतिसी? रघुवग मणि रामकी इस समय अपन मागगक मन्गुर वणिज्जाका स्मरण ना जाया। कुछ रर बटकर उमान मन्गल कठम प्रायना की। जाध घट घा जय उहान अपना आने माग ता दया कि समस्त महामय श्राना जोर त्रिनागु निप्यकी भावनाम गाय जाकर उनक आमपाय पकत्र ना गया है। रघुवनि रामका हृदय-ग्रान बन्न गया

मित्रा मित्रय हमारा आग्य नथ है। युद्ध हमारा अनु नथ है। मय हमारा आग्य है और गाय हमारा अनु है। मनुष्य जानि स्वयरा उचा टक्क मन्न है। वर तन्निपनारा सर्वोच्च रचना है। मानव

मानवके साथ लड़े, यह शोभाकी बात नहीं है। आप सबने अपने भीतर जिस अनुशासन और आज्ञा-पालनकी भावनाका विकास किया है, उसका मूल्य महान है। आज आप सबको आपके आत्मीय जनोने या तो प्राणत्यागके लिए या विजय-प्राप्तिके लिए विदा किया है। प्राणार्पणकी आपकी उत्कठा आपके हर कदम पर दिखाई पड़ती है। आप सबके इस वीरतापूर्ण वातावरणसे सूखे और झुके हुए वृक्ष भी जाग उठे हैं। फिर भी भाइयो, हमारी वीरताका समरागण बाहरकी भूमि पर नहीं परन्तु हमारे भीतर है। इस समय बाहरके रावणको हरानेकी बात याद करनेकी जरूरत नहीं है। परन्तु अपने भीतर पड़े हुए काम, क्रोध और लोभको हराने या जीतनेकी बात हमें सामने रखनी है। हमारे बड़ेसे बड़े शत्रु ये काम, क्रोध और लोभ ही हैं। और ये सब हमारे भीतर हैं।”

लक्ष्मण अकुला उठे। उनकी वीरताको इससे आघात लगा। वे बोले “बड़े भैया, ये विमान आ गये हैं। जाववतके सेनापतित्ववाली टुकड़ीको उनमें बैठकर अभी खाना हो जाना है।” रामने अनासक्त योगीश्वरके समान कुछ क्षण लक्ष्मणके चेहरे पर एकटक देखा और लक्ष्मणका लज्जित बना हुआ मुह बन्द हो गया। रघुवशेन्दु रामचन्द्रजीने आगे कहा “मेरी मुख्य बात लगभग पूरी होती है। हम सब कुछ ही देरमें यहाँसे प्रस्थान करेंगे। आज हमारा स्थूल ध्येय तो लकाकी दिशामें प्रयाण और रावणके साथ युद्ध करना है, परन्तु सूक्ष्म ध्येय वही बात है जो मैंने अभी आपसे कही है। उसे हमें हृदयमें बसा लेना है। बाहरका युद्ध तो लाचारीसे लड़ना होगा। अभी भी मैं युद्धको टालनेके प्रयत्नमें विलकुल निराश नहीं हुआ हूँ। युद्ध आ ही पड़े तो भी हममें से कोई लकाके सामान्य प्रजाजनोके प्रति शत्रुताका भाव न रखे। हम सब उन्हें अपने मित्र ही समझे। रावणके साथ युद्ध करते हुए भी हम अपने मनमें किसी प्रकारके पूर्वाग्रह या वैरभाव नहीं रखेंगे। हमारे मन पर रावणके कुकृत्यके कारण उसकी जो छाप पड़ी है, उस छापसे उसकी आत्माको अर्थात् उसके शुद्ध भावको हमें अलग रखना है। मनुष्य स्वयं तो दूषित है ही नहीं, वासनाओके कारण वह

दूषित बनता है। हमें अपने भीतरस और सारे विश्वसे वासनाओंके विषका निकाल फेंकना है। इस विषका हम तभी निकाल सकते हैं जब विशुद्ध आत्माको दापके साथ न जोड़कर दोष और आत्माके असम्बन्धको हम समझ लें। अंतिम बात यह है कि हमें तेज गतिवाले विष्णु वाहनोका उपयोग नहीं करना है। युद्ध स्वयं ही एक आवेग है। आवेगयुक्त कार्योमें तेज गतिवाले साधन मिल जाय तो दोनों अपार आपत्तियाँ उत्पन्न हो सकती हैं। भूल ही लूना पड़नेमें हम देर लगे फिर भी पदल यात्रा करके अर्थात् पदाति सेनाके रूपमें ही हमें प्रयाण करना है। मार्गमें जो प्राकृतिक दृश्य मिलेंगे उनको देखते देखते हम आगे बढ़ेंगे।

युद्धमें लड़नेके लिए जानेवाले कौनसे सैनिक ऐसी सिद्धान्त चर्चाका पान किया होगा? सब लोग रामके वचनानुसार स्वाद लेकर उठ। कुछ ही देरमें फल भोजनकी घटी बजी। भोजन करते करते भी जनक मनिवाका चिन्तन चलता रहा। भोजनके बाद सब लोग अपनी अपनी ठावनियाकी ओर गये। एक ओर विजयमकी क्रिया चल रही थी तो दूसरी ओर रातके पड़ाववाले स्थानकी दिशामें डरे-तन्बू खाना किये जा रहे थे।

श्रीराम जय राम जय जय राम।

जय राम जय राम जय जय राम।

इस ध्वनिके साथ राम लक्ष्मण और हनुमान सहित संपूर्ण सेना आकाशकी ओर खाना हुई। यह था प्रथम मंगल प्रस्थान जिनकी प्रतिबन्धि अंगोन वनमें बठी हुई जानकीके हृदयमें उठी।

समुद्र-तट पर रामकी सेना

रामको केन्द्रमें रखकर किष्किन्धाकी महासेना अब लकाके समुद्र-तट पर पहुच गई थी। मार्गमें सबको अनेक प्रकारके कडवे-मीठे अनुभव हुए। श्रीरामके सत्संगके प्रतापसे प्राप्त हुए ज्ञान-भंडारके कारण कडवे-मीठेका विरोध नहीं परन्तु रस-सवादितार्का आनन्द सबको प्राप्त हुआ था। सामान्यतः सैनिकोको खान-पान या रहन-सहनमें जो स्वतंत्रता मिलती है, उसका इस सेनाके सैनिको द्वारा स्वभावसे ही सदुपयोग किया जाता दिखाई देता था। सेनाका अनुशासन अनोखा था, लेकिन वह सेनानायको द्वारा लादा हुआ नहीं था। वह तो सैनिकोके भीतरसे स्वयस्फूर्त अनुशासन मालूम होता था। एक-दूसरेसे अलग रहकर चलनेवाले सारे सैन्यदल आज लगभग पन्द्रह दिनके बाद समुद्र-तट पर एक स्थानमें एकत्र हुए थे।

आजका आनन्द अनोखा था। समुद्र-तटकी विशाल चादर जैसी चारो ओर फैली हुई सुशोभित मुलायम वालूमें सैनिकोके तम्बू फैले दिखाई पड़ते थे। छावनीके पास ही ज्वारका समुद्र-जल किनारेसे टकरा-टकराकर लौट जाता था। ऊपर आकाशमें पूर्णिमाकी चादनी खिल रही थी। चन्द्रमाका शीतल तेज सबको दूधसे नहला रहा था। उछलती तरंगोके बीच चन्द्रमाका प्रतिबिम्ब देखनेका कुछ और ही आनन्द था। सुदूर स्थित लका द्वीप चारो ओर फैले हुए श्वेतरंगी भूगोलमें काले बिन्दु जैसा दिखाई देता था। लकामें प्रवेश करनेके लिए एक मार्ग पैदल-यात्राका था। दूसरा खाड़ीमें होकर समुद्र-यात्राका था। किस मार्गसे जाना चाहिये, इस विषयमें रघुकुलपति रामचन्द्रजीने सब सैनिकोका मत मांगा। उनके मतदानमें से एक विवाद उठ खड़ा हुआ। धीरे धीरे उसने उग्र रूप ले लिया। लक्ष्मण उसके निमित्त वन गये। कोई सैनिक बोला : “हमें खाड़ीके मार्गसे ही समुद्र-देवकी आराधना करके जाना चाहिये। इससे समुद्र स्वयं हमें मार्ग दे देगे।” दूसरा सैनिक बोला - “हा, विल-

ही भीतरसे कोई शक्ति मुझे सावधान कर देती है। आप सबमें भी वैसा ही ईश्वर बैठा है। हम सब देहधारी इस दृष्टिसे तो समान हैं। अन्तर केवल कम या अधिक जागृतिका है। मुझमें आपकी श्रद्धा विशेष रूपसे जागे और आप मेरी पूजा करे, तो इसमें आपकी तो उन्नति ही है। लेकिन पूज्य वनकर मैं यदि अभिमान करने लगू, तो मैं अवश्य नीचे गिर जाऊंगा। इसीसे मैंने बार बार कहा है और आज फिर कहता हूँ कि किसी देहधारी महामानवको भी ईश्वर अथवा ईश्वरकी कोटिका नहीं मानना चाहिये। ऐसे महापुरुषके लिए पूज्य, उपास्य, गुरु आदि सबोधन काममें लिये जा सकते हैं। परन्तु इन सब सम्बोधनोका मूलभूत तत्त्व तो सद्गुण ही है। ऐसा माननेके कारण ही प्रत्येक क्रियामें से जानने योग्य, छोड़ने योग्य और ग्रहण करने योग्य अश हम निकाल सकते हैं और बड़ेसे बड़े मानवकी भी नम्रतापूर्वक उचित आलोचना कर सकते हैं। ऐसे तेजस्वी अनुयायियोंके बीच जीनेमें ही मैं गौरव अनुभव करता हूँ। लक्ष्मण और जानकीने भी यदि ऐसी सच्ची स्वतंत्रता न ली होती, तो मैं वनवासमें साथियोंसे विहीन और एकाकी होकर सर्वसत्ताधारी बन जाता और गुरु वशिष्ठ जैसे सदाके मार्गदर्शकके अभावमें मैं कहींका न रह जाता। सच्चे आलोचकोने मेरी आंतरिक और बाह्य दोनों प्रकारकी प्रगतिमें बड़ीसे बड़ी सहायता की है।”

रामके वचन सुनकर सब पुलकित हो गये, मानो सबको जीवनका एक नया दर्शन प्राप्त हुआ। अवसरके अनुसार कुछ बातें करनेके बाद थोड़े सगोधनोंके साथ खाड़ीके मार्गसे ही जानेका निर्णय हुआ। इस प्रकार युद्धके लिए निकले हुए सैनिकोको शुद्ध राजनीतिक तालीम भी अनायास ही मिल रही थी। चन्द्रको देखनेसे पता चला कि सोनेका समय हो गया। इसलिए सोनेके नियत समयकी घटी बजी और सब लोग अपने अपने तम्बुओमें जाकर सोनेकी तैयारी करने लगे। थके हुए सैनिक तो देखते ही देखते गहरी नीदमें सो गये। केवल जागने-वाले सतरी चारो ओर घूमकर चौकी कर रहे थे। उनमें लक्ष्मणजी भी शामिल थे। हनुमान और सुग्रीव श्वाननिद्रा लेते हुए रामके दोनों चरण-कमलोके पास लेटे थे। वह दृश्य भी कैसा मनोहर लगता था।

त्रिजटा और माल्यवतका सवाद

बहन त्रिजटा लकाकी वतमान दशाको देखकर पिछल कितने ही त्रिनाम मेरी गलाकी निद्रा लुप्त हो गई है और पेटकी पाचन क्रिया मंद पड़ गई है। वहां भी चन नहीं मिलता। क्या इस निरकुशता और खुले अत्याचारका दूर करनेका कोई माग ही नहीं है? कुछ दूरके लिए यह बात भी मनमें जाती है कि प्रजाको राज्यके खिलाफ बन्धन पमाने पर खुला विद्रोह घोषित कर देना चाहिये। लकाकी प्रजाको भद्र दखता हू तो लगता है कि इस भयभीत प्रजामें से विद्रोह करनेका माहस ता क्या परन्तु सामान्य नतिक साहस भी चला गया है। राज्यमें खुशामत खारीके सिवा और कुछ त्रिखाई ही नहीं देता। मुझ तो इस स्थितिमें बाहर निकलनेका एक ही माग दिग्बाह देता है वह है परराज्यको लका पर आक्रमण करनेके लिए भड़काना। देखा न हमारे मानवता प्रिय मन्त्रीश्वर विभीषणजीका मुझ कितना उदास रहता है। परराज्यका आक्रमण करनेके लिए भड़कानमें खतरा तो रहेगा ही। सच पूछो तो मुझे इस खतरेसे ज्यादा भय इस बातका है कि लकाकी गराव प्रजा लड़ाईके फलस्वरूप बरबाद हो जायगी। लड़ाईमें लड़नेके लिए तो मनुष्य ही जाने ह। लेकिन गौरीरिक्त नष्टिसे कम बरबादा होन पर भी प्रजाकी आर्थिक मानसिक और सांस्कृतिक बरबादी बहुत अधिक गता है। लेकिन तब क्या इस सारे अत्याचारका चुपचाप सह लिया जाय?

ये वचन वाग्यते बोलते माल्यवतका चेहरा क्रोधसे लाल हो गया। कुछ ही क्षणमें उसकी लाल लाल आत्मासे ज्युधारा बहन लगा।

जरे भाई इस तरह मानव वननेमें क्या हागा? बहाने या दावा कर तू रोगा क्या है? मैंने और प्ररणाम भरा उलाहना तू तू त्रिजटान अपनी सानीक आचर्यमें माल्यवतका जामें पाठ पाया। अपन कोमल हासाम उसका पाठका पपयपान तू त्रिजटा हृदयका बाणीमें बाणी

“हम सब प्यास लगने पर कुआ खोदनेकी इच्छा करनेवाले लोग हैं। कुआ भी कोई दूसरा चुटकी वजाते ही खोद दे और पानीका गिलास लाकर हमारे मुहसे लगा दे तो हम पी ले — हमारी ऐसी मनोदशा है। भाई, मुझे तो यह लगता है कि रावणको ऐसा निरकुश राजा बनानेमें हमारा भी प्रत्यक्ष या परोक्ष हाथ निश्चित रहा है। यह सारी स्थिति आजकी आज बदल या सुधर नहीं सकती। और कही ऐसा हो भी गया, तो वह नई स्थिति ज्यादा समय तक टिकेगी नहीं। हमें धीरज रखकर दीर्घ दृष्टिसे यह काम करना होगा। यह काम दूसरोकी आशा न रखकर हमें अपने बल पर आरंभ करना होगा। अपनी बात कहू तो मैं महारानी मदोदरीके सम्पर्कमें रही हू। मैं मानती हू कि उस भली रानीका बहुत चलता नहीं। लेकिन आज किसीकी भी बात न सुननेवाला रावण मदोदरीकी बात सुनता है। भले आज वह मदोदरीकी बातको हसकर उड़ा दे, परन्तु मेरी यह श्रद्धा है कि उसका बीज अंतमें रावणके अंतरमें जरूर उगेगा। विभीषणके साथ भी संपर्क साधनेका प्रयत्न मैंने किया था, परन्तु मैं प्रत्यक्ष संपर्क नहीं साध पाई। इसमें मेरी स्त्री-सुलभ झूठी लज्जा भी कारण रही है। इस भयका भी इसमें हाथ रहा है कि कही राजाको पता चल गया, तो वह इस शुभ कार्यको आरंभ होते ही खतम कर देगा। मेरा सच्चा कार्य तो महिलाओमें चल रहा है। अत्याचारोकी शिकार बननेवाली स्त्रियोमें कही कही स्वजाति-अभिमान पैदा हुआ देखकर मेरा हृदय प्रसन्न हो जाता है। इसमें भी सीताके अपहरणके बाद इन महिलाओकी आत्मा दुःखसे सतप्त हो उठी है। लेकिन मेरा यह कार्य अभी तक उच्च वर्गकी महिलाओमें नहीं पहुंच पाया है, इसी तरह वह निचले वर्गकी स्त्रियोको भी नहीं छू पाया है। लेकिन उज्ज्वल भविष्यके लिए मेरी श्रद्धा दृढ़ तो बनी ही है।”

“परन्तु चीटीकी चालसे चलकर यह काम पूरा कब होगा ? ” माल्यवत बीचमें ही बोल पड़ा।

त्रिजटाने पुन धीरज रखनेका स्मरण कराकर स्पष्ट शब्दोंमें कहा “देखो, भाई माल्यवत ! मेरी और तुम्हारी कार्य-पद्धतिमें भेद है।

जीर "सीलिए तुम आवेगमें आकर उतावल बन जाते हो। मेरी बात पूरी तरह मुननेका ता धीरज रखो।"

दसक पहले ही माल्यवत त्रिजटास प्रभावित हो चुका था। वह मुह बन्द करके एकाग्र मनसे त्रिजटाकी बात मुननेका तयार हो गया। जब त्रिजटाने अपनी बात आगे बढ़ाई मेरा आश्रममें विश्वास नहा है। उसमें भी परराज्यका स्वयंशमें हिंसक शान्ति कराने के लिए बुलाना ता क्या परन्तु सुयोग्य गति स्थापनाके लिए बुलाना भी अपन हाथों अपन राष्ट्रका गुलामीके पजमें फसाना है। म तुम्हारे इस प्रस्तावसे सहमत नहीं हूँ। चाह जसा सुयोग्य राजा हो लेकिन अगर वह विन्नेगी है ता जब तक हमारे राष्ट्रकी जनता मूलम ही तालीम पाकर तमार न हो जाय तब तक वह कुछ नहीं कर सकता। इतना ही नहा, अगर स्वदेशी राज्यशान्तिमें भी लोक मानस प्रतिबन्ध हो ता शान्तिका कोई मुफल उस नहीं मिल सकता। मनुष्य कितन मरते ह या जीते ह इसमें भी मुझ बहुत रस नहा है मेरा रस ता इस बातमें ह कि सच्च मनुष्य कसे उत्पन्न किय जाय।

माल्यवतको त्रिजटाकी बात सही लगी। वह बाला तेरी बात दूरकी तो लगती है लेकिन वह है सच्ची। जनताके निर्माणका काय ही महत्वपूर्ण है। वर्ना रावण आय विन्नेगी राजा जाये या हमारा जात्मीय विभीषण आयें हम जडमूलस जो शान्ति करना चाहते ह वह नहा ना पायगी। अछुटा हुआ कि मुझ तेरा सत्संग मिल गया नहीं तो दगाहिनके अहाने भी म लकाका बडस बडा अहित कर बठता। विद्राहकी बात लगाके मामन रखकर जसतोय बढाना जासान है परन्तु एक बार जा प्रजा विद्रोहका माम अपना लेती है वह बातमें सुराज्यको भी उखाड फेंकनका पडयन रचनेमें नहा हिचकिचाती। भयका दूर करनेके लिए भी रचनात्मक कायकी जरूरत हाती है न कि सन्न-कायको। एक नारीने नाने तू प्रजा निर्माणका जा आधारभूत काय कर रही है उसके लिए म तुने धयवान् न्थि बिना ननी रह सकता।

माल्यवत विन्ना हा इसके पहले त्रिजटान अपनी बातको स्पष्ट करत हुए कहा मुझमें राष्ट्रके लिए उपयोगी अभिनव दृष्टि आई

है ऐसा यदि तुम मानते हो, तो मुझे यह सत्य प्रकट कर देना चाहिये कि मुझमे जो कुछ भी है वह महादेवी जानकीकी देन है। उस महानारीके सत्सगसे मुझे सुराज्यके तत्त्वज्ञानसे परिचित होनेमे बड़ीसे बड़ी आत्मिक और बौद्धिक सहायता मिली है।”

इसके बाद दोनों विचार-मग्न दशामे ही एक-दूसरेसे विदा होकर अपने अपने स्थानकी ओर गये।

५८

रावणकी सभा

आज रावणने अपने मन्त्रि-मंडलको बुलाया था। सब मन्त्रीगण अपने अपने आसन पर आकर बैठ गये थे। अपने सिंहासनसे उठकर रावणने सबके मुख देख लिये और पुन वह अपने सिंहासन पर बैठ गया। तुरन्त उसने लकाके महाजनोको बुलानेका आदेश दिया। तथाकथित महाजन एक एक करके आने लगे। अतमे लका नगरीके नगरसेठ आये। कोतवाल, दंडनायक तथा दूसरे कर्मचारी आये। शिक्षक और न्यायवादी भी आये। महारानी मदोदरी, सुलोचना और त्रिजटा जैसे नारी-प्रतिनिधि भी आये। नक्षेपमे, सपूर्ण राज्यका तथाकथित प्रतिनिधि-बल सभामे एकत्र हुआ। रावणने स्वयं ही उनके समक्ष यह प्रस्ताव रखा “मेरे प्रजाजनो, लकाकी प्रतिष्ठाका ज्वलत प्रश्न आप लोगोके सामने मैं प्रस्तुत करता हू। मुझे आशा ही नहीं परन्तु पूर्ण विश्वास है कि रामके साथ लड़े जानेवाले युद्धका आप सब समर्थन करेगे। आप सब जानते हैं कि मैंने इसके पहले ही रामकी पत्नीको पूरा पूरा मौका दिया है। रामने वहन शूर्पणखाका अपमान किया, इसका मजा तो उसे चखाना ही होगा।” दात कटकटाते हुए वह आगे बोला

“मैं आप सबके साथ शपथ खाकर कहता हू कि इन हाथोसे मैं राम और लक्ष्मणका वध करूंगा और सीताको अपने अंतपुरकी वासिनी बनाऊंगा।”

तालियाकी गडमडाहट से सभास्थल गूँज उठा। एक मना स्थाव्र नाते ही नहीं किन्तु सबसत्ताकारी राजाका अर्धांगिनीके नाते भा मना दरीक हृदय पर माना उमलता तल गिर गया। सुगोचनारा मुह लज्जासे झुक गया। त्रिजटाकी भीहिँ रापसे उड़ गई। मात्स्यवनका आरों धरती पर गल गद। एमे कुछ सज्जन नर-नारियाक हृदय टुलम भर गय। परन्तु रावणका विराघ करनकी नतिर हिम्मत कौन निताना ?

अतमें विभीषणसे रहा नहीं गया। ब राह नृप। रावणन टनी जाखस उननी जार दम्बा परन्तु विभीषणन इसकी परवाह नहा बी।

ब बाल सभाजना आप सब जानत ह कि म व्यक्तिगत रूपमें राजाका एक छोटा भाई हू। भत्रीक नाते म रायका एक अंग हू और नागरिकक नाते लकावासी प्रजाजन हू। इस प्रश्नक उत्तर पर केवल लकावा हा नहीं परन्तु जगनकी मानव जातिका भविष्य निभर करता है—ऐसा मुझ लगता है। इसलिए म हम अत्यन्त गम्भीर बात मानता हू। सामान्य मानवता और जय कृतव्याके बीच कभी विराघ नहीं हो सकता। विराधाभास अवश्य हो सकता है। इस विषयमें मुझ एमा विरोधाभास स्पष्ट दिखाई देता है। ऐसे विराधाभासमें सत्य ही हमारा एकमात्र आश्रय होना चाहिये। सत्यका आश्रय देने पर इस सम्बन्धमें गहरा विचार करनेसे मुझ ऐसा लगा है कि हमारा उका नरेण बहन नूपणखाकी गलत उत्तेजनाके गिकार बन गय ह। बहन नूपणखाके साथ यदि वास्तवमें अयाय हुआ हो ता भा जयाय को मिटानेका उपाय यायवत्ति है। लका नरुण एक महान सनीको साधुवन द्वारा भुलावेमें डालकर और अपने मायाजालमें फसाकर राम नृदमणका अनुपस्थितिमें लका उठा लाय ह। म मानता हू कि हमारे राजान साधुवन पर लोगकी जा थढ़ा है उसका दुरुपयोग किया है। इसका हमें कठोर प्रायश्चित्त करना पड़गा। जिनक चरणामें प्रणाम करके पवित्र होना चाहिय उन गगाके समान पवित्र मानाजीके लिए महाराजने अपने मनमें जो मल भर रखा है उसे पौलस्त्य कुलके बाजके नाते ता उह घा हा डालना चाहिये। साथ ही उस महामतीके चरणामें जाकर हृदयसे क्षमा-याचना करनी चाहिये। मरा यह स्पष्ट मत

हैं कि लकापतिको तुरन्त सीताजीसे क्षमा मागनी चाहिये और मान-सम्मानके साथ लकामे घुमाकर उन्हें रामके चरणोमे सौंप देना चाहिये। इसमे जरा भी शका नही कि इतना करनेसे राम हमे क्षमा कर देगे।”

विभीषणके वचन सुनकर सारी सभा गभीर हो गई। कभी न सुने हुए वचन सुनकर वह गीतलताके अमृतमे डूब गई। त्रिजटा, माल्यवत, सुलोचना, मदोदरी तथा उनके जैसे अन्य अनेक नर-नारियोके हृदयोकी मूक सहानुभूति उसमे स्वभावत मिल गई। अनोखी वीरताका यह चित्र सभामे चमक उठा। लेकिन वह स्थायी न रहा। रावणका रोम रोम क्रोधसे सुलग उठा था। वह खडा हुआ। विभीषणके मुह पर लात मारकर वह बोला

“मूर्ख-शिरोमणि, और वाते तो जाने दे, लेकिन एक ज्येष्ठ भ्राताके रूपमे भी मेरे सम्मानकी तू रक्षा नही कर सका? तुझे लाखो बार धिक्कार है। नमकहराम, तू इतना तो सोच कि तेरे मुहमे किसका नमक भरा है।”

मानो कुछ हुआ ही न हो इस तरह रावणके पैरको सहलाकर विभीषण खडे हुए और बोले “राज्यके एक नागरिकके नाते अपने कर्तव्यका और ज्येष्ठ भ्राताके सम्मानका पूरा विचार करके मैंने यह बात कही है। सत्य और सदाचार हम सबके लिए आदरणीय है। जगतमे सत्यसे बडा कोई नही है। सत्य ही ईश्वर है। सत्यसे ही सारा विश्व चल रहा है। बडे भैया, मैं जिस लकाका ऋणी हू, उस लकाका ऋण चुकानेका यह अमूल्य अवसर मुझे मिला है। मुझे इस सभासे यह कहने दीजिये कि लकाधीशको या आपमे से अनेक लोगोको मेरी बात आज ही समझमे नही आयेगी। फिर भी सत्य तो तीनो काल-में सत्य ही है। वैद्य होकर जो रोगीसे परहेजका पालन न कराये, वह रोगीका हितेच्छु नही बल्कि हितशत्रु है। मंत्री होकर जो राज्य और प्रजा दोनोका भला न चेते, वह राज्यतन्त्रका बडेसे बडा घातक है। जो मनुष्य धर्मिष्ठ कहलाकर भी किसी भय या प्रलोभनके वश होकर सत्य या स्पष्ट बात कहनेका अवसर खोता है, वह सर्वनाशको निमन्त्रण देता है। आप सब मुझे क्षमा करे। आपमे से कोई भी मेरी बात नही मानेगे,

क्याकि हमारं यहा खुशामन्सारी और स्वार्थीपनके सिवा दूसरा कुछ गायद हा निखाई देता है। यहा रहकर म इस स्थितिका मूक साक्षी नही बन सकता।

इतना बालकर तुरन्त विभीषणन सभाका त्याग कर लिया। कुछ दूरक लिए रावणक साथ सभाक सार लोग निष्प्राण मूर्तियो जसे धठे रह। ममस्त सभा एक् हा व्यक्तिके अभावमें निस्तेज बन गई। सत्यजी मल्ल्याकी परवाह नही हानी। बेचार माल्यवत और विजटा अंत करणम विभीषणको प्रम करते थ परंतु वे विभाषणके साथ लकाका त्याग नही कर सके। दाना गुममुम बनी हुई सभाके मूक साक्षा बने रह और विभीषणके भविष्यका चिन्ता करत रहे। कुछ समयके लिए तो रावण भी विचारमें पड गया। परन्तु जहा भीतरका उपादान कारण — मूल कारण — न हा वहा बाह्य निमित्त कितन ही बलवान क्या न ? उनस काई लाभ नही हाता।

५९

विभीषणका लकात्याग

विभीषणने कबल अपन ही बल पर लका छाडा थी। वह कितना मजान और अनापाम हुआ भगारथ त्याग था ! उहान घर छााना स्वजन छााना जमभूमि छााना और कुटुम्बा जन भी छााना। एक् गच्छमें विभीषणन मवम्बका त्याग कर लिया। प्रमपथ पावकना ज्वाला ' हमका नाम है। एक् तिनकना भा आधार मित्र तब तक तरना कस माखा जा सकता है ? लग्ना मायनक लिए एक् बार तो हूनका खतरा उठाना पड हागा। मयाग-मागरमें तरना हा नो एक् बार तो मनुष्यका स्वयं नादिक और नोहा जाना बनना हागा। कतना बहनमें भी जब आगी बाया कापन लगता है तब हमका व्यवहारमें उनारनेवा विभाषणका क्या गति दूना पाया ?

१ प्रमका माग अग्निका ज्वाला है।

विभीषणकी आखोसे आसुओकी धार वह रही थी। नगे पैरो और सादे वस्त्रोमे वे चले जा रहे थे। पीछे घूमकर वे लकाकी ओर देखते तक नहीं थे। लेकिन जन्मभूमिकी याद आये बिना कैसे रह सकती है ? 'जानकीजीका क्या होगा ? बेचारे माल्यवत और त्रिजटा जेलके मेहमान बनेंगे ! निरकुश आसनमे मानवता-प्रिय मनुष्योके लिए जेलके सिवा दूसरा कौनसा स्थान सान्त्वनाका हो सकता है ? बेचारी लकाकी प्रजा रावणके अतिशय अभिमानकी शिकार बन जायगी।' ऐसे अनेक विचारोमे लीन बने विभीषण आगे बढ़ रहे थे। सौभाग्यसे उन्हें एक सेवाभावी नाविक मिल गया, जिसने अपनी नौकामे बैठकर उन्हें खाड़ी पार करा दी। ज्यो ही विभीषण नौकासे किनारे पर उतरे, त्यो ही रामचन्द्रजीकी महासेना उन्हें दिखाई दी। वह रामकी सेना है और जानकीको रावणके पजेसे छुड़ानेके लिए आई है, यह जानते ही पलभरमे उनका हृदय आनन्दसे उमड़ पड़ा।

जिन रामके प्रति विभीषणका अपार आकर्षण था, जिनके दर्शन करनेके लिए वे वरसोसे तरस रहे थे, उन्ही रामसे प्रत्यक्ष मिलनेके इस प्रसंगको विभीषण कैसे टाल सकते थे ? रामके तम्बूके बारेमे पूछते पूछते वे आगे बढ़े। परन्तु सैनिक रामकी आज्ञाके बिना उन्हें आगे कैसे बढ़ने देते ? विभीषणका परिचय पूछकर तुरन्त दो सैनिक रघुकुल-मणिसे पूछनेके लिए दौड़े। उस बीच विभीषणको आदरसे योग्य आसन पर बैठकर कुछ सैनिक पहरेदारके रूपमे उनके आसपास व्यवस्थित खड़े हो गये। सैनिकोके आदर-सत्कार, सावधानी और विवेकपूर्ण व्यवहारकी विभीषण पर गहरी छाप पड़ी। लेकिन मानव-सुलभ थोड़ी कमजोरी भी उनके मनमे पैठी 'हे दैव, तेरी कैसी करामात है ? लका-नरेशका लघु भ्राता आज कहा और कैसी दशामे बैठा है ?' उनके अन्तरसे एक गहरी सास निकली और आखे छलछला आईं। लेकिन तुरन्त ही वे सचेत हो गये। 'अरे जीव, तू क्यों इतना दुःख मानता है ? सुख और दुःख, मान और अपमान ये तो एक ही सिक्केके दो पहलू हैं। जीवनकी यात्रामे ऐसी तरंगे तो आती ही हैं। जो इन्हे अपना स्पर्श न करने दे वही सच्चा पथिक है।''

एक ओर विभीषणके समाचार पाते ही राम प्रसन्न हो गया माना किसी खाये हुए मित्रका पता लग गया हो। स्थूल जगतमें मनुष्य परस्पर मित्रें या न मिलें एक-दूसरेका नाम भी न जानते हो तो भी क्या हुआ? सूक्ष्म जगत्तम तो मज्जागीय आन्दोलन अगम्य रीतिस अपना काम करते ही रहते हैं। दूसरा ओर विभीषणका नाम सुनते हो हनमान चिन्तातुर हो गये। वे जब लका गये थे तब एक विभीषण मन्त्रके सामने ही आत्मीयताका आनन्द अनुभव करके लौटे थे। हरिण विभीषण चाह जितना पवित्र हो तो भी भाई तो आखिर रावणका ही है न? इस विचारमें हनुमानका मन उद्विग्न हो गया। मुग्रीमकी गंका पक्की हो गई। जम्बरू दालमें कुछ काला है। जगद असा लाल्ला मनिक् मौन बन रहना? वह तुरन्त रामके पास पहुँचा और उनके पाव पकड़कर बोला स्वामी आप तो भोले हैं। मनुष्यका विश्वास करनेवाले हैं। परन्तु हमें विभीषणके आगमनमें शक्य पड़ सकता है।

पानमें पड़ लम्पजन समथन किया हमारे शत्रु हर तरहसे नाश मिले हुए पूरे हुए हैं। मानका हरिण बनाकर जमा कर ही उहान आपरा भुगवेमें डाला था। मृग भा टगा था और सानामानाका भा मानमें लाल लिया था। लमा है उन शत्रुमाका विचित्र माया। छलपनम है। हमारे पाछ और शत्रुपिडुल पीछ पड़ गए व अपवित्र लोग हैं। गुराणता जमा नाशियाका व जायक गमान पवित्र तपस्वाक पास

सब साथियोंकी आखे आसुओंसे भर गई। स्वयं रामकी आखे भी गीली हो गई। लक्ष्मण तो फूट-फूटकर रोने लगे। रामने उनकी ओर देखकर कहा “नहीं, केवल इतना ही करके छोटे भाईके नाते मेरे साथ नहीं रहा जा सकता। कट्टरसे कट्टर शत्रुदलमें भी मानवता होती है। दुष्टतापूर्ण वातावरणके बीच भी कहीं न कहीं ईश्वरीय अंग रहता है। अविश्वास, अविश्वास और अविश्वास ! ऐसे पूर्वाग्रहसे प्रेरित वातावरणके बीच अविश्वाससे कैसे काम चलेगा ? किसी भी जाति, समाज, राष्ट्र अथवा वर्गके पास सत्य या असत्यका एकाधिकार नहीं होता। यह बात सबको समझनी होगी। तुम वैसे तो वचनसे सर्वस्वका त्याग करके मेरे पीछे पीछे घूमते रहे हो। लेकिन यह बात तुम्हारी समझमें नहीं आई। इसमें मैं अपना ही मुख्य दोष देखता हू। मेरे सगका किसीको रग न लगे तो मैं स्वयं ही कच्चा हू, यह सत्य मुझे स्वीकार कर लेना चाहिये।”

सारा वातावरण कुछ ही देरमें बदल गया और आशापूर्ण वाणीमें रघुपति बोले “भाइयो, आपकी श्रद्धाको मैं देख सकता हू। इसके पहले भी मैंने उसे देखा है। लेकिन आपकी इस श्रद्धाके साथ मैं बुद्धिका योग कर देना चाहता हू। पापी और पापके बीच भेद करके चलना ही हमारी सच्ची पूजा है। इसीमें हमारी और हमारे राष्ट्रकी विशेषता है। अभी तो विभीषण आये ही हैं। अगर यहाँ आनेमें उनका कोई दुष्ट हेतु होगा, तो भी उनसे निवटनेमें हमें कितनी देर लग सकती है ? मेरी आकांक्षा यही है कि आप सबमें बुद्धियुक्त श्रद्धा प्रकट हो। तभी मानव-ससार स्वर्ग बन सकता है। वर्ना अविश्वास, छल-कपट, अनीति और असत्यके नरकसे मनुष्य-जाति कभी भी बाहर नहीं निकल सकेगी।”

सत्य सबकी समझमें आ गया, अपनी गलतियोंका पश्चात्ताप भी होने लगा। अपने आसपासके वातावरणको शुद्ध कर लेनेके बाद रामचन्द्रजीने हनुमानको आज्ञा दी. “जाओ, तुम ही सम्मानके साथ भाई विभीषणको यहाँ ले आओ।”

देखते ही देखते विभीषण हनुमानके साथ आ पहुँचे। तम्बूसे बाहर निकले रामके चरणों पर वे लोट गये। उनकी प्रत्येक क्रियामें

स्वाभाविकता लिखाई पड़ती थी। यह दृश्य देखकर कुछ क्षण पहले रामन जो उत्पार प्रकट किये थे उनकी यथायथा सबके अंत करणको प्रत्यक्ष रूपमें स्पष्ट करन लगी।

यह अनुभूत वचन कितना भव्य था सत्रमें ईश्वरका जग है। सबका विश्वास करा। अपनेको गुह्य बनाओ अधिक पवित्र बनाओ और आत्मगुह्यके बल पर तथाकथित गत्रुके हृदयको भी हिला दा। उसके भीतरके ईश्वरीय भावके दर्शन करनके लिए सग तत्पर रहा।'

*

फलाहार और जलपानकी विधि पूरी करनेके पश्चात् राम और विभीषण एकान्तमें बैठे। लक्ष्मण जगद और दूसरे छाने बड़े साथी अथवा कार्योमें लग थे। भक्त राज हनुमान राम और विभीषणकी बातचातमें कोई बाहरी बाधा न पड़ इस प्रकार सावधानीसे पहरा दे रहे थे।

विभीषण बोले मैं और रावण दोनों सग भाई हैं पीलम्प कुलके समान बगज हैं तो भी हम दोनोंके स्वभाव मिलते नहीं थे। वर्षों तक यह स्थिति बनी रही। जानकीजीके अपहरणके बाद और उनके लकामें जानके बाद रावणका अयाय मेर असाके लिए अमह्य हा उठा। कितनी ही रातें मन मनोमयनमें बिताइ। कितना ही धार मन जासू बहाये। रावणसे अपने मनकी बात कहू या न कहू यही विचार जनक बार मनमें उठता रहा। अन्तमें भीषा मिल गया। किमी अव्यक्त गतिने एक जोरका धक्का लगाया। मन बड़ भाईक सामन भरी सभामें अपना अंतर खोलकर रख दिया। उसका फलस्वरूप मुझे लका छोड़ना पड़ी।

कुछ क्षण स्वरकर विभीषण फिर कहन लगे अपनी जन्मभूमि को छोड़ना अयाय दूर करनका स्थायी उपाय नहीं है। यह ठीक है कि कुछ परिस्थितियोंमें स्थान छाननका भय दिखानमे प्रमाका हृदय द्रवित हा जाता है। जिस राज्यतत्रका मुख्य सचालक प्रजाके साथ हार्त्तिक प्रेमसे ओतप्रोत हो जाता है उसमें ऐसा उपाय कुछ परिस्थितियोंमें अमरकारक सिद्ध होना है। लेकिन सामान्य परिस्थितियोंमें स्थान छाननकी राति अमरकारक नहीं होनी। कभी कभी राज्यतत्रके निरवुग ग्रासक

पर कुछ इने-गिने व्यक्तियोंका नैतिक दबाव अंकुशका काम करता है। किन्तु यदि ऐसे व्यक्ति समय रहते कोई स्पष्ट बात न कहे या स्थान छोड़कर अन्यत्र चले जाय, तो निरकुश शासकको मनमानी करनेकी पूरी छूट मिल जानेका भी भय रहता है। इसके फलस्वरूप राज्य और प्रजा दोनोंकी हानि होती है।”

कुछ देर राघवके चेहरेकी ओर एकटक देखकर विभीषणने अपनी बात आगे बढ़ाई “हे राघव, जहा अन्यायके मूक साक्षी बनने जैसी दशा हो उस राज्यमे कैसे रहा जाय ?”

“विभीषणजी, जब राज्यकी समस्त प्रजा अन्याय सहते सहते उसकी आदी बन जाती है, तब आपने बताया वैसा होता जरूर है। परन्तु न्यायप्रिय मनुष्यसे अन्याय सहन न हो सके तब उसे प्रजाकी सोयी हुई न्यायप्रिय आत्माको जगानेके लिए अधिक असरकारक कदम उठाने चाहिये।

“वे असरकारक कदम कौनसे हैं ?” जिज्ञासासे पूछकर विभीषण रामके उत्तरकी प्रतीक्षा करने लगे।

राम . “जब वाणी व्यर्थ हो जाती है तब अनशनका साधन गहरा असर उत्पन्न करता है। हमारे इस महान देशमे ऐसी स्थिति खड़ी होने पर हमारे कुछ ऋषि-मुनियो तथा पूर्वजोने स्वेच्छासे उत्साहपूर्वक देहदान किया है। आप ऐसा न मानिये कि किसी विरले व्यक्तिके वलिदानका विंगल मानव-समूहो पर कोई असर नहीं होता। सख्याके बड़े जोड़की अपेक्षा गुणोकी अल्प सख्या सदा ही अधिक प्रभावगाली सिद्ध हुई है और सिद्ध होनेवाली है।”

“आपका कथन यथार्थ है। मेरे अकेलेके लंकात्यागसे ही संपूर्ण सभा पर असर पड़ता दिखाई दिया; परन्तु मुझे लगता है कि वह असर स्थायी नहीं रहा होगा। यदि वह असर स्थायी सिद्ध न हुआ हो, तो मेरे आश्रयमे और मेरी सहायतासे उन्नतिकी दिशामें आगे बढ़नेवाले लोगोके कार्यकी प्रगतिको रोकनेमें रावण जरा भी सकोच नहीं करेगा। मुझे तो अब यह भी लगने लगा है कि निर्दय रावण सीतामाताको भी अधिक कष्ट देगा। यहा न आकर मैंने लकामें ही अपना वलिदान

कभी कभी बहुत कठिन होती है। अपने प्राणोकी आहुति देनेकी अपेक्षा अपने सगे-सम्बन्धियोंके प्राण लेनेका कारण बनना जगतकी दृष्टिसे परहिंसा हो सकती है, परन्तु न्यायप्रिय और सत्यप्रिय मनुष्यको वह स्वेच्छासे किये जानेवाले प्राणत्यागकी अपेक्षा अधिक भयकर आत्म-हिंसा लगती है। लेकिन जहा ऐसा करना अनिवार्य हो वहा तो उसमें सम्मिलित होना ही पड़ेगा।”

“लोग आपको देशद्रोही अथवा कुटुम्ब-द्रोही कहेंगे तब ?”

रामचन्द्रका यह वाक्य सुनकर विभीषण बोले - “देशहितके लिए तो मेरे जीवनका एक एक क्षण बीता है, इसलिए लोगोकी ऐसी टीकाका मुझ पर कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा। कुटुम्ब-द्रोहकी शकाका समाधान भी मुझे मिल गया है। वैसे आपके जैसे पुरुष भी कहा लोगोकी टीका-से बचे हैं ? यह देखकर मुझे लगता है कि लोगोकी उलटी-सीधी या झूठी टीकाओसे भी सत्य-शोधकको कुछ न कुछ सीखनेको मिलता है, और श्रद्धेय व्यक्तिका आश्रय मिल जानेके पश्चात् भी अंतिम बल तो मनुष्य स्वयं ही होता है।”

इस प्रकार लकाकी, राजा रावणकी, लकाके राज्यतन्त्रकी, स्वयं अपनी और अन्य कुछ लकावासियोंकी व्यक्तिगत बातचीत पूरी करके दोनों उठे तब तक रामके सारे साथी तम्बूके पास आ पहुँचे थे। रामने सबका स्वागत किया तथा विभीषणको उनके बीच सम्मानपूर्वक बैठाया। सबमे सहज भावसे आत्मीयता स्थापित हो गई और आगे क्या कदम उठाये जाय इसका विचार करनेमे सब एकरूप होकर लग गये।

रामचन्द्र और विभीषणकी चर्चा आगे बढ़ी। विभीषणने कहा - “हे राघव, लकाके मानसको अथसे इति तक समझकर अंतिम सारके रूपमे इतना मैं आपसे कह देता हू कि राम और रावणका युद्ध त्रिकाल-मे भी किसीसे रोका नहीं जा सकता। और रावणकी तो आपसे क्या बात कहूँ ? रावण जब कभी बोलता है तब गरजकर यही कहता है कि वे तापस लकामे आये कि मैं उन्हें कच्चे चबा जाऊँगा। आप दोनों भाइयोंको वह तापसके रूपमें ही जानता है।” कहते कहते विभीषणके मुख पर निराशा और कुछ घबराहटकी रेखायें उभर आईं।

लेनका मुद्रामें पड़े हुए रामचंद्रका शरीर थोड़ा ऊंचा हो गया। जातुरतासे उन्होंने पूछा किभीषणजा क्या लकाकी सारी प्रजा युद्ध चाहती है? हनुमानसे तो मुझे मालूम हुआ है कि लकाका लोकमत युद्धक विरुद्ध है। सीताजीके अपहरणके बाद जसी व्यथा आपका हुई, वसी ही दूसराको भा हुई और हानी रही है ऐसा मेरे जाननमें आया है। आपका इस विषयमें क्या अनुभव है?

एक दृष्टिसे आपकी बात सच है। लकाकी प्रजा राजा रावणके एम अनक कुटुम्बसे पूरी तरह उस्त हो उठी है। फिर भी जब युद्धके विषयमें प्रजाका मत पूछा गया तब खुले रूपमें केवल मेरा ही मत युद्धके विरुद्ध रहा। और लगभग सारा ही सभाने मेरे मतकी ह्सा उड़ाई। ऐसी है लकाकी प्रजा और उसकी मनोदशा।'

जिम राज्यमें राजाकी निरकुश सत्ता होती है उस राज्यमें प्रजाकी यही दशा होती है'—यह कहते कहते सुग्रीवने अपना पुराना अनुभव सुनाया। अभिनयकी धाणामें उन्होंने यह भी सुना दिया कि बालिकी तरह रावणका भी सहार करना होगा, दूसरा बार्द भाग ही नहीं है। ऐसी बात जब कभी उठती तब वीर लक्ष्मण उसका समर्थन कर दिया करते थे। वीर अगल भी लका देखनेको आनुर था। रघुपुत्र मणि रामके मनमें विचारोका मयन चल रहा था गीच बीचमें वे चर्चाकी बातोंमें भी रस ले रहे थे। केवल हनुमानजा ही विषय मौन थे। उनका रस केवल रामचरणाकी सवामें ही था।

देवने ही देवन मध्या गीन गई। आकाशमें रजनीनाथ चंद्र अपनी सौन्दर्य के शोभामें चमकन लगे। पण्डितजी बाहर धानी दूरक मन्थनमें सनिरगत प्रहृतिश गामाका रम्यान कर रहे थे। कुछ मनिश तो राम और उाई मायियासे बाच चले रही अनिम मन्थना का रूप लगा इस बारेमें अविव्य-वागा भा करने लगे थे। इनमें लक्ष्मणजी एताका काग बाग्न गिनाई पना। लक्ष्मण भग्न एमा बातका गुण कन रस पान? वे बाग्न पडे भाई वह बाग्न तो देगिने। थर रिदना भा चमकन लगा।

हसते हसते विभीषण बोले “वीर पुरुष, आपकी बात ठीक है। लेकिन धवराइये नहीं। वह तो बिना जलका बादल और बिना आवाजकी बिजली है। वे दोनों हमारे युद्धकार्यमें बाधा नहीं डाल सकते।” कुछ क्षण रुककर बातको स्पष्ट करते हुए विभीषणने आगे कहा “हम नीचे स्थान पर हैं। इसलिए ऊंची दिखाई देनेवाली लका (चन्द्रविम्ब इस ओर झुका हुआ होनेके कारण) काले बादलकी तरह मालूम होती है। और बिजलीकी तरह चमकनेवाला राजा रावणका राज-महल है।”

मन्त्रणा रातमें देर तक चलती रही। उसमें अधिकसे अधिक गभीरता भी आ जाती थी और हास्य-विनोदकी भी रेलपेल हो जाती थी। चर्चामें अनेक रस आते और चले जाते थे। वीररसकी प्रधानता रही, परन्तु शान्तरस भी अपनी झाकी कराये बिना नहीं रहता था। समय समय पर कर्ण रस भी उत्पन्न होता रहता था। चर्चाके अंतमें सब लोग इस बात पर एकमत हो गये कि अभी भी युद्धको रोकनेका एक अंतिम प्रयत्न कर लिया जाय। किसी कुशल राजदूतको रावणके पास भेजा जाय और उसे इस बातकी स्पष्ट कल्पना करा दी जाय कि जानकीजीको लौटा देनेसे ही आज तकके सारे विरोध खतम हो जायगे, यद्यपि सबको यह भी लगा कि हमारे इस प्रयत्नका अर्थ रावण तो हमारी निर्वलताके रूपमें ही करेगा। परन्तु राम सदा समझौता करनेमें विश्वास रखते थे। उनके मनमें यह बात जम गई थी कि यदि अपनी शक्तिमें हमारा विश्वास हो और सदाका ओजस्वी सिद्ध हो चुका हमारा व्यवहार हो, तो फिर हमें इस ऊहापोहमें नहीं पड़ना चाहिये कि दूसरे हमारे वारेमें निर्वलताकी कल्पना करेंगे। वीर अगदको राजदूत बनाकर भेजनेका निर्णय किया गया। इसके दो कारण थे : (१) अगद किसी भी राजसभामें प्रभावशाली सधिवार्ता करनेमें कुशल थे। (२) वे बालिके पुत्र थे। उन्हें व्यक्तिगत रूपमें दो प्रकारके अनुभवोंका लाभ प्राप्त हुआ था। उन्होंने रामचन्द्रकी अपार नैतिक शक्तिका दर्शन किया था। साथ ही, इसके पूर्व अनेक बार रावणका सामना उनके पिताके साथ हो चुका था और उसमें रावण पराजित

हुआ था। इससे विवतव्यभूत बनी हुई लक्ष्मणा प्रजा चाहे ता अपन कृत्यके प्रति सजग बन सक्ती थी और रावणका रामका जमीन शक्तिका भान हो सक्ता था।

६०

अगदकी सधिवार्ता

मदोदरी मने तुमस हजार बार कहा है कि तुम्हारी पतिभक्ति सच्ची है परन्तु राजकाजकी बातें तुम्हारी समझमें नहीं आ सकती। मने दृढ़ निश्चय कर लिया है कि जीते-जी मैं रामपत्नी साताका मुक्त करनेके लिए कभी तयार नहीं होऊंगा। इसके लिए मैं और राजाकी समस्त प्रजा युद्धकी चुनौती स्वीकार करने तथा बड़से बड़ मकड़ उठानेको तयार हूँ। एक विभीषणके लका छोड़कर चले जानत था तुम्हारे जसी एक भोली नारीके नाराज होनेसे क्या मैं राज्यके स्वीकृत निणयाको छोड़ दूँ? नहीं, नहीं ऐसा कभी नहीं हो सक्ता।'

इतना कहते कहते रावणन दात कटकटा कर अपना एक पर जमीनसे उठाकर फिर जमीन पर औरसे पछाड़ा। उसके भीषण प्रहारसे सारी धरती कांप उठी। फिर भी मदोदरी भयभीत नहीं हुई। वह वाली

लकाके राज्यतन्त्रमें यदि स्त्री और पुरुष दोनों ही प्रााजन माने जाते हैं तो हम स्त्रियाका यह आवाज स्पष्ट है कि लकाकी नारिया रामपत्नी सीताजीके समान एक आदश सनारीका अपहरण अपमान और कष्ट नहा देख सकती। बेगक आज हमारा आवाज रुध गई है। ऐसे दुष्टृत्योके प्रति मनमें चिढ़ रहने हुए भी हम उसे व्यवस्थित और सामुदायिक रूपमें प्रकट नहीं कर सकती। यह मान सिन गुलामी हमारी जातिके लिए राजाकी बात है। परन्तु क्या कर? आजकी आज यह तबिन हममें उत्पन्न नहीं हो सक्ती। इसीलिए आपकी अद्वैगिनीके रूपमें मेरा दावा लकाके एक प्रमुख नासकके

रूपमें राजा रावणके सामने नम्रतासे प्रस्तुत करके मैं सन्तोष कर लेती हूँ। आप यदि व्यवस्थित राज्य-संविधानमें विश्वास रखते हों, तो मेरा यह दावा आपको सुनना चाहिये। मैं गद्दी राजनीतिकी बातें भले न समझ सकूँ, संभव है मैं अपने भोलेपनके कारण ऐसी राजनीतिका खिलौना भी बन जाऊँ। परन्तु ऐसे दाव-पेच या छल-कपटका शिकार बननेमें मुझे हीनताका अनुभव नहीं होता; हीनताका अनुभव मुझे इस बातसे होता है कि लकाके राजाकी पटरानी मानी जाने पर भी मैं इतनी सीधी-सादी बात भी आपके गले नहीं उतार सकती। मेरा अपने ईश्वरसे बार बार यह पूछनेका मन होता है कि क्या इस जगतसे सत्यका सर्वथा लोप हो गया है? परन्तु नहीं, मेरा अन्तःकरण इस बातको स्वीकार नहीं करता कि सत्यका इस जगतसे सर्वथा लोप हो गया है। तो फिर प्रश्न यह उठता है कि विनय और नम्रताको त्यागकर भी सत्य बात आपको क्यों न सुनाई जाय? महाराज, मुझे क्षमा कीजिये। मुझे आपकी राजनीति प्रजाके अधीन नहीं लगती, आपको सूझनेवाले सत्यके अधीन भी नहीं मालूम होती, आपकी यह राजनीति मुझे केवल आपके वासना-शरीरमें भड़के हुए शैतानके अधीन बनी मालूम होती है। महापुरुषोंके कथनानुसार आज आपके जीवनमें 'विनाश-काले विपरीत-बुद्धि' वाली उक्ति चरितार्थ हो रही है। आप याद रखें कि काल (मृत्यु) किसीको हाथमें लकड़ी लेकर नहीं मारता। सिद्धान्तके पालनके लिए जो नर या नारी कालका दास बनती है, वह महा भाग्यशाली है। परन्तु आप आज मिथ्याभिमान और अवमसे अवम वासनाके दास बनकर कालके मुखमें अपनी आहुति देनेको तत्पर हुए हैं। हे स्वामी, हे नाथ, आपकी पत्नीके नाते आपके इस कार्यसे मुझे अपार दुःख होता है। लकाकी एक नागरिक होनेके नाते मुझे बड़ा क्रोध आता है, परन्तु राजाकी पटरानीके नाते तो गहरा आघात ही लगता है। इस दावानलकी साक्षी बनानेकी अपेक्षा भगवान् मेरे प्राण ले ले तो बड़ा अच्छा हो।”

महारानी मंदोदरीके एक एक वचनसे हृदयकी आग और व्यथा टपकती थी। परन्तु इसका भी रावणके हृदय पर कोई प्रभाव नहीं

पडा। इसके विपरीत उसके राम रामम जायगी ज्वालायें फूटन लगी। उसका मुस राक्षसी मुद्रांगी पराकाष्ठको पटुच गया। इतनमें एक राज भवक महलमें आया और राजा रामणक प्रणाम करके बोला लकाधिराज पधारिये विलम्ब न कीजिये। रामका कोई दूत हमारा राजधानीमें आ पहुँचा है। वह आपसे मिलना चाहता है। किसी भी प्रकार धुँढ़का टालनकी रामरी आतुरता वह आपसे समझ प्रकट करना चाहता है।

सबकी बात सुनकर रावणने अट्टहास किया माना मन्त्रीका बाताका उपहास कर रहा हो। मेवकने कहा जा रामक उस दूतका बडा। म अभी आता हू। वह तापस राम यद्धसे डरता है और सीताको वापस लाने लिए दौडा आया है। आ हा हा मूर्खोंका क्षिरामणि।

मन्त्रिणकी उमस बाणी मुहसे निकलते निकलते रावण मचा गारमें घुम गया। एस अवसर पर उसे मदिरा और वारागनाके नृत्य क सिवा और सूझ भा क्या सकता था ?

*

जगन्ने जैसे ही रावणकी सभामें प्रवेश किया वस ही सारी सभा खडी हो गई। पता नहीं किस कारणसे परन्तु रावणसे भी सिंहासन पर बठा नहीं गया। एक क्षणके लिए उठकर वह तुरत बठ गया यद्यपि बठनक साथ ही उसे लगा कि बहुत बुरा हुआ। शत्रुके इस छोटसे दूतको मेरी सभाने इतना महत्त्व क्यों दिया ? म स्वयं भी एकाएक कैसे खन्ना हो गया ? उस इसका पता ही नहा चला कि उसका घोर अहकार इस क्रियामें गतकर कहा बह गया। इसीलिए कविने कहा है 'क्रियासिद्धि सत्य भवति महता नोपकरण।

जगत्वा यह स्वाभाविक प्रभाव रावणसे सहा नहीं गया। उसका मन आगेसे भर गया। अगद रावणकी इन सारी चेष्टाओको मुस कराने नुए देखते रहे। वे बोले लका राज सबसे पहले तो म आपसे थोडी यकिंगत बात करना चाहता हू। आप मुझ एकातमें बात करनेका अवसर देंग ता म आपका बडा कृतन हूगा।' अहकारी रावणने कहा

“आप राज्यसे सम्बन्ध रखनेवाली बातें करने आये हैं, इसलिए मैं चाहता हूँ कि उस विषयमें जो व्यक्तिगत बात मुझसे करनी हो वह भी आप भरी सभामें ही कहें। फिर भी यदि आप मेरे साथ एकान्तमें बात करना चाहें, तो मैं एकान्तमें बात करूँगा। लेकिन मैं चाहता हूँ कि बातचीतके समय मेरे मामा मारीच भी मेरे साथ रहें।”

“आप यदि चाहते हैं कि सभाके सामने ही मैं अपनी बात कहूँ, तो मुझे इसमें कोई आपत्ति नहीं है।” ऐसा कहकर अगदने अपनी संधिवार्ता आरम्भ की।

“महाराज, क्या आप यह स्वीकार करते हैं कि आपने सीताजीका हरण किया है?”

“हा, हा, मैंने सीताका हरण किया है। आपको इस बारेमें क्या कहना है?” इस प्रकार बोलते बोलते रावणका क्रोध भड़क उठा।

अगद शांतिसे बोले : “लंकानरेश, शांत रहिये, शांत रहिये। मैं आपके एक मित्रके नाते आपसे विनती करने आया हूँ। आप पवित्र पौलस्त्य कुलके वंशज हैं। ब्रह्मा और महादेवके आप परम भक्त हैं। भक्तिके लिए आप अपने मस्तक काटकर शकरके चरणोंमें रखते भी नहीं हिचकिचाये। इन्द्रको भी आपने अपने तपसे वशमें कर लिया है। आप इतने महान हैं। फिर भी आपने सीताजीके समान जगद्वन्द्य माताका अपहरण करनेका मार्ग अपनाया और वह भी साधुके वेशमें आपने उन्हें धोखा दिया। मुझे लगा है कि मामा मारीच और (उनके भानजे) आप दोनों ही अपना मार्ग भूल गये हैं। अभी भी बाजी आपके हाथमें है। रघुकुल-भूषण राम अत्यन्त उदार हैं। वे पतितोका उद्धार करनेवाले हैं। पथ भूले हुएोंके पथ-प्रदर्शक हैं। यदि आप जानकीजीकी स्वाभिमान और सम्मानपूर्वक उन्हें सौंप दे, तो वे क्षमा करनेको तैयार हैं। मेरी आपसे प्रार्थना है कि स्वयं अपने कल्याणके लिए भी आप यह सच्चा मार्ग ग्रहण करें।”

रावणसे सहा न गया। सिंहासनसे खड़े होकर उसने पृथ्वी पर जोरमें पैर पटका। सारी पृथ्वी डोल उठी। सभामें ध्वराहट मच गई। रावण गरजा “वन्दर जैसे मर्ख लोग द्रुत वनकर चले आये हैं और

मेरे उपदेश बन रहे हूँ। सभामें न आयाज उठी आपा पाजिय, महाराज। भरी सभामें आपरा अपमान करनेवाली हम जान गाव लेंगे। सभाजनाने य गल मुनवर रावण प्रमत्त हो गया। मूछा पर ताव देकर उसन कहा 'नहीं सभाजना बसा भी हो, य दूत बनकर आया है। दूतका दण देनमें हमारे रायनत्रकी निग हागा उमरी प्रतिष्ठाको बलक लगगा।'

जब धीरे अगद बाल उठ बाहु महाराज धागा पैर जग दम्बाको उठा लानेमें जिस रायनत्रकी प्रतिष्ठाको बलक नहीं लगा वह एक दूतका दण देनमें लज्जित न हो सवया असगत बान है। राजा रावण आप रायनत्रके नाम पर अथवा राजनीतिके नाम पर एकानी भाली भाली प्रजाका मुलायमें डालनका दम छाड़ दाजिय। म इस सभाका चुनौती देता हूँ कि मुग ता क्या लकिन मेरे हम पगको भी यदि कोई यहाम टिगा द ता म जीवन भर उसका दास बनकर रहूंगा। भर मामने दूतका नाम लेकर कोई बलवान थोड़ा अपनी बीरताका न छिपावे।

अगदकी इस चुनौतीसे सारा सभा स्तब्ध हो गई। कुछ क्षण पश्चात् एकमात्र हृद्रजित मेघनाद गवस खड़ा हुआ। परन्तु जम ही वह अगदके पास आया उनके छोट पहाडके समान पावको देखकर वह काप उठा। दूसराकी तो कोई विसात ही नहीं थी। रावण भी रामके दूतकी ऐसी गकिनको देखकर आश्चर्यचकित हो गया। उसन अगदसे पूछा 'आपका नाम क्या है?'

मेरा नाम अगद है। म बालिका पुत्र हूँ और रामके चरणामें समर्पित हो चुका हूँ।

अगदके परिचयमें बालिका नाम सुनते ही रावण काप उठा। वह धोल पड़ा 'क्या आप सचमुच बालिके पुत्र ह? बालिजी कहा ह?'

मेरे पिताजी रामचन्द्रके पवित्र हाथासे रणमें मारे गये ह। मरते मरते वे मुझे रामके चरणामें सौंप गये ह। अवसर देखकर जगन्ने आग कहा और न दोना अधिकारके आधार पर म सधिवार्ता करनेवाले दूतके रूपमें आपके भमक्ष उपस्थित हुआ हूँ।'

लकाके नागरिकोंको हनुमानजीकी शक्तिका परिचय मिल चुका था। वालिपुत्रकी बात सुनकर लकामे खलवली मच गई। सब मनमें कह रहे थे कि अब जल्दीसे जल्दी लकाका राजा अपनी गलती सुधार ले तो बहुत अच्छा। परन्तु कठोर और स्पष्ट सत्यको सुननेके लिए कोई तैयार नहीं था।

डरते डरते भी उद्धत रावणने कहा “आप रामके दूत बनकर संधिवार्ता करने आये यह तो ठीक है। परन्तु रामपत्नीको लौटानेकी बातको छोड़कर दूसरी कोई बात करनी हो तो आप कीजिये। दूसरा सब-कुछ करनेको मैं तैयार हूँ। मेरा सिर यदि चाहिये तो सिर भी मैं दे दूंगा।”

“बस कीजिये, राजन् ! अब मेरी सहन-शक्तिकी सीमा आ गई है। जगज्जननीको गठतासे उठा लाने पर भी आपको दुःख नहीं होता, दुःख प्रगट करनेके बदले आप सीताजीके अपहरणको गौरवकी वस्तु समझ रहे हैं। है न ऐसा ही ? और वर्तमान जगतके सर्वश्रेष्ठ वीर रामचन्द्रकी अपार उदारताका आदर करना तो दूर रहा, आपको अभी भी उनका मजाक सूझता है। जिस संधिवार्तामें जानकीजीको सम्मानके साथ लौटानेकी बातका स्थान नहीं है, वह वार्ता निस्सार है। अब मैं यह समझ गया हूँ कि आप युद्धके लिए बहुत उत्सुक हैं। तो आप अपनी यह उत्सुकता पूरी कर सकते हैं। लेकिन युद्ध न चाहने-वाली आपकी इस बेचारी प्रजाका क्या होगा ? खैर, जो प्रजा आपके जैसे सर्वसत्ताधारियोंके विरुद्ध सिर न उठा सके, उस प्रजाको ऐसी शक्ति प्राप्त करने तक इस तरहकी मुसीबतें भोगनी ही पड़ेगी। अच्छा तो प्रणाम। मैं अब जाता हूँ। मुझे दुःख है कि आपका और मेरा इतना समय व्यर्थ नष्ट हुआ। फिर भी इतना सन्तोष मुझे जल्द है कि भावी जगत यह बात नहीं कह सकेगा कि रामचन्द्रजीने राजा रावणको समझकर अपनी गलती सुधारनेका अवसर नहीं दिया। और यदि इतनी बात भी भविष्यकी पीढ़ियोंके ध्यानमें रहे, तो मुझे, मेरे साथियोंको तथा परम पूज्य राघवको पूरा सन्तोष होगा।”

लेकर भले न मारे, परन्तु जब मनुष्यका घम, बल बुद्धि और विचार भ्रष्ट हो जाय तब समझ लेना चाहिये कि कालका प्रहार होनवाला है। आपके बारेमें भी मुझे यह स्पष्ट दिखाई देने लगा है। वर्ना मूयक प्रकाशका तरह स्पष्ट बातमें आप उलटा रुख किसलिए अपनाते? परमात्मासे मेरी अंतिम प्रार्थना है कि हे भगवान, हम सब भल हा नष्ट हो जाय परन्तु मृत्युके समय भी मेरे पतिदेवकी इतनी सहायता तू अवश्य करता कि ये अन्त-समयमें तेरा नाम लेकर प्राण छोड़ें।'

इतना कहनेके बाद मन्दोदरी चुप हो गई। उसका दोना जैसे आमुओसे छलक रही थी। उसके आसू पाछनवाले बर-बमल रावणस कह रहे थे 'जाग जाग नर जाग रे।'

६५

तीन भाई

आखें मलते बड़ भाई कुम्भवर्णसे पास पट्टबकर रावण वाला बड़ भैया आप जानने ह कि लकावे आसपास महायुद्धके नगा बज रहे ह ?'

रावण तुम जानते हो कि मेरा स्वभाव हा कुछ ऐसा है कि भय और काम वासना पर मेरा जितना नियन्त्रण है उतना जाहार और निद्रा पर नहीं है। मेरी जठराग्नि सदा तज रहती है और मग्निष्क सदा जड़ बना रहता है। मेरी नीद इन नगाटोवे कारण ही विगड़ी है। कहा किमवे विरुद्ध और किस कारणस यह महायुद्ध लग जा रहा है ?

भया यह महायुद्ध हमारी त्वक् लिय हमारी प्रतिष्ठाक लिय लडा जा रहा है। जिस जनक-मुत्राका म मियिलामे नहा पा सका उमे मामा माराचकी महायनाग म दन्तारण्यस यन् ले आया ह। एक त्रिवक्त्रक नाभ मेरा कमसे कम सक्न्प यह है कि माताका च्छाक बिना उमक एक भा बगका म बागनावा हाकर स्पग नग कन्गा। भय और प्रणामन दानासि परे रहनवाग उम मन्नारीकी आग मेरा

आदर भी अवश्य बढ़ता जा रहा है। परन्तु लकामे उठा लानेके बाद उसे मेरे जीवित रहते वैसे ही रामको सौंप दू, तो हमारे समस्त कुलकी प्रतिष्ठा धूलमे न मिल जाय? टेक रखनेमे भले ही सिर कट जाय, परन्तु टेक चली जानेके बाद तो इस जगतमे जीना व्यर्थ है। कहो भैया, आपका क्या कहना है?”

“भाई रावण, टेककी कीमत तो मैं समझता हूँ। परन्तु नीति-विहीन टेक सच्चे अर्थमे टेक मानी जा सकती है या नहीं, इस बारेमें मुझे शका है। मुझे लगता है कि मिथिलाकी राम-विजय नीतिकी विजय थी। अलवत्ता, उन्ही रघुपति रामकी उपस्थितिमें वहन शूर्पणखा-के नाक-कान काटे गये थे, इसका मुझे बहुत दुख है। परन्तु उस कारणसे सीता जैसी महान सतीका अपहरण करना पौलस्त्य कुलके लिए उचित नहीं है। अनुचित कारणसे सारी लकाको हानि उठानी पड़े, ऐसा महायुद्ध करनेका लकापतिके नाते तुम्हे अधिकार है?”

कुभकर्णके ये वचन सुनकर रावणकी आखे क्रोधसे लाल हो गईं। उसका मन दुखसे भर गया। शरीर कापने लगा। क्षणभरमे शोककी घनी छाया उसके सारे शरीर पर छा गई।

यह देखकर कुभकर्ण सहानुभूतिसे बोला

“मुझे जो लगा वह मैंने तुमसे कहा। परन्तु यदि यह युद्ध अब निश्चित ही हो गया हो, तो सगे भाईके नाते मैं सच्चे हृदयसे तुम्हारा साथ दूंगा।” इतना कहकर उसने रावणकी पीठ थपथपाई और रावणके शरीरमे उत्साहकी लहर दौड़ गई।

उसी समय रामकी आज्ञा लेकर विभीषण कुभकर्ण-निवासमे आये। उन्हे देखते ही रावण वहांसे चलने लगा। विभीषणने तुरन्त रावणके पैर पकड़ लिये और उनसे चिपट गये। कैसी उत्कट भातृ-भक्ति! परन्तु मदांध रावणने तीखी कड़वी नजरसे उन्हे देखा और जोरसे पैर उठाकर चलने लगा। विभीषण खड़े हो गये। कुछ कदम चलकर अपने सुदृढ़, महाकाय ज्येष्ठ भ्राता कुभकर्णकी गोदमे उन्होने अपना मस्तक छिपा लिया। विभीषणके सिर पर हाथ फेरते हुए कुभकर्णने आशीर्वाद दिया और कहा

भाइ विभीषण, तुम बड़ भाव्यशास्त्री हा कि तुम्हें माय और नीतिक महासागरक समान रामचन्द्रकी गरण प्राप्त हुई। अहा, राम कस उगार महामानव ह। उहोन अपने शत्रुके भाईको भी विश्वास पूर्वक अपना लिया।'

बड़ भया अवधन रामकी प्रशंसा शब्दोंमें नहीं हा सकती। उनके माय मेरा सहवास जितना बन्ता जाता है उतना ही अधिक मुन यह विश्वास होता जाता है कि व मानव-दहमें एक महाप्रभुके समान सब देखे पुरुष ह। यह महायुद्ध आरम्भ हो उसके पहले उहान स्वयं मुन आप दोनों भाइयों आशीर्वाद पानके लिए प्रोत्साहित किया। बड़ भया जब मुझ परगान करनेवाला एक प्रश्न आपक सामने रख दूँ 'कान्हेरा रावण और आप दानाके विरुद्ध छाट भाईके नाते मेरे लक्ष्मण धमका — कतव्यका भग — हाना है या नहीं? भात कतव्य बड़ा है या समाज-कतव्य? इसमें घाड़ी भी सका नहीं कि भाई रावणका राज सब साम्राज्य दृष्टिसे देखन पर भी नीतिके विरुद्ध जहर है। आप क्या मानते हैं? आपका क्या आदेश है?

भाई विभीषण धम अधमका गहरा तत्वज्ञान तो श्रीराम जैसे महापुरुष हा समाना मकन ह। मुझमें यह गति नहा है। अपनी अल्प बुद्धिसे मैं बाधा-बहुत जा कुछ समझ सकता हूँ उसमें मुझ ता गमा गयना है कि तुम मन्त्र माय पर हा। रामक नतिर पक्षमें जाकर तुमने हमारा पौत्रस्य कुत्रा नाम उज्ज्वल कर लिया है। मैं तो रावणके भात मन्त्रधर्ममें बंध गया हूँ, जब कि तुम उस बंधनसे मुक्त हो गये हा। यह तुम्हारा पूर्वज-मन तुम बर्माका पत्र है। मैं तुम्हें हृत्पत्र आशिर्वाद देता हूँ। तुम निश्चिन्त हाजर जाओ। बहुत बार सत्यके गारिज अपन गगन-मन्त्र-पिपाका सुन्ना करना अनिवार्य हा जाता है — जना ना ना। मन्त्रमन्त्र नाकर उनसे लक्ष्मण भा पड़ता है।

कुम्हार जग नीतिकशास्त्र नीतिका इतना सुन्दर बानें मुनकी आगा विभाषणा नहा था। उनके मनका मन्त्र गान हा गया। व रामक नाम गये और उन्हें अपन दाना बड़ भाइयोंक स्वयं परिचित करणा।

युद्धका आरम्भ

१

‘ धर्मवीर रामचन्द्रजीकी जय ! वालिवन्धु सुग्रीवराजकी जय ! ’

— इस प्रकार जयघोष करता करता रामका महासैन्य लकागढके पासके मैदानमें जमा होने लगा। अहा ! कैसी अपार और कितनी असंख्य सेना थी श्रीरामकी ?

अपने प्रियपुत्र मेघनादको एकान्तमें बुलाकर रावणने कहा

“ आज हमें अपने एक भी सैनिकको दुर्गसे बाहर नहीं जाने देना है। लकागढके सभी द्वार बन्द करा दो। प्रजामें ढिंढोरा पिटवा दो कि प्रत्येक घरसे बड़ी उमरके सारे नर-नारी बाहर निकले और दुर्गकी दीवारके पास छिप जाय। ज्यों ही रामकी सेना दुर्गको घेरनेका प्रयत्न करे त्यों ही भेरी, ढोल और रणसिंघा दुर्गके बाहर बजाये जाय। इससे रामकी सेना यह समझेगी कि रावणकी सेना दुर्गके बाहर निकल आई है और रामके सारे सेनापति लडनेके लिए बाहरकी ओर दौडने लगेंगे। इस मौकेसे लाभ उठाकर हमारे प्रजाजन बड़ी बड़ी शिलायें गिराने लगे। इससे शस्त्रों और सेना दोनोंका बचाव होगा और रामकी सेनाके व्यूह टूट जायगे। रामकी सेना बिखर जायगी। इतने समयमें यदि रामकी सेनाके मुख्य-मुख्य सेनापति मार डाले जाय, तब तो राम पर विजय प्राप्त करना बहुत सरल हो जायगा। ”

छल-कपट सदा उसका सहारा लेनेवालेको ही मारता है। रावणका यह कपट हनुमानसे गुप्त नहीं रह सका। उन्होंने अगदको समय पर सावधान कर दिया “ मैं रामकी आज्ञा लेकर अकेला ही लकामें घुस जाता हूँ। इसलिए भीतरका मैं सब कुछ देख लूँगा और माता जानकीजीको निश्चिन्त रहनेका सन्देश भी पहुंचा दूँगा। क्योंकि यदि मैं ऐसा न करूँ तो रामके विषयमें झूठी अफवाहे लंकामें बहुत

लेंगी जो सीताजीको चिन्तामें डाल देंगी। अगदजी आप तो किसी चविचाहटके बिना दुग पर चढ़ जाइय। दुगकी दीवालक पास हुतम लोग छिपे ह, लेकिन आपको देखते ही या तो वे भाग जायग या आपने हाथो मारे जायग।

दाना सेनापति रामकी आना लेकर अपने अपने काममें लग गये। मरा ओर रामकी बाकी सारी सेना दुगसे बहुत दूर भदानमें सावनाम खड़ी हो गई। लकामें हनुमानकी फिरसे आवा दसकर 'यह फर कहा' लकामें आग न लगा दे इस भयसे सब लोग भागकर राममें घुस गये। एक ओर अगन्त और दूसरी ओर हनुमानने दसते ही गते माना मारी लवा पर अधिकार कर लिया। सनिकामें स बोई तहर भाग सा बोई घरमें घुस गये। इससे युद्धकी व्यवस्था टूट गई। रावणकी काफी सनिक युद्धमें मार गये और लवाकी सेनामें हाहाकार फैल गया। रावण और मघनाद — दोनों पिता-पुत्र अपने छल-चपलकी से तरह घोर असफलतामें परिणत हुआ देखकर बड़ी चिन्ता और पैशानामें पड़ गये। युद्धके आरम्भमें ही भयकर अमंगलके चिह्न दिखाई देने लग।

२

प्रथम निवसक युद्धकी सारी बारखाई अगन्त और हनुमानन जागरामक सामन बन मुनार्। विभाषण रामके पास हा बठ ब। व दायै युद्धक आरम्भमें ही प्राण हई यह मंगविजय हमारे पणके जनकानिरामें गर उलप्र विम बिना नग रंगा। रघुकुल मणि रामधर ॥ यागिरात्र = रमणि रनगे भन्ना म क्या कहूँ? परन्तु मुयावगाज और अलगाग ॥ अवश्य प्रार्थना करेगा कि आप जना नम यद्धमें शत्रुन मावधान रनिये।

मग रान रभार बनकर भक्त विभाषणक आत्मरक्षा उन्गाग मुन ॥ थ। उगा गमय एक दूक आना लकर अन्तर आया। जाने या उगन ॥ अर रानरति रात्रा और उनका पुत्र रनजिन एक अरमित रर व्यापरा रचना कर रर ॥ रम एक-दा निर रगि अपने घोर रनिराता लराम दूर रग ने ता टार ने।

दूतकी बात सुनकर अगदसे रहा न गया। वे बोल उठे “मैं अपने पिताके समयसे राजाधिराज रावणको नखसे शिख तक जानता हूँ। उनके पास शारीरिक और वैज्ञानिक दोनों शक्तियाँ हैं, परन्तु उनकी मानसिक शक्ति बहुत मन्द है। इस कारणसे वे सकटके समय शिथिल पड़े बिना नहीं रहते। इस युद्धमें भी ऐसा ही होगा। इसलिए कोई जरा भी घबराहटमें न पड़े।”

लक्ष्मणने इसका समर्थन करते हुए कहा “कुमार अगदजीका कहना बिल्कुल सच है।”

विभीषण बोले “बात तो सच है। परन्तु इसका मूल कारण नैतिक दुर्बलता ही है। मेरे बड़े भाई राजा रावण मिथ्याभिमानके कारण नैतिक दुर्बलताके शिकार हो गये हैं। अब तो उनका मिथ्याभिमान इस सीमा तक पहुँच गया है कि इस जन्ममें वे उससे शायद ही मुक्त हो सकेंगे। सच बात यह है कि उनके पास भगवानकी दृष्टिसे तो लक्ष्य है, परन्तु गुरुकी दृष्टिसे उनके पास कोई लक्ष्य नहीं है। मनुष्य चाहे तो स्वयंको ही अपना गुरु मान सकता है, परन्तु ऐसे मनुष्यको सतत अपनी कड़ी टीका करते रहना चाहिये। इसके अभावमें जगतका महानसे महान मानव भी अन्ततोगत्वा सब ओरसे हार ही जाता है। वैसे इस युद्धमें मुझे राजा रावणका तथा मेरे बड़े भाई कुभकर्णका भी भय नहीं है, क्योंकि इन दोनोंने अपनी आत्माको स्थूल सम्बन्धोंके सामने गौण स्थान दे रखा है। इस युद्धमें सबसे ज्यादा भय मुझे इन्द्रजितका है। उसके पास प्रभुभक्ति, गुरुभक्ति और तत्त्वभक्ति तीनों हैं।”

इन्द्रजितका सम्पूर्ण वृत्तान्त सुननेकी सबकी जिज्ञासाको देखकर विभीषणने आगे कहा “मेघनादका नाम तो आप सब जानते ही हैं। वह मेरा भतीजा और लकापति रावणका पुत्र है। अपनी तपस्या और त्यागके द्वारा एक समय उसने इन्द्रको भी पराजित कर दिया था, इस कारण उसका नाम इन्द्रजितके रूपमें प्रसिद्ध हुआ।” इस प्रकार कहते कहते विभीषणने इन्द्रजितकी वीरता, तपस्या तथा पत्नीभक्तिकी भी अनेक बातें सुना डाली।

सनी मदोदरीके नामसे तो सारे साथी परिचित थे ही। परन्तु आज इन्द्रजितकी ब्यासे के सती मुलोचनाके नामसे भी परिचित हुए। राक्षसाम भी ऐसी महा सन्नारिया समाजको सुशोभित करती ह, यह जानकर बहुरत्ना वसुधरा जैसे बचनकी सार्यवता सबकी समझमें आई और उनके हृदय हृषसे नाच उठ।

मेघनाद यदि इतना पवित्र है, तो वह सीताजीको लौटा देनेकी सूयके प्रकाशकी तरह स्पष्ट बात अपने पिताको ब्यो नहीं समझा सकता ?' जाम्बवतका यह प्रश्न सुनकर विभीषणकी वाग्धारा फिरसे बहने लगी

बार जाम्बवन्तजी आपका प्रश्न वास्तवमें बड़ा सामयिक और मौलिक है। मनुष्यकी जीवन-शैली एक अथमें भाघातो और प्रत्याघाता के याग जसी ही है। प्रकृतिकी लीला हमीलिए ता किसीकी समझमें नहीं आता। इन्द्रको जीतते समय तो मेघनादकी तपस्या और त्याग चरम सामाको पहुँच गये थे। इससे मेघनाद इन्द्रिय जितसे आग बन्कर इन्द्रजित बन गया। परन्तु इन्द्रको जीतनक बाद उसने लावण्य-पुत्र इन्द्रपत्नी पर कुत्सि डाली और मुग्धता उत्पन्न होनेके साथ ही मेघनादमें मदाधता भी उत्पन्न हुई। इसके फलस्वरूप एक ओर उसने इन्द्रका लकामें लाकर कारावासमें डाल दिया और दूसरी ओर लकाकी छाठामा राज्यसभामें बधनमें बध इन्द्रकी उपस्थितिमें इन्द्राणीका अनाभिनीम अपमान भा कराया। रावणने तो पुत्रकी इस निलज्जताकी प्रणामा ही की परन्तु वह प्रसंग लकाके इतिहासका एक कदम पष्ठ बन गया है। निश्चित ही सीताके अपहरणको मेघनादने उचित नहीं माना और आज भी वह उस उचित नहीं मानता। परन्तु उपरोक्त अपकृत्यके पश्चात् मेघनादका तज नष्ट हो गया है। अब आप ही कहिये कि मेघनाद अपने पिताको यह बात कम समझा सकता है कि सीताजीको लौटा दिया जाय ? और इस प्रयत्नमें उसे सफलता कैसे मिल सकती है ?

रामचन्द्रजीको जिस प्रश्नका हल अभी तक मिल नहा रहा था वह विभाषणकी यह बात सुनकर उन्हे मिल गया। मेघनादसे कौन योद्धा लड़ सकेगा और इसके लिए कितने समय तक प्रतीक्षा करनी

पड़ेगी, इन प्रश्नोंका उत्तर भी रामको तुरन्त मिल गया। किसी महा-मानवको छोटी छोटी बातोंसे भी जिस रहस्यका क्षणभरमें पता चल जाता है, उस रहस्यको जाननेके लिए सामान्य जनोको अनेक जन्म देना पड़ते हैं। क्योंकि महापुरुष छोटीसे छोटी प्रक्रियाकी तुलना भी सैद्धान्तिक मूल्योंके साथ करके ही आगे बढ़ते हैं, जब कि सामान्य मानव निमित्तोंके सिर पर ही दोषारोपण करके रोते और भटकते रहते हैं। भवमुक्ति और भव-भ्रमणके बीचका भेद जो लोग जान सकते हैं, उन्हें किसी क्रियाकी अपेक्षा उसके पीछेके आशयकी महत्ता आसानीसे समझमें आ सकती है।

६७

मेघनादका पराक्रम

“प्रिये, सुलोचना! मैं जानता हूँ कि तुममें नारी-जातिकी जो ममता लहरा रही है, उसके कारण सीताजीकी ओर तुम्हारा विशेष पक्षपात है, और रामके प्रति भी तुम्हारे मनमें आदरका भाव है। फिर भी तुम मेरी अर्द्धांगिनी हो, इसलिए मैं तुमसे एक भिक्षा मागने आया हूँ। तुममें सतीत्वका जो महान गुण है, तुम्हारे भीतर सतीत्वके तपका जो तेज है, उसे तुम अपने अन्तरकी शुभेच्छासे मुझ पर बरसा दो, जिससे रामको पराजित करके मैं पितृभक्तिके ऋणसे उद्धृत हो सकूँ।”

इस तरह बोलते बोलते मेघनाद गद्गद हो गया। उसकी आँखोंसे आसुओंकी दो-चार बूंदें चूँ पड़ी। पतिका यह करुण दृश्य देखकर सती सुलोचनाकी आँखें भी सजल हो आईं। परन्तु धैर्यके साथ सत्य भगवानका स्मरण करके वह बोली

“प्राणनाथ, हम जैसी नारियोंके लिए अपने पतिके सिवा दूसरा शायद ही कोई उपास्य होता है। परन्तु स्वामिन्, स्त्रीका 'हृदय जिस प्रकार पानीकी तरह तरल होता है, उसी तरह पतिसे एकनिष्ठा-की उसकी आशा भी अत्यन्त तीव्र होती है। इस कठिन प्रसंग पर

ता बात आपसे कह रही हूँ, उस आप कही ताना या उल्टाहना न
म लेना। क्योंकि मुझ विवाह होकर अपने हिमरूप बने हुए हृदयको
रानक लिए इतना कहना पड़ता है। द्वाणीका खुला राज्यसभामें
धीमत्स अपमान किया गया था, उसके दृश्यको मैं किसी भी तरह
नहीं पाती।

अपन इन शब्दोंके कारण पतिके लज्जित बने हुए मुखको देख
मुञ्चिना बोला आपके अन्तरका इतना पश्चात्ताप मेरे हृदयको
पे देनेके लिए पर्याप्त है। बिना साचे विचारे मुझमें अविनय हो
हा ता मुझे क्षमा करना स्वामी। अब जानकीके विषयमें अपनी
स्पष्ट कर दूँ। नारीके प्रति नारीका पणपात हा इसमें कोई
राभाविकता नहीं है। परन्तु स्वामाभक्तिके सामने यह वस्तु गौण बन
ती है ऐसा मेरा स्पष्ट अनुभव है। सीताजीके प्रति मेरी महानुभूति
एक महामतीके प्रति मेरे सद्भावके कारण थी और है। उस महा
के मनीष पर अथवा गरीर पर जब तक सीधा आक्रमण नहीं होता
तक तो मैं सहन करूँगी परन्तु यदि बात ऐसे आक्रमण तक बढ़े
मेरा पतिभक्ति मुझ पतिके अथवा समुद्रके ऐसे अपकृत्योंके विरुद्ध
नक लिए अवश्य प्रेरित कर दगी। मरी पतिभक्तिकी ये स्पष्ट मया
है। और मैं इस अवसर पर आपसे नम्र प्रार्थना करना चाहूँगी
आपकी पतिभक्तिकी भी ऐसी स्पष्ट मर्यादा होनी ही चाहिये।
महत शूणखाके साथ रामके सामने लक्ष्मणन ओ दुष्यवहार किया
का दुःख मेरे मनमें आज तक बना हुआ है। रामचन्द्रजीके प्रति
मनमें अकपनाय सम्भाव उत्पन्न होता है। लेकिन यह बात मरी
ममें नहीं जाती कि यह कुटृत्य उनकी उपस्थितिमें कैसे हुआ। यह
बकर ही मैं अपने मनका सात्वना देता हूँ कि कभी कभी प्रत्यक्ष
धारामें छाट या बड़ दाघ लियेई पन्ते ह। परन्तु जिनके अधिकतर
प शुभ हा जिनका जाग्रत पूण परित्र हा उम भगवान मानकर
नमें मुय का आपत्ति नहा है।

इतना बातचीतके बाद अपन पतिके गन्धमें माला पहनाकर तथा
न कने पर अपना काम और प्रमत्त हाथ रखकर मुञ्चिना बोली

“मेरे प्राण, कौनसी पत्नी ऐसी होगी, जो अपने पतिकी विजय न चाहेगी ? ” लेकिन इतना कहते कहते उसका हृदय घडकने लगा और उसके मुखसे निकल गया “इस समय आशिक विजय तो आपकी अवश्य होगी, परन्तु भविष्यके गर्भमें क्या होगा, कौन जानता है ? . . ”

इसके बाद सुलोचना पुनः पतिप्रेममें बहने लगी और आखे झुकाकर मूक आशीर्वाद देती हुई खड़ी रही। अपनी प्रणयवश होते हुए भी सत्य तथा शीलके ब्रतोका स्मरण करनेवाली सुलोचनाकी सुन्दर छविको मेघनाद कुछ क्षण और एकाग्रतासे देखे, इसके पूर्व तो पिताने उसे पुकारा। मेघनाद इस दृश्यको हृदयमें अंकित करके तुरन्त सीधा रणागणमें पहुँच गया।

चारो दिशाओमें वज्र रही रण-दुदुभियोंके नादसे वातावरण गूँज उठा। आज पिता-पुत्रकी इस जोड़ीने युद्धमें अपूर्व कौशल दिखाया। घरती कापने लगी। आकाशसे जमे हुए हिमके टुकड़े बरसने लगे। जहाँ जहाँ आगकी ज्वालाये लपलपाने लगी। चारो ओर कोहरेका अधिकार छा गया। रामके पक्षमें असंख्य सैनिक घायल होने लगे। न तो अगद इससे बचे, न सुग्रीव बचे। हनुमानका सिर भी खूनसे लथपथ हो गया और लकाको एक बार जलानेवाले हनुमान आज स्वयं ही मानो जलने लगे। रामकी सारी सेना अस्त-व्यस्त हो गई और उसमें भाग-दौड़ मच गई। राम-लक्ष्मण दोनों युद्धके स्थान पर दौड़ गये। घने अधिकारको दूर करके दोनों भाई घायल सैनिकोंकी सेवा-शुश्रूषामें लग गये। कितने ही समय बाद बड़ी कठिनाईसे परिस्थिति सभली। लकामें सर्वत्र नगाड़े बजने लगे। रावणकी विजयकी घोषणा समग्र समर-भूमि पर गूँजने लगी। अहंकारी रावण मूँछों पर ताव देने लगा। लकाके दुर्गमें सर्वत्र मद्यगृहोकी तैयारियाँ होने लगी। केवल गुप्त भविष्य ही ‘विनाश-काले विपरीत-वृद्धि’ कहकर इस ऊपरी तथा निरे बाह्य विज्ञानका विचित्र विनाश-ताडव देखकर रहस्यपूर्ण हसी हँस रहा था !

*

अपने पतिके दुष्ट आचरणसे मंदोदरी अतिशय दुःखी थी। आज वह गुमसुम बनकर आवासमें बैठी बैठी आकाशके सामने एकटक देख

सबमुक्त यः राजरानिया हा लमा था विमान लामे छाव
हुए भान्तोगवक धानावरणमें पिछले चौदाग पटाग अन्न ज्ञ छा
रया था। दाताक हृदयकी एक हा प्राधता थी भगवान लमार
म्यामियाना सम्बुद्धि ने। लमक विपरीत गवण और मपनाथा ता
अपनी यात्रा गक्रिया पर ही पूरा विश्वास था। दाता परमात्र लमा
स्वप्नमें रमे रहत य नि राम लम्पणने माय उनकी गूरी सेनाग वनूमर
निवन् गया है जयका निवन्तवाग है। लसे विपरीत धानावरणमें
सनी मदोन्नी और मुनीवनाके वेनापूण हृदयाकी पुनार कीन गृनना ?
लामे पग पग पर लमा घटनायें पटता थी जिहे देग मुनार नामाय
मनुष्यका श्रद्धा सत्य प्रेम और यायक मगल तत्त्वा परम गि जाय।

उपर रामके पक्षमें जाम्बवतगे लकर अगल तब सभा मारया
अपना सेनामें सावधानीका नया प्राण पूनार सनिराक्ते प्रामांति
वरनके कायमें उग गय। हनुमान सुग्राव और विभीषण भी सयमें
साहस और चतयका मचार कर रहे थे। एमे समयमें चार लम्पण
एक ओर सडे सडे सोच रहे थे। प्रथम तो वे दुवल विचाराक प्रवाहमें
बहने लगे ऐसा महायुद्ध लडेकर लाया जीवोका सहार वरनकी

अपेक्षा गुप्त रूपमें सीतामाताको अशोक वनसे उठा लाना क्या गलत होगा ? ” लेकिन तुरन्त उन्हें रामके इन उद्गारोका स्मरण हो आया । “हमारे कार्यमें ऐसा छल-कपट या गुप्तता हो ही नहीं सकती, हम ऐसा करे तो वह एक प्रकारसे रावणका अनुकरण ही माना जायगा । भले ही हमारी चीज चोरी गई हो, परन्तु उसे चोरीसे वापिस लानेका काम हमारी मानवताको शोभा दे ही नहीं सकता । चोरी कभी चोरीसे नहीं मिट सकती । हमें तो गैतानोको भी मानव बनानेका भगीरथ कार्य करना है । हमें ऐसा प्रयत्न करना चाहिये, जिससे जगतके प्रत्येक प्राणीको इस बातकी प्रतीति हो जाय कि अन्तमें अन्यायकी पराजय होती ही है । ”

इन प्रेरक उद्गारोंने लक्ष्मणको अपने मोहसे जगा दिया । वे सावधान हो गये । उन्होंने सकल्प कर लिया “ इस युद्धका जल्दीसे जल्दी अंत लानेके लिए मुझे समग्र शक्ति एकत्र करके शत्रु पर टूट पड़ना चाहिये । ” क्योंकि ब्रह्मचर्य-पालनके कारण लक्ष्मणकी शक्ति अनेक गुनी बढ़ गई थी । उन्होंने सोचा “ यदि भगवान् रामके पास जाऊंगा, तो वे मुझे अकेले रणमें जूझनेकी आज्ञा नहीं देंगे । ” अतः रामके समीप गये बिना ही मनमें उन्हें प्रणाम करके लक्ष्मण अकेले सग्राममें कूद पड़े ।

मेघनादने अकेले युद्धमें कूद पड़नेवाले लक्ष्मणको देखा । तुरन्त उसने लक्ष्मणके आसपास राक्षसोंकी एक टुकड़ी खड़ी कर दी ।

लक्ष्मणको अपनी गलती तुरन्त समझमें आ गई । परन्तु अब क्या हो सकता था ? रामके पक्षमें भी लक्ष्मणके साहसी कदमके साथ कुछ बहादुर सैनिकोंने साहस दिखाया, परन्तु वे राक्षसोंके घेरेके बाहर ही रहे । घेरेको तोड़नेके लिए उन्होंने जी-तोड़ परिश्रम किया, परन्तु घेरेके भीतर लक्ष्मणको मेघनादने उलझा रखा था और घेरेके बाहर हनुमानसे लेकर अगद तक तथा दूसरे भी मुख्य मुख्य योद्धा कुभकर्णसे लड़नेमें लगे हुए थे । इसके सिवा, इस ओर रावणने ऐसी माया रची कि सर्वत्र मेघाच्छन्न रात्रिके जैसा अंधकार छा गया । राम लक्ष्मणको खोज रहे थे । वे लक्ष्मणके मुहसे युद्धके समाचार सुननेको आतुर

रावण, मेघनाद और लकाकी प्रजाके ऐसे लोग, जो युद्धप्रेमी थे, सारी लकामे जय-जयकार कर रहे थे। मिथ्याभिमान सारी लका पर छा गया था। दूसरी ओर रामकी छावनीमें लक्ष्मणकी मूर्च्छा दूर करनेके विविध प्रयत्न किये जा रहे थे। परन्तु कोई भी प्रयत्न सफल नहीं हो रहा था। सारी छावनीमें शोक-सागर लहरा रहा था। वातावरणमें सर्वत्र उदासी और निराशा छा गई थी।

विपादकी मूर्ति बने हुए रामचन्द्रका हृदय भर आया। कुछ क्षण बाद अश्रुधारा बहने लगी और उनकी वाणी फूटी

“भाई लक्ष्मण, एक बार तो जागो और दो शब्द मुझसे बोलो। सहोदरके बिना मैं यहाँ कैसे जीवित रह सकूँगा? तुमने मेरे लिए कितने कष्ट उठाये? अयोध्यामें तुमसे मिलनेकी आशामें दिन-रात तुम्हारा ही ध्यान करनेवाली बेचारी उर्मिलाका क्या होगा? माता सुमित्रा जब अपने लाडले लालको नहीं देखेगी, तब उनके हृदयके कैसे टुकड़े टुकड़े हो जायेंगे? विदाके समय कहे हुए उनके वचन और सागरके समान उनका उदार और विशाल हृदय याद आता है, तब मेरे हृदयको गहरा आघात लगता है। मैं तो अपने धर्मका पालन करनेके लिए वनमें आया था, परन्तु तुम्हें क्यों साथ लाया? तुम और सीता मेरे साथ न होते, तो कितना अच्छा होता? हाय, अब मैं क्या करूँ? जीवन-सगिनीके नाते सीताका विरह मुझे अतिशय पीड़ा पहुँचाता है, परन्तु उतना नहीं जितना तुम्हारा विरह सताता है। इतनी चरित्रशील होते हुए भी सीताके मनमें सुवर्ण-मृगका आकर्षण क्यों उत्पन्न हुआ होगा? अधीर बनकर उसने मेरे पीछे तुम्हें क्यों भेजा होगा? तुमने जो रेखा खींच दी थी, उसे सीताने क्यों लाघा होगा?”

शोकग्रस्त राघव अपार विलाप करने लगे। तरह तरहकी बातें याद करके वे लक्ष्मणके सुपुष्ट मनको आदोलित करने लगे। उधर अशोक वाटिकामें अकेली जानकी भी अगम्य वेदना अनुभव करने लगी।

रामचन्द्रजीकी अपार मनोव्यथासे हनुमान घबरा गये। परन्तु उन्होंने समझ लिया कि यह समय रोने-धोनेका नहीं, विवेकके साथ तुरन्त कर्तव्य-पालन करनेका है। वे तेजीसे लकाकी ओर दौड़े और वहाँसे

एक सत्यनिष्ठ तथा नीतिप्रमी बचका वृत्त लाय। उनका नाम सुपेण था। सुपेण कतव्य निष्ठ था। सच्चे बचके लिए अपन कतव्यक सामन राजनीतिक दलबदी जरा भी बाधक नहीं हानी। तब गारारिक कष्ट तो उसके कतव्यमें बाधक ही ही बस सकत ह ? सुपेण निद्राक स्वाभाविक गरीर घमकी भी परवाह न की और किसी तरहकी पूछनाछ किय बिना ही अपने साधनाके साथ बे रामकी छावनामें आ पड़्य।

सब प्रथम उहाने लक्ष्मणजीक गरीरकी परीक्षा कर ली और रघुकुल मणि रामस कहा आप किसी तरहकी चिंता न कर। इनका शरीर पूरी तरह खतरेसे बाहर है। आपके साथ इनक भक्तिपूण मनका जो अनुसधान बना हुआ है उसके कारण भूच्छित अवस्थामें भा लम्भण व्यधित मालूम होते ह। इसलिए पहल आप स्वस्थ हो जाइय।

सुपेणके ये वचन सुनते ह रामका आत्मयोग पुन तजस्था बन गया। उहोने तुरत अपन भीतर पठी हुई दुबलताका निष्काश फेंका। और बे अपन साधियाको आश्वासन देन तथा सनाक भनिकाको स्वस्थ करनक कायमें लग गये। इतनमें लक्ष्मणन भी धीरेसे करवट बग्ल। लक्ष्मणकी आखें तो नहीं खुला परन्तु उनके करवट फरनस ह रामकी सनामें प्राण-संचार हो गया। सुपेणन कहा 'म प्राणाका टिकाय रखनवाली सामान्य औषधि तो दता ह। परन्तु एक विनिष्ट औषधिकी आवश्यकता होगी जो मरे पास नहीं है। वह औषधि द्वाणगिरि पर मिलेगी। और उहाने गिरि गिखरके औषधिवाले भागका निगानिमा भी लिखकर रामको दे दी।

यह काम हनुमानके सिवा दूसरा कौन कर सकता था ? राम चन्द्रो हनुमानके सामने देला। हनुमान तो राम-कायक लिए ही सम पित थे। उहान प्रसन्नतासे रामक चरणामें प्रणाम किया और एक छोटसे विमानमें बैठकर द्रोणगिरिकी निगामें प्रस्थान किया।

हनुमान औषधि लेकर लौटें उसके पूव ही लक्ष्मणक गरीरमें जतना स्फुरित हो चुकी था। परन्तु सुपेणन एक क्षणके लिए भी लक्ष्मणका छाडा नहीं। सच्चे वैद्यके लिए तो महारोगस पीडित रोगी ही मानो भगवानकी तरह उपास्य दबना बन जाता है। सुपेणके इस

आचरणको भगवान राम पुलकित होकर निनिमेष देखते रहे। इतनेमें हनुमानने आकर रामके चरणोंमें मस्तक रख दिया। रामने हनुमानके मस्तकको चूमकर उन्हें दृढ़ आलिंगनमें बाध लिया।

“हनुमान, इतना बड़ा वनस्पतिका पहाड़ किसलिए उठा लाये? क्या हम सबको मूर्च्छित बनाना है?” रामचन्द्रके अंतिम वाक्यने आस-पासके सब लोगोंमें हास्यकी लहर दौड़ा दी।

सुग्रीवने विनोद किया “मेरे इन मित्रको बोझ उठानेमें बड़ा आनन्द आता है।”

परन्तु वैद्य सुषेण तुरन्त समझ गये कि औषधिकी पहचान भूल जानेके कारण मुख्य मुख्य औषधियोंका सग्रह हनुमान उठा लाये है। उनकी कुशाग्र बुद्धिको देखकर वैद्यराजकी प्रसन्नताका पार न रहा। उन्होंने आवश्यक औषधिको तुरन्त पहचानकर लक्ष्मणजीकी नाकके पास रख दिया। इसके बाद ब्रह्मरन्ध्रसे लेकर विविध द्वारोंके पास उसका लेप किया। फिर सारे शरीर पर हल्के हाथसे तेलकी मालिश की। इसके फलस्वरूप लक्ष्मण कुछ ही देरमें एकाएक उठ बैठे, मानो गहरी नींदके बाद अगड़ाई लेकर जागे हो। रामकी छावनीमें आनन्दकी लहर फैल गई।

मुख्य मुख्य योद्धा एक-दूसरेके पास बैठ गये। हनुमानजीने अपनी यात्राका वर्णन सुनाया। हनुमान वहासे कैसे गये, औषधिकी पहचान भूल जानेसे उन्हें कितनी परेशानिया उठानी पड़ी, मार्गमें साकेतकी राजधानी अयोध्याके पास कैसी परिस्थितिमें वे दुर्घटनाके शिकार बने तथा घड़ी दो घड़ीमें ही अयोध्यावासियोंसे उनका कैसा अनोखा मिलन हुआ — यह सारा वृत्तान्त सबने एकाग्रतासे सुना। वह कैसी आनन्दकी घड़ी थी! लक्ष्मणजी अब पूर्ण स्वस्थ दिखाई देते थे। परन्तु कौन जानें किसलिए रामका मन चिन्तातुर बनता मालूम हुआ। अपनी चिन्ता किसी पर प्रकट न हो इस ढंगसे राम निरकर रहे थे। परन्तु हनुमान जैसे भक्तसे यह बात सकती थी? वे समझ गये कि अयोध्यावासियोंको लकासी करपना आयी, वह भी श्रीरामको अच्छी नहीं

भरतका धनुष-प्रयोग

भरत नन्दिग्राममें रहकर अपने दिन बिता रहे थे । वनवासी रामका स्मरण कभी कभी उन्हें वियोगकी वेदनामें डुबा देता था । परन्तु चौदह वर्षकी अवधि उन्हें कुछ ही देरमें आश्वस्त कर देती थी । 'लक्ष्मण कैसे भाग्यशाली हैं ! उन्हें श्रीराम और सीताजीकी चरण-वन्दनाकी प्रत्यक्ष प्रसादी मिलती है ।' इस विचारसे क्षण भरके लिए भरत निराश हो जाते थे, परन्तु रामकी चरण-पादुकाये उन्हें आह्लादकी दिशामें ले जाती थी । राज्यतन्त्रमें उन्होंने ऐसे सुन्दर प्रयोग चलाये थे कि कमसे कम खर्चमें कर्मचारी मन लगाकर राज्यका काम करते थे । करोके अल्प भारके कारण प्रजा भी प्रसन्न और समृद्ध रहती थी । इस सबका मुख्य कारण जिस प्रकार गुरु वशिष्ठकी शिक्षा थी, वैसे ही भरतका दैनिक तपस्वी जीवन भी इसका एक मुख्य कारण था । वट-वृक्षका दूध डालकर जब भरत अपने काले बालोंकी जटा बनाते थे, तब वह दृश्य बड़ा भव्य लगता था । वल्कल-वस्त्र पहनकर और वन-वासका कठोर तपोमय जीवन जीते जीते भी सफलतासे राज्यतन्त्र चलाया जा सकता है, इसका आदर्श प्रयोग देखनेके लिए अन्य प्रदेशोंके निष्णात अयोध्यामें आते थे । जब वे लोग किसी भी तरहकी टीमटाम या तडक-भडकसे दूर रहनेवाले सीधे-सादे तपस्वी राजपुरुषके रूपमें भरतको देखते थे, तब उनका मस्तक भरतके चरणोंमें अपने आप झुक जाता था । भरतकी नम्रता भी अनोखी थी । गद्गद स्वरसे और झुकें हुए मस्तकसे वे सबका प्रणाम स्वीकार करते और उन्हें प्रणाम करते थे । एक भी दिन ऐसा नहीं जाता था जब उन्होंने अपनी तीनों माताओंके चरणोंमें प्रणाम न किया हो । और जब वे माताओंको प्रणाम करने जाते तब माङ्गी, उर्मिला और श्रुतिकीर्तिको भी भरतके दर्शन हो जाते थे । विशाल वैभवके बीच और अपनी पत्नीके नित्य निरीक्षणमें भी जो

भरत निर्यो जीर निविकार रह सकत थ उनक चरणामें बौन प्रणाम न करता ? हम मक्क हाने हुए भी माधनाका माम तो बठिन ही हाना है । प्रकृति यदि साधकका पराजय न करे तो और किसरी कर ?

आज भरतके मनमें आया चला आज धनुष-बाणका प्रयोग किया जाय ! तपस्वाको यह प्रयोग शोभा नहीं देता और धनुष बाण भी हिंसन लक्ष्य ही है । उह अपन पास क्या रखा जाय ? शस्त्र पास रख जाय तो बन्धा बिसाका (कौतुकके लिए ही सहा) मारनका मन ही सकता है । भरतका भी आर ऐसा ही हुआ । उहाने लक्ष्यका साधकके लिए आज अपन जामपास न देखकर ऊपर आकाशमें देखा, जहा उह काँ पवत जसा वस्तु उड़ती दिखाई दी । भरतन ता बवल कौतुकके लिए ही यह प्रयोग कर डाला परन्तु कौतुकमें स बन्धा बन्धी भयंकर क्रुशणाका सजन हो जाता है । भरतने आकाशमें जो वस्तु उड़ती देखा व पवत नहीं था परन्तु मूर्च्छित लक्षणके लिए औपधि ल जा रह हनुमान थ । उहान पवतकी वनस्पतियाका एक बड़ा समूह हम प्रकार अपने विमानके साम जोड़ रखा था कि दूरसे वह वनस्पतियों का छाटासा गिरि गिम्बर दिखाई दिया ।

जीर भरतका बाण व्यथ तो जा ही नहीं सकता था । जम ही बाण धनुषस छूटा कि विमानकी छदकर सीधा हनुमानक हाथमें जाकर लगा । बाणकी चोट लगने ही हनुमानक हाथस विमानका नियन्त्रण चला गया । उसके साथ ही विमान और हनुमान दोनों नीचे धरती पर आ गिरे । ह राम के उच्चारके साथ ही हनुमान मूर्च्छित हो गये । अब क्या हो ? बाण तो छाटा छी दिया केविन उसका परिणाम उसके भरतको गहरा पचाताप हुआ । यह बवल का निर्यो धनुष ही नहीं है परन्तु रामका परम भक्त मातूम होता है । वनस्पतियाकी असम्यक्ततायें देखकर भरतन सोचा क्या राम स्वयं रोगग्रस्त हाने ? मत यह क्या भयंकर पाप कर डाला !' नुगन नुगन बदा बुझा गय । छोटी उपचार विधिसे काँ ही हनुमानन आखें खोल दी । घबराकर राम-सेवक यहाँ राम बहास आ गय । बोलते हुए एकाएक उठे और भरतक चरणामें उहान भस्तक झुका दिया ।

अब भरतका मन स्वस्थ हुआ। इस दृश्यको देखनेके लिए आसपास अयोध्यावासियोंका बहुत बड़ा समूह एकत्र हो गया था। हनुमान समझ गये कि ये राम नहीं हैं, परन्तु रामके ही परम प्रिय छोटे भाई भरत हैं, और आसपास रामचन्द्रका सारा परिवार तथा सरयू-तीरके सौभाग्य-शाली अयोध्यावासी खड़े हैं। हनुमानने भक्तिभावसे सबको प्रणाम किया और सक्षेपमे रामके प्रथम दर्शनसे आरम्भ करके सुग्रीव-अगद मिलन, सीता-हरण तथा लकामे रावणसे चल रहे भयकर युद्ध तकका सारा वृत्तान्त सुना दिया। अन्तमे गद्गद कंठसे कहा “मेरा बड़ा सौभाग्य है कि मैं अपने प्रभुके निकट सम्बन्धियोंसे इस प्रकार प्रेम-भावसे मिल सका। यहा रहनेकी मेरी बड़ी इच्छा है। इसके लिए आप सबके आग्रहकी आवश्यकता ही नहीं है। परन्तु लक्ष्मणजी जिस स्थितिमे मूर्च्छित पड़े हैं, उसे देखते हुए मुझे तुरन्त लका पहुँच जाना चाहिये।”

यह सारी कथा सुनकर वहा एकत्र हुए सब लोग आनन्दित भी हुए और शोकग्रस्त भी हुए। आनन्दित इसलिए कि रामके कुशल-समाचार उन्हीके एक निकटके सेवकके मुखसे सुननेको मिले और शोकग्रस्त इसलिए कि सीता-विरह तथा लक्ष्मण-मूर्च्छाकी दुःखद बातें अचानक मालूम हुईं। इन सबमे आश्चर्यकी बात तो यह थी कि लक्ष्मणकी माताजी लक्ष्मणके समाचार सुनकर प्रफुल्ल हो गई थी। उर्मिलाके मुख पर भी स्मित फैला रहा। उनके शोकके लिए कोई कारण नहीं था, बल्कि हर्षका ही कारण था। दोनोंको इस बातका सन्तोष था कि उनका लक्ष्मण पूरी निष्ठासे अपने कर्तव्यका पालन कर सका। जिस समाजमें स्नेहीजन केवल कर्तव्य पर ही ध्यान रखते हैं, वह समाज तेजीसे प्रगति कर सकता है।

अब हनुमानको रोकना उचित नहीं है, ऐसा मानकर अपनी गलतीके लिए पश्चात्ताप प्रकट करके भरतने सबसे हनुमानजीको जाने देनेकी प्रार्थना की और प्रेमसे उन्हें विदा किया। हनुमानका विमान देखते ही देखते ऊपर उठा और जब तक वह आखसे ओझल न हो गया, तब तक अयोध्यावासी रसपूर्वक उसे निर्निमेष दृष्टिसे देखते ही रहे।

भरतने सोचा, मेरी बाण-कलाकी एक भयकर भूल क्षण भरमें हो गई। इसके कारण भाई लक्ष्मणकी सेवा-शुश्रूषामे भी बाधा पहुँची।

परन्तु हजारों भूलोंमें से निम्ना एवमें जग बर्मा बर्मा अद्भुतताव
 दान हान ह उमा प्रवार मरा इग भयरा भूलमें ग मुदा हनुमान
 जग रामभक्तके दान हुए। रामरी वरणा बसा अगाध है।

७०

मेघनादका वध

लक्ष्मण-राम गंधर्वा वज्रानि वध-माघनाक गाय उगव छ-वगट
 भी मिल गय थ। "राव मनिकामें दान" निग प्राणापण वजनरा वसिके
 स्थान पर जावित रजनकी इच्छा अधिक् प्रबल बन गई था। "गव
 विपरात रामव पशमें ननिक वस निताग्नि वदता जा रग था। लक्ष
 वासिमाक मन भी राम और जानकाकी ओर अधिराधिक् शक्त जा रन
 थ। रामव सनिक पहल पहल ता असावधान रह, परन्तु जग उनमें
 वलिदानकी वृत्तिके साथ जागृति और कुशलता भा बढ ग था।
 इसक फलस्वरूप राकाकी विजयकी आगा दिनान्ति घटती जा रही
 थी। राना मदारराव साथ सता सुलाचनाका चिन्ता ना बग गई थी।
 सुलोचनान अपन पतिको समझानका अयधिक इयल किया। अनमें
 केवल आजक ही दिन युद्धकी रोकनकी विनती उसन मेघनादक था।
 लेकिन कौन सुनता? आज तो मेघनाद पुरानी स्मृतिका साजा करता
 उड़ना वृद्धता बार लक्ष्मणके सामन युद्धमें अच्छा तरह जय गया था।
 लक्ष्मण भी आज अत्यन्त स्फूर्तिवान और तज्जामय दियाई न्न थे।
 मेघनादने अनक युक्तिया आजमाइ त्रिशूलोत्ते प्रहार किय परन्तु बार
 लक्ष्मणन मेघनादका मारा युक्तिया निष्फल बना दी और उसके
 त्रिशूलको बाणवर्षा करके बीचमें हा उडा दिया। "द्रावियो मेघनाद"
 जस जस यह सब नसता गया वसे वसे उसका क्रोध बढ़ता गया। मनुष्य
 चिन्ता भा बार और गुणी क्या न हो परन्तु क्रोधमें उसे पामर और
 दूषित होने देर नहीं लगता। मेघनादकी नशा भी उत्तरोत्तर ऐसी
 ही होती गई। क्रुमवर्णकी मेघनादकी सहायतामें दौड़ना पडा। परन्तु

लक्ष्मणके पास ही रहनेवाले मयद, नल और नील रणक्षेत्रमे ऐसी सावधानीसे लड़ रहे थे कि कुभकर्णकी सहायतासे मेघनादको कोई लाभ न हो। पीछेसे रावण स्वयं मेघनादकी सहायता करने आ पहुँचा। परन्तु जब रावणने देखा कि अगद और हनुमान दोनों शस्त्रसज्ज होकर उसके सामने खड़े हैं, तो उसकी हिम्मत टूट गई। उसने निश्चित रूपसे समझ लिया कि अब दुर्गके बाहर लड़ रही लकाकी संपूर्ण सेना यदि इस एक ही मोर्चे पर केन्द्रित नहीं हुई, तो आज लकाका सर्वनाश हो जायगा। उसने अपनी वुलन्द आवाजसे घोषणा करके लकाके समस्त सैनिकों तथा प्रजाजनोका आह्वान किया। परन्तु यह सब कौन सुनने लगा? अन्तमे रावणने अवसरको पहचान लिया और जान-बूझकर वह पीछे हट गया। आज रावण अपनेको वचाता वचाता कठिनाईसे ही भाग सका। लकाके सैनिक तो भागनेकी ताकमे ही बैठे थे। अब भला वे क्यों रुकते? मेघनादको लगा कि यह तो गजब हो रहा है। स्वयं मेरे पिताजी भी मुझे अकेला छोड़कर रणक्षेत्रसे पलायन कर गये हैं। इससे मेघनादकी आशा टूटने लगी। इतना जरूर था कि कुभकर्णने अभी तक उसका साथ नहीं छोड़ा था। कुभकर्णकी शक्ति अपार और असीम थी, परन्तु हनुमान, अगद और लक्ष्मणके सामने किसीकी क्या चल सकती थी? मेघनादने इस स्थितिको अच्छी तरह समझ लिया था, परन्तु वह रणक्षेत्र छोड़कर भागनेवाला नहीं था। और रणक्षेत्र आसानीसे छोड़ा जा सके ऐसी स्थिति भी अब नहीं रह गई थी। अन्तमे मेघनादकी रही-सही शक्ति लड़ते लड़ते क्षीण होने लगी। अब उसे लगा कि सुलोचनाकी सीख सच्ची थी, परन्तु थोड़ी ही देरमें लक्ष्मणका बाण एकाएक आया और उसने मेघनादका हृदय छेद डाला। उसी समय अन्य योद्धाओंके दूसरे शस्त्र भी एकसाथ उसके शरीर पर वरसने लगे। उसका एक हाथ टूट गया। पैर डगमगाने लगे। मेघनाद मूर्च्छित होकर पृथ्वी पर गिरा और उसके साथ ही उसका सिर और धड़ दोनों अलग हो गये।

इस घटनासे रावणकी सेनामे चारो ओर हाहाकार मच गया; और आजका युद्ध वन्द रखनेकी घोषणा हुई। दोनों छावनियोंके सैनिक

मेघनादना गुथ्रूपाके एकमान कायमें लग गये। लक्ष्मण भी इस परिचयमें सम्मिलित थे। उनकी गान्धे में मेघनादके मस्तक और घडको जाड़नकी क्रिया चल रही थी। स्वयं रामका हाथ मेघनादके मस्तक पर धूम रहा था। लेकिन टूटीकी बूटी कहा होती है? (जिसकी जीवन डोर टूट जाती है उसे जिलानवाली जड़ीबूटी दुनियामें कहा होता है?) आश्चर्यकी बात यह थी कि मरते मरते मेघनादके मुहस पहला नाम सुलोचनाका निकला दूसरा रामका और तीसरा लक्ष्मणका। इन तीनों प्रति मानो अपनी कृतज्ञता प्रकट करते करते उसके प्राण पलट उठ गये। सबके मुह पर शोककी घनी छाया फल गई। किसकी प्रशंसा की जाय? रामचन्द्रके एक कट्टर विरोधी राक्षसकी मृत्युस पहल हुए उसके अलौकिक हृदय परिवर्तनकी? अथवा ऐसे हृदय परिवर्तनकी स्थिति उत्पन्न करनेवाले विद्वत्बन्ध विभूति रामचन्द्रजाकी? अथवा उनके निष्कटके सच्चे साधियोका?

७१

सुलोचनाकी पतिभक्ति

मेघनादकी मृत्युसे रावण टूट गया परन्तु उसका मेरवे समान जाकागका छूटवाला अभिमान तो टूटनवाला नहीं था। उसने अपनी सनातन भग हो चुके उत्साहको फिरसे जगानका मिथ्या प्रयास आरम्भ कर लिया। कुम्भपणक समान गुर-वीर भ्राताका मरण तो रावणको प्राप्त ही है।

रावण अपनी पुनर्वध सती सुलोचनाका सात्वना देन स्वयं गया। परन्तु निरा गलाम भरी रावणकी सान्त्वनाम सुलोचनाका कमे सत्तोष होता? वह दोड़ती दोड़ती अपना माम मदानराज पास गद्द और बोली मानाजा अपने पति का गव प्राप्त करने का गिण म स्वयं रघुपति रामक पास जाना चाहता हूँ। आप क्या आना दती है? महारानी मन्त्र दान उत्तर दिया 'अवश्य जा बने। तुम मेरे आगीर्षा ह। रामकी

छावनीमें अकेली स्त्रीको जानेमें कोई सकोच नहीं हो सकता। रामचन्द्र एकपत्नी-व्रतधारी तो हैं ही, परन्तु सुना है कि तपस्वी-वेगमें वनमें आनेके बाद उन्होंने अपने साथ रहते हुए भी जानकी देवीके शरीरकी ओर कभी विकारी दृष्टिसे नहीं देखा। ऐसे परम पवित्र प्रभुके दर्शन किसी सौभाग्यशालीको ही प्राप्त होते हैं। लक्ष्मण रामकी पवित्र छायामें पूर्णतया निर्विकार रहे हैं। दोनों बन्धुओंकी ऐसी वीर जोड़ीके साथ रहनेवाले सैनिकोंमें भी शील और सदाचारका प्रेम उमड़ आये, तो कोई आश्चर्यकी बात नहीं। मैं तो सीतापति श्रीरामके दर्शनोके लिए तरस रही हूँ, किन्तु तेरे ससुरकी अनिच्छा देखकर मुझे अपने मनको रोकना पड़ता है। इसलिए तू अवश्य जा। मेरी ओरसे रामचन्द्रके अधिकाधिक मात्रामें दर्शन करके तू अपनी पवित्रतामें वृद्धि कर।”

रानी मदोदरीके वात्सल्यसे परिपूर्ण और रामभक्तिसे ओतप्रोत मधुर वचन सुनकर तृप्त हुई सुलोचना पालकीमें बैठकर रामकी छावनीके समीप आई।

पालकीको देखकर सुग्रीव जैसे साथियोंको क्षण भरके लिए लगा कि “रावणने जानकीजीको लौटा दिया, यह अच्छा हुआ। इतनेसे ही मानवोका सहार करनेवाला युद्ध अब रुक जायगा।” परन्तु इतनेमें कोई अपरिचित नारी पालकीसे उतरी और सीधे जाकर सबसे पहले उसने विभीषणके चरणोंमें प्रणाम किया।

अपने भतीजे इन्द्रजितके अवसानसे विभीषणके मनको जो गहरा आघात लगा था, वह सुलोचनाको देखते ही अधिक गहरा हो गया। वे जोरसे रो पड़े। छावनीके दूसरे साथी उनके पास कुतुहलवश होकर दौड़ आये। सबकी आखें भीग गईं। स्वयं रामचन्द्रके नेत्र भी छलछला उठे। सुलोचनाने समयको पहचान लिया। अपने भीतरके आसुओंको उसने बाहर न आने दिया। रघुनाथको देखते ही वह उनके चरणोंमें लोट गई और अपने आसुओंसे उनके चरणोंको धो डाला।

“पुत्री, बोल तेरी क्या इच्छा है ? ” इतना कहकर रामचन्द्रजीने स्वयं ही सुलोचनाको अपना हृदय खोलनेका अवसर दे दिया। सुलो-

चनान एमी उभुवनताका अनुभव किया जसी अपनी माताके पास भी उमने कभी अनुभव नहीं की था। अपन जीवनके कितने ही अनगुने चित्र जो किसाके सामने उमने कभी खाल नहीं थे वह रामके सामने खालन लगी। राम पुरुष ह इसका भी मुलाचनाना भान नहीं रहा और राम भी अपना मातृ-मुलम वात्सल्य उम पर करसान लगे। तभी मेघनादका मिर और घड जाकर मुगेचनाक पाप रख न्यि गये। सतीने तुरत अपना जूडा खालकर अपूव भक्तिभावस पति धरणाकी धूल मिर पर चलाई और विधिपूर्वक पतिका महापूजन किया।

रामने गङ्गा हावर बना धुत्री मुलोचना मघनादन मृत्युने पहुँचे तरा नाम लिया जोर बानमें हम दोना बंधुआक प्रति स्नह नता कर प्राणत्याग लिया। बाल अब तू क्या चाँता है।

मगी बागी परमपिता आप जरा भी दुखा न हा। म सम्ब हृदयम कहता हू कि जय पतिका खानका मुझे जरा भी दुख नहीं है। इसके विपरीत आपक धरणामें मरा और मर पतिनी एमा मुडर मृत्यु हा हम म हम दोनारा जहाभाण समचनी हू। हा, तना दुख अवश्य हाता है कि भविष्यकी पालिया यह कह रिता नहीं रहेंगी कि मघनाद जसा नरवार अपन पिताका स्पष्ट सत्य नहीं सुना सका। दूसरी एक बात मनमें यह रह जाती है कि मृत्युम पुर म अपने पतिका स्मिन् न जावामे नहा दय पाई।

मुगेचनाका अतिम बाण्य पूरा हात था मघनादका भस्मक जोरम हम पना। मुघाव अग विभाषण लम्भण हनुमान, जाम्बवत, नाल विवि, मय पनम जाति याडा आश्चर्यचकित हा गये। यह कसा चमत्कार।

गंधकुल-मणि राम बाल ग वटी तरा एक अमिलापा पूण हुई। फिर मायियाम कहने गे हममें कोई चमत्कार नहीं है। फिर ना चाँते ना आप चमत्कार गदका उपयोग कर सवन ह। यह चरित्रका चमत्कार है। मृगम पण मघनादके अन्तरक किमी कोनमें पति-पिताकी शक्ति एकनाकी जा भावना था उसाकी यह प्रतिध्वनि

है। दूसरा कुछ नहीं। प्राण शरीरसे पूरी तरह निकले न हो वहा तक सुयोग्य मायीके अन्तरके शब्द सुनकर ऐसी घटना घट जाती है।”

इतना बोलनेके बाद सुलोचनाकी ओर देखते हुए रामने कहा : “सती-गिरोमणि, भविष्यके मानव मेघनादके विषयमें क्या कहेंगे, इसका शोक करना अब तू छोड़ दे। जगतके कल्याण पर दृष्टि रखनेवाले महामानव तो इससे भी सीख लेंगे। अपने अन्तरकी अन्तिम बात भी तुझसे कह दू। पूरी प्रामाणिकता और सच्चाईसे प्रबल प्रयत्न करनेके बाद जो अवाञ्छनीय घटनाये होती हैं उनके लिए पश्चात्ताप तो करना चाहिये, परन्तु प्रकृतिकी इच्छाकी महत्ताको स्वीकार करके अन्तमें सान्त्वना ग्रहण करनी चाहिये और प्रयत्नकी शुद्धिको बढ़ाना चाहिये। हमें यह भी नहीं भूलना चाहिये कि जिसका अन्त अच्छा है, उसका सब-कुछ अच्छा होता है।”

भगवान रामके इन शब्दोंसे प्रसन्न हुई सुलोचनाकी चेतना नाच उठी। इतनेमें रावण और मन्दोदरी भी वहा आ पहुँचे। उसी समय महासती सुलोचनाके शरीरमें से अग्नि स्वयं प्रज्वलित होती दिखाई दी। दडवत् प्रणाम करके सुलोचनाने सबसे क्षमा मागी और सबके देखते ही देखते पति-पत्नी दोनों भस्म हो गये। उस समय वातावरणमें शोक और उद्वेग नहीं, परन्तु सुगन्धित प्रकाश व्याप्त हो गया। रावण तुरन्त चला गया। पतिके पीछे मन्दोदरी भी गई। बाकी सब सतीके अपने शरीर पर सिद्ध आत्माधिपत्यके तेजको आदरपूर्वक लम्बे समय तक देखते रहे।

उसने तुरन्त कटार निकाली और बाला बड़ी योगिन बननेका ढाग कर रहा है। मरी बहन गूँघण्णाके नाक-कान काट गय तब तेरा यह योग कहा चला गया था? उस समय तेरा यह ध्यान कहा था? बाल झूठी ढोगी कहीकी बोलना क्यों नहीं? इतना बहकर उसने साताजीकी कटार मारनके लिए हाथ उठाया। परन्तु किता न किता कारणसे उसका हाथ अपनी जगहसँ उठा ही नहीं। इतना हा नहा कटार उसके हाथसँ छूटकर नीचे गिर पड़ी। उस उठानका प्रयत्न रावण कर ही रहा था कि इतनमें महारानी मन्दोदरी आ पहुँची। उसने कटार अपने हाथमें ले ली।

रावण गरजा तुमसँ यहाँ आय बिना रहा नहीं गया? क्या आई तू यहाँ? चल अपना रास्ता पकड़ यहाँसँ।

मन्त्रोदरीने गान्त स्वरमें कहा स्वामिन् जब आप अपनी मर्यादाका उल्लंघन कर चुके हैं। गतान पूरी तरह आप पर सवार हो गया है। आप मुझ क्षमा कर। मने कभी आपकी आज्ञाकी अवगणना नहीं की। आज आपका कल्याणके लिए आपकी इस आज्ञाके विरुद्ध मुझे मर्यादाग्रह करना पड़ा। जब तक आप अपने रोध पर नियंत्रण न पा लें तब तक मैं यहाँसँ आऊंगी नहीं। एक इंच भी यहाँसँ नहीं हटूँगी। इतना बहकर उमन पतिके चरण पकड़ लिय और अपना आचल फलाकर पतिसँ प्रार्थना करने लगी। पीलस्थ कृष्णके बगल यह मन्त्र आपका गोमा दत्ता है भला?

य गान्त बोलत बान्त मन्त्रोदरीकी आँखें तरल हो जाइ और जामूसी ग वूँ रावणक चरणा पर गिरा। व आसुआनी वूँ नहीं था परन्तु अंतरमे चरनगान्त जमूतके छाट व। रावण नार गया। उमका कठोर और क्रूर हृदय पमाजिन लगा। परन्तु मन्दाचिताका पाप तुरन्त तो कम छूटता। व बाला तू चाह तो सड़ा रह सकती है चर जानका जाना मैं स्वयं गेला लता ह। मैं पुनर्मि मतिवा बगल जवप ह परन्तु जब तो मैं लगता है कि मैं मानता जानसँ मार डालूँ। अंतिम वाक्य बोलत बान्त माना अंतरम ही किसीकी आवाज सुनकर उसने गिर घमाया और नीचे व गया। अपने रोध

और क्रोधके प्रत्याघातोंके कारण ही वह बहुत देर तक मौन बैठा रहा और वादमे एकाएक बोला

“प्रिय मन्दोदरी, तू ही बता कि रामको जीतनेका दूसरा क्या उपाय है? मुझे लगता है कि अब सीताकी मृत्यु हो, तो ही रामका हृदय टूट सकता है। मुझे यह भी लगता है कि मेरे हाथों सीताका वध हो, तो रामका नैतिक बल भी टूट जायगा। रामका नैतिक बल मैं तोड़ न दू तब तक मुझे चैन नहीं पड़ेगा। भले ही मैं कल मरनेवाला होऊ तो आज मर जाऊ।”

“प्राणनाथ, आप यह क्या बोलते हैं? शिवके परम भक्त होनेका दावा करनेवाले आपके मुखसे यह बात शोभा देती है? आपने रामको अभी भी नहीं पहचाना। पुत्री मुलोचना होती तो आपको बताती कि रामचन्द्र कितने निर्विकार पुरुष हैं। और वह यह भी बताती कि मेघनादकी मृत्युसे रामको कैसी गहरी वेदना हुई थी। क्या ऐसे समत्वयोगी रामचन्द्र सीताकी मृत्युसे नीतिभ्रष्ट हो जायेंगे? और राम क्या सीताके लिए यह युद्ध लड़नेको तैयार हुए हैं? मैं कभी इस बातको नहीं मान सकती। रामचन्द्रजीकी एक एक धमनीमें भारतवर्षकी उस संस्कृतिका रक्त वह रहा है, जिसमें सत्य और नीतिकी रक्षाको ही एक अखंड तपोबल माना जाता है। जो बात मैं पहले अनेक बार कह चुकी हूँ उमीको एक बार और कह दू कि रामको यदि झुकाना ही हो, तो आप रामसे अधिक तप, त्याग और नीतिका पालन करने लग जाइये। नीताजीको रामके हाथोंमें मौप दीजिये। और यदि ऐसा कुछ भी आप न कर सके तो विजय और जीवन दोनोंकी आशा छोड़कर लड़ते रहिये। परन्तु आज नीतिके जिस स्तर तक आप नीचे उतर चुके हैं, उससे अधिक नीचे तो कभी न उतरिये। यहाँ मैं अपने हृदयकी अंतिम बात भी आपसे कह दू : आजके वंद मुझमें कहे बिना यदि आप जानकीके पास आयेगे, तो मैं उसी क्षण अपने प्राण त्याग दूंगी। मेरी अगातिको आप मिटाना चाहें तो जब कभी आपको जानकीके पास आना हो तब मुझे भी अपने साथ लानेका वचन दीजिये।”

रावणन घयबा दनव भावग मन्त्रीरिव बधका ययपाया और उमके हाथना अपन हाथमें लहर माना मौन बना दिया । अछा जाइस म माताका जरा भा अपमान नहीं बन्गा और उता पाग जाऊगा भा नही । बभी जाया ता तुम अपन माय गगगा ।

इस दृश्यको देखकर त्रिजनाक लोचन हपग नाच उठ । गरण और मदोदरी तुरत ही उग म्यानका छाटकर चर गय । त्रिजनने पातिका सास ली और सीताजीका आर दया । व ता अमा भा गान्त भावस रामके ध्यानमें मग्न थी । जिनन मृगुका जान लिया है उग किसका भय हो सकना है ? और जितन दहरा माह छाड दिया है उस किस बातना क्षास हा सकता है ?

७४

जनकपुरीमें नारदजी

अहा नारदजा पधारिये पधारिय । बडे लम्ब समयक बाद आपक दशन हुए । बहकर जानकीकी माता मुनयनाजान महर्षि नारकका हार्दिक सत्कार किया । उसके बाद ससारकी घटनाआके विषयमें उनसे पूछा ।

जनक-पत्नी माताकी दष्टिमें ता प्यारी पुत्रीके कुल समाचार ससारकी घटनाआकी चरम सीमा होते ह । इसलिए जाइ म माताआके विषयमें ही आपस कहूगा ।

यह ता आप जानती ही ह कि सीताजी जाइ अवधपुरामें नहा ह । दनमें जानके बाद आप स्वय उनमें दडकारण्यमें मित्र आइ ह इसलिए वहा तककी वान तो आप जानती ह । आज के रावणका लका नगरीमें ह । अन्तिम वाक्य सुनते ही मुनयनाजीके महस क्या बना ? का उदगार निकल पडा और उनके चेहरेके भाव बल्ल गय ।

यह देखकर नारदजाने कहा सारी वान म सक्षपमें कह गुना उगा । उसके बाद आपका चिन्ता नही रहगी । यह तो आप जानती

ही है कि रामचन्द्रके सिवा अन्य किसीका विचार उस समर्थ सतीके मनमें पैठ नहीं सकता और जगतकी कोई भी शक्ति सती सीताको पराजित नहीं कर सकती।”

इतना सुननेके बाद सुनयनाजीका मन शान्त हुआ और एकाग्र चित्तसे सारी बातका सार सुननेमें वे तल्लीन हो गईं।

नारदजीने आगे कहा “मिथिलाकी महारानी, जनक राजाने तो राम और सीताके बारेमें मुझसे कुछ भी नहीं पूछा। उलटे मेरे कहने पर उन्होंने टालनेका प्रयत्न किया। मुझे लगा कि धन्य है यह पिता ओर ब्रह्मसुर, जिसे तेरह वर्षोंके दीर्घकालके बाद भी अपनी पुत्री अथवा जमाईके समाचार सुननेकी आतुरता नहीं है। वे मानते हैं कि चौदह वर्ष पूरे होने तक तो मनसे भी ऐसे ही विचार करने चाहिये, जिनसे जमाई और पुत्रीके स्वधर्म-पालनमें सहायता मिले।”

“ऋषिराज, मैं भी ऐसे ही विचारोकी समर्थक हूँ, जिनसे जमाई और पुत्रीको दृढतासे स्वधर्मका पालन करनेमें सहायता मिले। परन्तु मेरे मनमें सदा ये विचार उठा करते हैं कि ‘सीता क्या करती होगी? क्या खाती होगी? कैसे रहती होगी? मेरे राम और लक्ष्मणकी दिन-चर्या कैसी होगी?’ उन लोगोके कुशल-समाचार पानेके लिए मन भी अत्यन्त आतुर रहता है। मुझे स्वीकार करना चाहिये कि इस विषयमें मिथिलेशके जितना मानसिक समय मुझमें नहीं है।”

सुनयनाजीकी आतुरता देखकर नारदजी बोले “भरत, कौशल्या, गुरु वशिष्ठ, कैकेयी तथा आप सब राम-सीता और लक्ष्मणसे वनमें मिल आये, उसके बाद तुरन्त ही श्रीरामको दूर दूरके स्थानोंमें जाना पड़ा। वर्षों तक राम, सीता और लक्ष्मण ऋषि-मुनियोंके तथा वन्य-जनोके सम्पर्कमें रहे। परन्तु एक अमंगल दिन ऐसा आया, जब जानकी वनके एक स्वर्ण-मृग पर मोहित हो गईं। इस प्रकार रावणकी मायाकी विजय हुई। उसके फलस्वरूप सीताजीको रावणकी लकापुरीमें जाना पड़ा। राम-सीताका वियोग हुआ। जानकीको अतिशय पश्चात्ताप हुआ। विश्व-वल्लभ रामचन्द्रजीको भी सीताका वियोग बहुत खला। इस घटनाके बाद राम-लक्ष्मण आगे ही आगे बढ़ते रहे। मार्गमें महा-

साधवा मधुरीग उनका मिलान हुआ। पता मगररवा टाडर आगे जाते पर हनुमान और गुप्तावन रामका भेंट हुई। बाकिरी पराजय हुई। हनुमानन लवामें गोपारा राज बा। गोपारन जानकारा हमम यडी सात्तरना मिनी। अनमें जग रावणन मधिका शतवात करन गये और अभिवाय हानके बाण युद्ध भी आरम हा गया। म कमा बहू? स्वय रामचन्द्रका भी युद्धमें भाग लना पडा। युद्धमें अनर उतार बडाव भा लय। इन्द्रजित मघनायक बाणन अभमण मन्दित गी गय, उस समय श्रीरामने समत्व योगवी उन्नत बना परागा ल। अन्तमें इन्द्रजित और कुम्भवन जग रावणक कुछ महारथी युद्धमें भा गय। रामक पाडाभा और मनिवार भी यद्धका यत्रत बन्ना बना बयना पडा। म यह बात यह रहा हू नर भा राम रावणका युद्ध बन रहा हागा।"

मह मारा वस्तान सुननके गान सुनयनाजीन नारद अपिग गी प्रश्न किय (१) हे ऋषिराज इस युद्धमें रामचन्द्रका विजय तो हागी न? (२) रामको नून सतिन भयाध्या अथवा मिथिगरी सहायताक बिना कस मिल गये?

महादेवी रामकी विजयके विषयमें नीन बालमें बिमीका कोई बाका नही है। समयमें और सयनीनिमें पराजय गन्ना लिय कोई स्थान ही नही है। इमके प्रतिग्विन महापुरुषारी विरोधता बना है कि व अकेले बिमी माग पर बड नो भा जगत उनक पाछ गीहना चलना है। प्रवृत्ति मवन अनायाम हा उनको स्थानीय महायता कर देती है।

इतना कहनक बाद नारदजी विदा हो गय। मिथिगरी मगरानी एव आर राजा जनकका बिन्हा अवस्था पर विचार करन लगा और दमरा और ग्यारह ग्यारह वर्षोंक राम-भरणा तथा जानकारा वन्नाके साथ सहानुभूतिपूर्वक एकरूप हा गइ।

पापकी पुकार

“पतिदेव, आपका नाम जैसा कल्याणकारी है वैसा ही आपका काम भी कल्याणकारी है। आज मैं अपने हृदयकी बात आपके सामने रखना चाहती हूँ। रावण अपने कर्तव्यसे भ्रष्ट होकर भले ही ब्राह्मणसे राक्षस बन गया, परन्तु आज भी वह अपनेको आपका परम भक्त और परम शिष्य कहता है। मुझे नहीं लगता कि अब रावण पर आपके सिवा अन्य किसीका प्रभाव पड़ सकता है। मैं यह भी जानती हूँ कि भगवान् रामके लिए आपके मनमें बड़ा आदर है। ऐसी स्थितिमें आप राम-रावणके महायुद्धमें हस्तक्षेप क्यों नहीं करते? उस युद्धमें हो रहा लाखों मानवोंका सहार तो मुझे कण्ट देता ही है, परन्तु इससे भी अधिक कण्ट मुझे इस बातसे होता है कि जानकी जैसी एक पवित्र और पति-परायणा सन्नारी आज असह्य यातनायें भोग रही है। प्रभो, मेरे सतीत्वकी रक्षाके लिए आपने महात्याग करके ससारके सामने एक सुन्दर उदाहरण प्रस्तुत किया है। तब जगतकी एक महती सन्नारीके सत्य और शीलकी रक्षाके लिए आप कोई सक्रिय मार्ग क्यों नहीं अपना रहे हैं? मेरी अशिष्टता हो रही हो तो क्षमा करे, देव! परन्तु आज अपने मनके इस प्रश्नको आपके सामने रखकर मैं इसका सच्चा समाधान चाहती हूँ।”

सती पार्वतीके इन हार्दिक उद्गारोंसे प्रसन्न होकर शिवजी बोले “सती, तुमने अपने मनकी जो बात कही वह मुझे अच्छी लगी। तुमको जैसा लगता है वैसा अनेक नर-नारियोंको लगता होगा। मेरे अपने मनमें भी कभी कभी इस प्रश्न पर मन्थन चलने लगता है, परन्तु वादमें तुरन्त इसका समाधान भी हो जाता है। भगवान् राम आजके युगके समाजको सन्मार्ग पर ले जानेवाले पुरुषोमें सर्वश्रेष्ठ हैं। मेरी यह श्रद्धा और विश्वास है कि रामचन्द्र जो कुछ कर रहे हैं

वह आज भले हा लोमाकी समझमें न जाय परन्तु भविष्यकी पीड़ा याकी उनके इस कृत्यसे हजारों वर्ष तक प्रेरणा मिलती रहेगी। यह विश्वास होनेके कारण ही रामक किसी भी कामसे मुझ चिन्ता नही होती। राजा जनककी पुत्री श्रीमती जानकीजीके शील और सदाचारमें मैं तुम्हारे जितनी ही श्रद्धा रखता हूँ साथ ही मेरा यह भी विश्वास है कि ऐसे शीलवान और सदाचारा लोमाका इस जगतकी कोई भी शक्ति पराजित नहीं कर सकती। तब राम और जानकी दोनोंकी सहायता करनेवाला मैं कौन हाता हूँ? तुम जानती हो कि सोनेका बसौटा पर तो चटना ही पड़ता है।

‘जब बाकी रहती है मेरा गिष्य कहलानवाले रावणकी बात। इस सम्बन्धमें मुझे सदा यह लगा करता है कि गुरु भी जनमें तो निमित्त ही बन सकता है। मनुष्य जब तक केवल जीवन साधनकी अभिलाषा रखकर काम करता है तब तक उस पर गुरुका जयवा मागदाशकका प्रभाव अवश्य हाता है। कदा न कहीसे मागदाशन पानके लिए वह आतुर भी रहता है। परन्तु जब मनुष्य बाहरी साधनामें डूब जाता है और बाह्य विमान पर हा परम श्रद्धा रखन लगता है तब उसका अन्तरात्माके सिवा दूसरा कोई उसका मागदाशक बन ही नहीं सकता। रावणके मन पर जह्कारने इतना अधिक अधिकार जमा लिया है कि आज उस पर किसीका भी प्रभाव नहीं पड़ सकता। इसके सिवा मैं रावणको अपना ऐसी काटिका शिष्य मानता हूँ जिसने स्वयं ही गुरुके नाम मुझ स्वीकार किया है मेरे मनमें उस पर कभी स्वयम्प्रेम प्रेम नहीं उमड़ा और न आज हा उमड़ता है।

प्राणेश्वर वैसे भी आपके स्वभावमें कोई ऐसी बात है कि आप मुझ जैसे अत्यन्त समीपक व्यक्तिका भी केवल संकटसे ही अपना ध्यान बहते हैं उस पर किसी प्रकारका आग्रह नहीं लादत।

हा नेवी अनेक व्यक्तिगत अनुभवोंके बाद मैं इस निष्कर्ष पर पहुँचा हूँ कि थोड़े संवेत्तम अधिक जाग बदनमें गुरु गिष्य दोनोंमें से किसीके लिए भी परिणाम अच्छा नहीं होता। इसके विपरीत गुरु गिष्य पति पत्नी मित्र मित्रके सम्बन्धमें उदारतापूर्ण भाषा-समय जितना अधिक

होता है, उनकी ही अधिक गतिसे और अधिक मात्रामे दोनोंका कल्याण होता है। जो गुरु यह मानता हो कि उसकी जिम्मेदारी शिष्यके विषयमे अधिक है, उस गुरुको तो अपना माने जानेवाले शिष्यके मार्ग भूल जाने पर स्वयं उसका प्रायश्चित्त भी करना चाहिये। ”

“प्रभु, इतना सुननेके बाद अब मेरी समझमे भलीभांति आ गया है कि आप जो कहते हैं वही यथार्थ है। आपके साथ चर्चा करके मैंने आपका इतना समय लिया, इसके लिए मैं क्षमा चाहती हूँ। अन्तमे एक बात मैं आपसे पूछ लूँ। आपके अनुमानसे इस युद्धका अन्त कब होगा ? लका नगरी जली, मन्दोदरीका हृदय शोक और चिन्ताकी आगमे जलकर राख जैसा हो गया, विभीषणके समान नम्र भ्राताको विरोधी छावनीमे जाकर रावणके विरुद्ध लड़ना पड़ा, मेघनाद जैसा महारथी पुत्र खोना पड़ा और कुम्भकर्ण जैसा भाई युद्धमें मारा गया — इतने कठोर आघातोंके बाद और युद्धके सहार-ताड़वके बाद भी रावण सचेत क्यों नहीं होता ? ”

“सती, विनाशका समय जब तेजीसे आ पहुँचता है और मनुष्यके कुकर्मोंका लेखा-जोखा होने लगता है, तब सहार-लीलाका ऐसा ताड़व अनिवार्य हो जाता है। मुझे इससे कोई आश्चर्य नहीं होता। आश्चर्य तो इस बातका होता है कि रामचन्द्रजीने अपने सौम्य शान्त स्वभावके अनुसार मूर्ख रावणको सुधरनेके इतने सुन्दर अवसर दिये, फिर भी वह सुधरा नहीं। परन्तु इसमे अकेले रावणका ही दोष नहीं है। अनेक कारणोंके मिलनेसे यह परिणाम आया है। जब मनुष्य ‘रोकने पर भी घुरे कामोने न रुकने’ की भूमिकामे पहुँच जाता है, तब तो विलय — नाश — ही उसके उद्धारका एकमात्र मार्ग रह जाता है। किसी महा-पुरुषकी उपस्थितिमे ऐसा विलय हो, तो समझना चाहिये कि उसकी गहराईमे कोई कल्याणकारी वृत्ति ही काम कर रही है। रावणका मन अब इसी कक्षा पर पहुँच चुका है। अब तो मरते मरते भी उसका हृदय रामचन्द्रजीको उनके सच्चे स्वरूपमे पहचान ले तो वस है। मेरे मनमे जरा भी शका नहीं कि उदारताके महासागरके समान भगवान् रामके हृदयमे तो आज भी रावणके लिए करुणाका भाव है और अन्त

तब बता रंगा। दूसरी आर इतन आपापाव था अब गमना
हृदय भी कुछ कुछ गमाभिमुख होता जा रहा है। अब गमन यह
जाता यधनी है कि हागम पटल था उमर का अथवा धर्म मरना
पटल ता मरनम पटल रावणका हृदय गमना दण्ड मारा रिय रिता
ही रंगा। नना हा जाम ता मग पूरा गन्ताय रंगा। परन्तु पगा
हानमें कुछ समय और लगगा।

सा है प्रभु! परन्तु इमता उपाय? पायनाजान पूरा।

गवा उपाय यही है कि हम अपा चरित्रा र्जित विवि
जोर उक्त बनाकर अव्यक्त परम तत्त्वम प्रार्थना करन रू।
गिय-पायनाव हम पवित्र मयात्मन रियर पवित्र सत्त्वात् प्ररणा
दा जोर रागणव अतरम भा तरा उमवी प्रतिधिया हू रिता न
रहा। सुन्दर जोर मूढम विचारता प्रभाव तराठ मुन्दर रूपम मुन्दर
परिणाम लाय विना बभा गान नग हला।

*

सता मदोन्नी आज म मय चरकर तरे गामन अपना हृदय
खोलन आया हू। य चरक्य पूरा करनग पहल हा रावण चरक्य
तरह रा पडा। उसकी जालासे आमुओवी धारा वह निरगा।
मदोन्नीकी आखें भी छरछर जाड। मेरे पतिव भात्र स्वय
ही अपना हृदय खोलनके लिए मेरे पास क्या आय हाग। — गताव
हृदयमें यह जाश्चय लम्ब समय तक नही टिक सता। आज ता दोना
हृदय मूढम जोर स्पूल दोना रूपमें एर-दूसरेस मिल गय। व क्षण
वितन मुन्दर और मुसक य। जब महापापी हृदय भी पचातापकी
भागस मुलग उठता है तब मनाम भा पिधके विना नही रहता।
इसीलिए गीता कहती है

अपि चेत मुदुराचारा भजत माम् जनयभाव।
साधुरव स मतव्य सम्यग यवसितोऽहि स ॥
क्षिप्र भवति धर्मात्मा

।

रावणका हृदय अब सचमुच चूर चूर हो चका था। इसवे
दो कारण य (१) मेघनाद विभीषण और कुभवनके साथ जनक

साथियोंका वियोग उसे सता रहा था, उसमें भी विभीषणके तिरस्कार-का प्रत्याघात आज उसके लिए सबसे अधिक दुःखदाई बन गया था।
(२) सती मन्दोदरीके समान महानारी द्वारा कल्याणकी भावनासे की गई प्रार्थनाओंको उसने बार बार जो ठुकरा दिया था, उसका स्मरण आज उसे सौ गुनी वेदना पहुँचा रहा था।

रावणने आर्त स्वरमें मन्दोदरीसे कहा “देवी, तू मुझे क्षमा कर देगी न? मेरी यह श्रद्धा है कि तेरी क्षमा मिल जानेसे सीता जैसी महासतीके प्रति किये गये मेरे सहस्रो अपराध भी अवश्य नष्ट हो जायेंगे। महामानव रामको अब ही मैं थोड़ा पहचान पाया हूँ। परन्तु इसमें इतना अधिक समय व्यतीत हो चुका है कि अब तो मैं तेरे द्वारा ही राम और सीताके पास क्षमाकी अपनी प्रार्थना पहुँचा सकता हूँ। मेरी मृत्यु अब द्वार पर आकर खड़ी है, परन्तु इसकी मुझे बहुत चिन्ता नहीं है। चिन्ता मुझे केवल अपने भयकर पापोंकी है। कुछ ही क्षणोंमें इन सबको मैं कैसे जला सकूँगा?”

अपनी गोदमें पड़े हुए रावणके अगो पर ‘माता’ के समान वात्सल्यसे हाथ फेरते हुए मन्दोदरीने सान्त्वनाके शब्दोंमें कहा

“मेरे हृदयेश्वर, आज मुझे जो आनन्द हो रहा है, उसका वर्णन शब्दोंमें नहीं हो सकता। भगवान् शंकर और प्रभु रामका मे कितना उपकार मानू?”

शंकरके नामसे प्रभावित हुआ रावण बोला “देवी, कल मैं तन्द्रामें पड़ा था उस समय मैंने ‘पार्वती-परमेश्वर’ (शंकर-पार्वती) के मानो प्रत्यक्ष दर्शन किये। और उस दर्शनके प्रतापसे ही मुझे अपनी स्थितिका सच्चा भान हुआ। मेरे असंख्य दोष आखिरीके सामने तैरने लगे। मुझे लगा कि ‘इस विश्वमें मेरे जैसा अधमसे अधम मनुष्य आज दूसरा कौन होगा?’ और मैं यहाँ तेरे पास दौड़ आया। इस समय तेरा जो प्रेम और आश्वासन मुझे मिला, उसने मुझे इस बातकी प्रतीति करा दी है कि नारी केवल ‘पत्नी’ ही नहीं है, परन्तु ‘माता’ भी है। हे सती, सच कहना केवल स्त्रियोंको ही क्षमा और उदारताके सहज सद्गुणोंका वरदान परम कृपालु प्रभुने क्यों दिया होगा?”

प्राणनाथ सी और पुण्य दाना मिलकर ही संपूर्ण बन सकते हैं। नारीमें यदि कुछ सदगुण अधिक मात्रामें हैं तो कुछ दुगुण भी उसमें अधिक मात्रामें हैं। कभी कभी उत्तम नारीमें भी ईर्ष्या और ममभदा वचन इतने प्रबल हो जाते हैं कि उनके फलस्वरूप विश्वके महा मुड़ावा जन्म जाता है। देखिये न स्वयं रामचन्द्रजीकी माता ककेयी भी इन दुगुणाकी शिकार हो गई थी। जब मैं एक अतिम प्रायना आपस करूँ, हम धूमधामसे सीताजीको ले जाकर स्वेच्छासे रामके चरणामें क्या न सौंप दें ?'

महादेवी तारी प्रायनाआकी मर भीतर जो प्रतिक्रिया उत्पन्न हुई है उसमें मुझे भी ऐसा ही लगता है। परन्तु मैं पहल कह चुका हूँ कि ऐसा कुछ करनेका समय अब मरे लिए नहीं रहा। सती तू जानती है कि लकाकी प्रजा तथा मनाका विकृत बभ्रव बिलासकी जो मन्त्रिण मन पिलाई है और उनमें जो जन्म उत्साह और जो मम मन पैदा किया है उसके फलस्वरूप दाना इतनी उत्तेजित हो गई है कि मर कहनाम भी अब मैं तुरन्त उस मागस लौट नहीं सकूंगी। अब यदि मैं सीताका बापिम लौटानकी बात करूँ तो मैं मेरी ही हत्या करनेकी तयार हो जायगी। तना ही नहीं इसमें जाग बढ कर मैं सीताकी भाँ हत्या करनेकी उद्यत हो जायगी। तुम्हें या त्रिजटा जमा महानारियाका भी लकारी प्रजा और मना जीवित नहीं छोड़ेंगा। इसलिए यह काम अब मैं तेरे और विभीषणके हाथमें छोड़ जाता हूँ। रामके हाथों मरनेका मोक्षाय जन्म मुझ प्राप्त हो ही गया है तो उसका मैं लाभ मैं क्या छोड़ूँ? बबल मरनेस पूर्व मेरी एकमात्र अभिलाषा तुम्हें और तेरे द्वारा राम और सीतासे क्षमा मागनेकी था। उस पूरा करके आज तुम मुझ अपना जन्म-जन्मांतरका श्रेणी बना लिया है।'

तना करने कहते हैं। रावण एकाएक खड़ा हो गया। राना मन्त्रारान जब कंधे पर हाथ रखा तो था कि रणमिथका नाम सुना पड़ा। चार आम्हा और तो हत्यान एक दूसरेका आलिंगन किया। पति-पत्नी एक-दूसरेमें अलग हुए।

क्या यह दोनोंका अंतिम जीवन्त मिलन था ? रानी मन्दोदरीकी आत्मा बोल उठी

“मिलन और विरह इस जगतमें सदा साथ ही रहते हैं।”

७६

अहिरावण

“पाताल-राज अहिरावण, तुम एकाएक यहाँ कैसे आ पहुँचे ?”

“मैं तुम्हारी मददके लिए आया हूँ। सच्चे मित्रकी परीक्षा विपत्तिके समय ही होती है।”

अहिरावण और रावण दोनों मित्र एक ही आसन पर बैठकर बातें करने लगे। कुछ ही देरमें अहिरावणने एक निर्णय किया। रावण भी उसके साथ सम्मत हो गया। निर्णय यह था कि अहिरावण विभीषणके वेगमें रामकी छावनीमें जाये और नीदमें ही राम-लक्ष्मणका अपहरण करके दोनोंको पातालमें ले जाय। अहिरावणका यह विश्वास था कि ‘राम-लक्ष्मणके वियोगसे व्याकुल हो जानेके कारण रामकी सेनाका उत्साह अपने-आप टूट जायगा और लकाकी लाज रह जायगी।’

अंतिम समय तक भी मनुष्यकी क्षुद्र वासनाये कैसे मिथ्या प्रयत्न करती रहती हैं, इसका यह एक ज्वलन्त प्रमाण है।

अहिरावण राम-लक्ष्मणका अपहरण जरूर कर सका। परन्तु स्थूल शरीरकी अनुपस्थितिमें भी चैतन्यका तेज अपना कार्य करता ही रहता है। हनुमानको तुरन्त पता चल गया कि शत्रुने पङ्कज किया है। इतनेमें विभीषण वहाँ आ पहुँचे। उन्होंने कहा “मेरा वेग धारण करके यहाँ आनेवाला अहिरावणके सिवा दूसरा कोई नहीं हो सकता।”

यह बात सुनते ही सैन्यकी सारी व्यवस्था सुग्रीव, अगद तथा विभीषणको सौंपकर हनुमान अहिरावणकी पाताल नगरीकी ओर चल पड़े। द्वार पर पहुँचते ही द्वारपालने उन्हें रोका।

हनुमान “अरे भाई, तू मुझे रोक नहीं सकता।”

विचारमे डाल दिया। कुछ ही क्षणोमे वे विश्वके कारण और महा-कारणकी गहराईमे पहुच गये। ब्रह्मचर्य और वीर्य, ससार और अना-सक्ति — जैसे अनेक विचारोके सागरमे नीचे तक गोते लगा आये। वहासे आज उन्हे एक महारत्न प्राप्त हुआ। “गृहस्थ, ब्रह्मचारी या सन्यासी तीनों अपने अपने स्थान पर महान है। कोई न तो केवल ऊचा है और न केवल नीचा है। इसके अतिरिक्त, ऋणानुबन्ध भी कहा और कैसे प्राणियोका सम्बन्ध जोडते हैं? सब कुछ अद्भुत है।”

मारुति तुरन्त सावधान हो गये और उन्होने द्वारपाल मकर-ध्वजको उसकी कर्तव्य-निष्ठाके लिए धन्यवाद दिया। द्वारपाल पुनः अपने कर्तव्य पर आरुढ हो गया। हनुमान अपने कर्तव्य पर आरुढ हुए। पिता-पुत्रने सर्व-प्रथम वीररसका आस्वादन किया। उसके पश्चात् वात्सल्य-रसका। और इसके पश्चात् दोनों पुन अपने कर्तव्यका पालन करनेके लिए युद्धरत हो गये। अन्तमे मकरध्वजको हटाकर हनुमानने नगरीमे प्रवेग किया। वहा राम और लक्ष्मणके आनदित चेहरे उन्हे दिखाई दिये। रामचन्द्र हसते हसते बोले “हनुमान, यहा भी तुम आ पहुचे?”

अहिरावणकी चाल सफल न हुई। राम, लक्ष्मण और हनुमानकी त्रिवेणी फिरसे लकाकी अपनी छावनीमे आ पहुची। तीनोंको देखकर सारी सेनामे नये उत्साहका सचार हो गया।

एतनमें माना मन्त्री बाल उठी प्रभु आसी छत्रछाया और अयोध्याका आत्मा एतार राख्यनरा मुद्राका निधाय गयो ।

माता मन्त्रीके इस वाक्यका मन्त्रा इयना और तात्पर्यसे स्मरण किया । एतानमें विभाषणन राख्यराहुनरा तयारिग्यो धूमधामस हान लगी ।

आज सबन आनन्द ही आनन्द लिगाई दना था । रामरा विजयक पदवात् अंगोर घाटिका एक भावजनित पत्रित घाम जमा बन गई । प्रत्येक लकाधामी सबन पत्रन सीताजीका प्रणाम करके घम्यना अनुभव करना था । मन्त्रा भी बार बार उनक पाग आनी थी । एक समय बन्नीकी गभीर स्थितिका अनुभव करनवाली जानराजीका उवा अर परामी नगरा नहा लगती थी । समयकी रमा बलिगारा है । अन्तमें तो सत्यगोलकी ही विजय होना है । जिन लकाजनाने प्रत्यक्ष या पराग रूपमें राम-साताका अवमान किया था व भा माताजाक धरणामें प्रणाम करके हार्दिक पदवात्ताप कर गये । उस निमित्तसे सारा उवाकी अवलम्बनीय मुद्रि हा गई । गकिन जब कुमाय पर लगती है तत्र महान अनधको जम देती है परन्तु जब वह मुमाय पर चलती है तब महान अनधका सुरत मिटा भी सनती है ।

राम रावणका युद्ध आरम्भ हुआ उससे पहले ही लकाका सामान्य प्रजाका मानस बदलन लगा था । यानमें ता दिनादिन यह मानस अधिकाधिक रामके अनबूल बनता गया । इसका प्रभाव अंगोर घाटिका पर पड बिना कस रहता ? कवल विजटा ही नहा परन्तु अर तो अनेक राक्षसिया साताजाके पास आती उनका मुवाके निग तत्पर रहती और राम रावण-युद्धकी छाटीमे छाणी घटनाआम भी सीताजीको परिचित करा देनी थी । जानकीकी दृष्टिमें ता राम और लक्ष्मणके समाचार पट्टवाना ही राक्षसिमानो मुख्य सेवा थी । राम रावणक युद्धमें कितने ही कथाव और उतार आय और चने गये । परन्तु जिन जिन लक्ष्मणका भूच्छाकी बात सुनी उस दिन ता माना मानाजीके प्राण भी उन्नकी तमारी करन लग । एस समय माताके नाते लक्ष्मणकी सेवा रूपा न कर पानेका उह बडा दुःख हुआ और स्वर्ण भूम पर मोहित

होनेकी अपनी भयकर गलती उन्हें अतिशय खलने लगी। परन्तु जब उन्होंने मुना कि हनुमानजी औपधि लानेमें सफल हो गये और लक्ष्मणकी मूर्च्छा दूर हो गई, तब उनके हर्षका पार न रहा। हनुमानजीके उपकारोको याद करके उनके नेत्रोंसे हर्षाश्रु वहने लगे। फिर तो मेघनाद, कुम्भकर्ण और रावण भी युद्धमें मारे गये। और अन्तमें विभीषणके राज्यारोहणकी मंगल घोषणा हुई।

सीताजी मन ही मन इन सब बातों पर सोच रही थी, इसी बीच एक मस्तक नम्रतासे उनके चरणोंमें झुक गया। वह किसका मस्तक था? विभीषणका। लकाके राज्यारोहणके निमित्तसे वे सर्व-प्रथम सीताजीके चरणोंमें वन्दना करने आये थे। बोले “माताजी, अपने इस वत्सको आशीर्वाद दीजिये।” मदोदरीने भी सीताजीको अभिवादन किया। इस अतिशय सम्मानसे अकुलाकर वे बोली “मैं तो नारी-जातिकी एक सामान्य सदस्या हूँ। विश्वकी नारी-जातिको लकाका राज्यतन्त्र अभिवादन करता है, यह देखकर मेरा हृदय हर्षसे नाच उठता है। परन्तु दूसरी दृष्टिसे मैंने अपना स्वतन्त्र व्यक्तित्व रखा ही नहीं है। इसलिए रामके चरणोंमें अर्पित अभिवादनोमें मेरा अभिवादन आ ही जाता है। राम नरश्रेष्ठके रूपमें जैसे सर्व-पुरुष हैं, उसी प्रकार नारीश्वरके रूपमें जगदम्बा-पदके भी वे ही अधिकारी हैं।”

“माताजी, आपकी दृष्टिसे तो यही उचित है। परन्तु हमारे जैसे लोगोंके लिए, स्थूल आखोंसे देखनेवालोंके लिए, तो मातृ-शरीरमें स्थित मातृत्वकी सर्व-प्रथम वन्दना ही अधिक आकर्षित करनेवाली है और ऊँचा उठानेवाली है।”

विभीषणके इन वचनों पर आगे कोई चर्चा न करके रामकी अर्धांगिनीके नाते सीताजीने अपने वरद हस्त विभीषणके मस्तक पर रख दिये। तुरन्त आसपास खड़े सब नगरजनोंने पुष्पवर्षा की और हर्षके जयनादसे वातावरणको भर दिया। इस घटनासे समस्त लकामें आनन्द छा गया। रामकी छावनीमें भी हर्षकी लहर दौड़ गई।

अब विभीषण राजमाता मदोदरीके साथ सीधे रामचन्द्रके पास आये और उनके चरणोंमें उन्होंने दडवत् प्रणाम किया। राम विभी-

पार वप पर रामायणकार का। मिर विभोजन मर अभागन
 भाग्यो- न। गुह मिल ही बर ह। भव व २७ पून कर २७
 ह। इतना बरकर उठात दाता हय ऊन निय। सुन्दर वन गह
 प्रयकरा मिर नीच डार गया। भगल बचनारा उचारा हभा। माता
 मन्त्री राज-जवाहिरमें मन्त्रमाताकी तरह मन्त्रा-गुणा २७ गंगो
 डग बाता। प्रताप विभोजन राखरा प्रयव विधिमें मन्त्रा-भान
 साध रतकर करा दा बा।

२२ रमन भवन मायिदाग बर। गुपावता हनुमानका जाय
 बलका भगन्नी ओर लामन। गुम सब जाकर विद्यापणक मन्त्र
 रोषणका विधि पूरी कर आभा।

रामन व वान गुनकर गुह २२ व २३ म। गह वरन २२ व २३।
 माता मन्त्रा। तथा विभीषणक प्रनि अर्पनी मन्त्रार कायन न मन्त्रो
 लगा कि भगवान रामरा नी २२ २३ विधिमें मन्त्रिनि २३
 चाहिय।

मन्त्रमें हनुमान मायम उरक आग जाय और भक्तिभावम रामने
 करणामें प्रणाम करके धोत भगवान हम मन्त्रा जायेंगे ह। हमारे
 परम मित्र विभीषणके रायदराणक गुम जवमर पर विगता मन
 जानकर नयी होमा ? परन्तु प्रभ क्या आप नयी पधारें ? दायि न
 आपके न चलनम माता मन्त्राके और विभाषण दाता कम उताम ह।
 गये ह। हनुमानकी बात मन्त्रा पसन्द आई। मन्त्र भगवान रामने
 उत्तरकी प्रता ता वरन लग।

गात और सौम्य वाणीमें भगवान राम बाग मन्त्र परम निय
 सामिमा न बिना कहे तुम सबकी जलरेष्ठाका समप गया बा। भरे
 परम मित्र विभीषणके मनकी नीच रच्छाकी आ व जन्ती तरह जान
 सक्ता ह। मन्त्री मन्त्रादरीके अन करणकी भी समपता ता सक्ता है।
 उकाकी सामाय जनतामें मिलनकी अभिलाषा भरे मनमें उत्पन्न ह। यह
 भी स्वाभाविक है। क्योंकि यदन सब प्रत्यामात मिट जायें और सावत
 तथा लकाके बीच भीठ सम्बन्ध स्थापित ह। एसा प्रयत्न करला
 मन्त्रा भी कतय है। यह सब होते हुए भी आप सबकी समझ लता

चाहिये कि मैं अयोध्याको छोड़कर चौदह वर्षके लिए वनवास करने आया हुआ एक तापस हूँ। आज मेरा मुख्य धर्म तापस-धर्म है। मित्रधर्म और दूसरी सब बातें इस मुख्य और विशिष्ट धर्मके सामने गौण बन जाती हैं। विशेष कर्तव्य उत्पन्न होने पर अन्य सारे सामान्य कर्तव्योंको छोड़ देना पड़ता है। तुम सब भी तो इसी मार्गमें प्राप्त हुए मेरे धर्मसाथी हो। देखो न, बालि पर मुझे स्वयं प्रहार करके उसका वध करना ही पड़ा। उससे मुझे कितना दुःख हुआ? अन्तमें बालिने भी मेरे उस दुःखको समझा, यह परमात्माकी दया थी। उसीके फलस्वरूप बालिका पुत्र अगद आज मेरा श्रेष्ठ विश्वसनीय साथी बन गया है। भाई हनुमान, तुम तो मेरे लिए प्राणप्रिय पुत्रके समान हो। इसीलिए मुझे आश्चर्य होता है कि इतने ज्ञानी होते हुए भी तुमने यह प्रस्ताव मेरे सामने कैसे रखा? लेकिन कोई बात नहीं। मैं समझ सकता हूँ कि जब स्नेहकी सरितामें पूर आता है तब मनुष्य कभी कभी भावनाके प्रवाहमें वह जाता है। परन्तु मुझे विश्वास है कि तुम मेरी इस बातको सबसे पहले समझ लोगे।

“सती मदोदरीजी और विभीषणजी, आप आनन्दसे जाइये। आपके साथ और लकाजनोके साथ मेरी हार्दिक शुभ कामनाये हैं और आगे भी रहेगी, इसका विश्वास दिलानेकी आवश्यकता नहीं है। प्रिय लक्ष्मण, तुम सीतासे मेरा सन्देश कहना कि ‘तुम सती मदोदरीजीके साथ ही रहकर लकाके राज्य-सिंहासन पर आरूढ़ हो रहे विभीषणजीको अपनी शुभेच्छाये देना। मेरी सकारण अनुपस्थितिको समझकर मेरे प्रतिनिधिके नाते तुम वहाँ उपस्थित रहना।’ और लकाजनोको मेरी ओरसे कहना कि ‘रामने लकाकी समस्त प्रजासे यह प्रार्थना की है कि वह अपने मनकी सारी दुर्बलताको दूर कर दे। धन-पूजाके मार्ग पर वर्षोंसे चल रही लका नगरी अब धनकी प्रतिष्ठाको तोड़कर श्रम और नीतिको प्रतिष्ठा प्रदान करे और विश्वमें अपने यगको उज्ज्वल बनावे।’ साथ ही यह भी कहना कि ‘रामके साकेत लौटनेके बाद अवधपुरीके राज्यतंत्रका नैतिक समर्थन नीति-परायण लकाको सदा ही प्राप्त होता रहेगा।”

जब विमाने मनमें जरा भा गवा न रही। रामक व्यक्तिगत प्रतिनिधित्व रूपमें जानकीका रा-याराहणक समारंभमें उपस्थित रहनी, यह जानकर सबके मनमें रामक स्वयं पधारन जसा हा आनंद हुआ। रामन मयके उ-साहपूर्वक जानकी अनुमति दी। सनार प्रयर मतिवका भा जातका आज्ञा मिल गई। परन्तु रामका विलुक्त एकाका छाडनक लिए साथी तैयार न हुए। इसीलिए दा गक विद्वस्त मवकाका रामक पास रखकर सबन लकाका दिगामें प्रस्थान किया। यह समाचार बाघुकी गतिम लकामें पल गया और लकामें आनन्दका सागर उमड आया। भागमें हनुमान अकेल हो गहरे विचारामें डूबे डूबे सब साथ धीमी गतिम चल रह थ। उह बह दिन याद आया जब विभीषण पहले-पहल रामकी सनिक छावनीमें जाये थ और सबके मन उनके प्रति गकागल हो गये थ। इसाक साथ उस समय भगवान रामन जो उदारता और सावधाना बता वह भी उह याद आई। मन हा मन के बोले बस योगापुरय रामकद्रकी सवअच्छता यही है। व छलम छल प्रसगको भी सदधमकी कमीती पर खगजर हा उसका विचार करते ह। उनकी बाणी और जावरणक बारेमें भी यहा बात लागू होती है। समाजके प्रचण्ड प्रकाक धीक भा न स्थिर और अविकल रह सकने ह। इसीलिए राम आजक विश्वक युग-पुरुष ह।

सीतामाता और सनी मदोदरीका उपस्थितिमें घडी धमधामसे विभीषणके रा-याराहणकी विधि निर्विघ्न पूरी हुई। राजा विभीषणके साथ गकाके सब नागरिकान रावणने रा-यकालमें सीताजाका जो अपमान गका और उहे जो कष्ट और यातनायें भोगनी पडी उन सबके लिए गका राज्यका समूचा प्रजाकी ओरम हून्यसे क्षमा-याचना की।

माताजाने इसका सुन्दर उत्तर लिया कुन्दनकी परीक्षा इस समारंभमें सनसे होता हा जाई है। फिर भा इसके निमित्त वनतवाले आन सबके हृदयमें पश्चात्तापका भावना पदा हुई है इस म लकाके उ-वत भविष्यका गुम लक्षण माननी ह। मेरे हृदयमें भी इस अलसर पर लकाका प्रजाक लिए अनायास प्रम उमड आया है। भूतकालके स्मरणको हम सब भूल जाय और भारतवर्षके एक अगने रूपमें आपका

राष्ट्र अयोध्याका मित्र बनकर रहना चाहता है इसे परम तत्त्वरूप भगवानकी कृपा माने। आप सब पर भगवानकी कृपा और प्रभु रामके आशीर्वाद बरसे। ”

इस समारोहके बाद जानकी तुरन्त अशोक वाटिकामे चली गई। राजमाताने उनसे राज-महलमे रहनेका आग्रह किया। किन्तु सीताजीने उसे प्रेमसे अस्वीकार करते हुए कहा “भगवान रामके दर्शन मुझे हो जाय और उनकी आज्ञा मिल जाय, तो महलमे रहनेमे भी मुझे कोई आपत्ति नहीं होगी। परन्तु अभी तो सब दृष्टियोंसे अशोक वाटिका ही मेरे लिए सुयोग्य निवास-स्थान माना जायगा। ”

जगदम्बा-स्वरूप जानकीजीकी इस इच्छाका सबने आदर किया और वे अशोक वाटिकामे लौट गई।

इस ओर विभीषण, हनुमान, सुग्रीव, लक्ष्मण आदि पुनः रामके पास आ पहुँचे और उन्हें राज्यारोहणसे सम्बन्धित सारी बातें सुनाने लगे।

रामने छोटे-बड़े सारे सैनिकोंकी एक सभा की और उनके सामने कहा “आजकी इस सभामे सबसे पहले तो मैं अपने मित्र विभीषणको हजारो धन्यवाद दूँगा। उसके बाद उनसे और आप सबसे मैं कहूँगा कि आप इस युद्धमे प्राप्त विजयका श्रेय जो मुझे देते हैं, वह आपके लिए शोभाकी ही बात है। हमारे राष्ट्रकी सस्कृतिकी विशेषता इसी बातमे है कि हम किसी कार्यमे प्राप्त यशके भागी तो दूसरोंको — वस्तुतः ईश्वरको — मानते हैं और अपयशके भागी स्वयं अपनेको — अथवा अपने कर्मोंको — मानते हैं। इससे हमारे पुरुषार्थ — प्रयत्नमे अभिमानकी भावना नहीं पैठती और हमारी नम्रता बढ़ती है। मेरे लिए भी यही नियम सत्य है। केवल गिण्टाचारके लिए मैं ऐसा नहीं कहता, परन्तु सत्य यही है कि मैं जो कुछ हूँ वह आप सबके सहयोगके कारण ही हूँ। बड़ीसे बड़ी शक्तिशाली आत्मा भी शरीरकी मर्यादाके कारण अपने-आपमे मर्यादित बन जाती है। इसलिए देहधारी मनुष्यको किसी भी क्षण यह नहीं भूलना चाहिये कि उसकी प्रगति उसके छोटे-बड़े साथियोंके सहयोगसे ही होती है। मेरा विश्वास है कि इस विजयके इतिहासके

साथ आप सब सनिकाकी सहायता तथा विभीषण आदि लकावासियाकी सहायता भी चिरस्मरणीय रहेगी। परम कृपालु भगवान हम सबको सदा नम्र सत्यनिष्ठ और उत्तार बनाय रखें।'

रामचंद्रक एस नम्र और आत्मस्पर्शी वचन सुनकर सब पर अद्भुत प्रभाव हुआ। ऐसे सुंदर सहयोग और छोटे बड़क भवभावसे रहित वातावरणके बीच हनुमानने एकाएक आकर रामके चरणामें सिर झुकाया। भगवान राम मुस्कत उनके जानका हेतु समझ गये। वे बोले 'जाओ भाई, विभीषणके साथ तुम अकेले ही जाओ। पहले जाकर तुम्हारी माता जानकीजीको सब कुशल-समाचार सुनाओ और वहाँमें उह आदरपूर्वक महा ल आना। अब यह विधि पूरा की जा सकती है।'

प्रत्येक सनिकक मनमें उमंग उठी कि मुझे भी जानकाजीके प्रत्यागमनके इस महा समारोहमें भाग लेनका सुअवसर मिल तो कितना अच्छा हो। इतनमें स्वयं राम ही बाँठ पड़े जिनकी इच्छा हा वे सदा इस अवसर पर लकामें जा सकते हैं। फिर क्या पूछना था? सारा उका नगरीमें विभीषणके राज्यारोहणसे भी अधिक आनंद फल गया। सब सतीताजीको धूमधामसे विदा करनेकी तयारियाँ हल लगीं। दिव्यगण भी इस अवसरकी प्रताक्षामें ही बैठ थे। दिव्य विमानोंसे पुष्पवर्षा होने लगी। चारा ओर मंगल भविष्यवाणियाँ सुनाई पड़ती थीं। समूचा विश्व आज जगम्बा साताक स्वागतके लिए व्यस्त अथवा अन्यक्त रूपमें आनन्दसे नाच रहा था।

लंकामे सीता-विरह

जिस लंकामे एक क्षणके लिए भी रहना सीताजीके लिए असह्य था, वही लंका आज मिथिला जैसी हो गई थी। उनका हृदय रामके पास जानेके लिए थिरक रहा था और मनमें वे भारी परेशानी अनुभव कर रही थी। लंकामे राजा विभीषणके राज्याभिषेकके समारोहसे भी बड़े समारोहका आयोजन सीताजीको विदा करते समय किया गया था, परन्तु प्रत्येक लंकावासीका हृदय विरहकी वेदनासे व्याकुल हो रहा था। लंकाकी स्त्रिया और बालक तो सिसकिया लेकर रोने लगे थे। सती मदोदरी और सेविका त्रिजटाके जीवनमें आज कोई आनन्द ही नहीं रह गया था। उस विराट् समारोहमें लंकावासियोंकी ओरसे राजा विभीषण इतना ही बोल सके

“जगदम्बा जानकीजी, मेरे बड़े भाईके जीवन-कालमें उनके कारण लंकासे जो भारी अपराध हुआ, वह जगतके इतिहाससे कब मिटेगा यह भगवान जाने। परन्तु इस सेवकको इतना विश्वास है कि आप और प्रभु राम उस अपराधको अयोध्याके लोक-हृदयसे अवश्य मिटा देंगे। इसके लिए अपना प्रायश्चित्त मैंने किया है, बड़े भैयाका प्रायश्चित्त उनके पश्चात् माता मदोदरीजीने किया है। लंकाने भी डम भयकर अपराधका प्रायश्चित्त यथाशक्ति किया है। फिर भी यदि कुछ करना बाकी हो, तो आज भी लंका उसे करनेके लिए तैयार है।” इतना कहते कहते विभीषणकी आंखें छलछला आईं। सारी सभा उनके साथ रो पड़ी। वातावरण करुण बन गया। विभीषणने सीताजीके चरणोंमें मस्तक नवाया और उन्हें आमुओसे धो दिया।

सीताजीने अपने हाथसे उनके आसू पोछे। कुछ क्षणके लिए वातावरणमें पुनः स्तब्धता छा गई। फिर सीताजी बोली

“यह अवसर भाषण करनेका नहीं है। अपराधके प्रायश्चित्तकी बात भी अब लंका भूल जाय। आज तो लंका मेरी मातृभूमि—

मरा पादर वन गई है। लकाका एक भी मनुष्य आज मेरे लिए पराया नहीं है। सारी लका मुझ आज अपनी लगती है। जो धरता एक क्षण पूछ ऊमर 'ये वह दूसरे ही क्षण उबर वाग वन जाय — कुछ इसा प्रकारका खमलवार परम वृषाल परमात्माने यहा प्रत्यक्ष वर दिखाया है। हम सब इस आनन्दमयताका लाभ उठाव और भूतकालका दुःखद बातारा भल जाय। हम सब एक ही परमात्माकी मसार-लीलाके विविध पात्र हैं। अतमें तो हम सब उसी परमात्मामें लीन होनवाले ह। वहा रावण विभीषण और रामके भव भी नहीं रहेंगे, जिस प्रकार 'पूषणका मदोदरी भयका साताक मद नहीं रह जायग। न ता इतना ही समझ सकता हू कि जिनका अंत जच्छा है उसका सब कुछ जच्छा है।'।

माताजीके इन उदगाराम सबके हृदयमें नय प्राणाका संचार हुआ। धीरे धीरे वानावरण पुन उल्लासस भर गया। समारोहकी पूणान्ति हूँ परंतु कोई सभास्थानम गया नहीं। सबने अपने अपने स्थान पर खट रहकर जानकीजीक यथच्छ दशन किये।

जब जानकाजा ध्यासपाठ पर लड़ी हृद। उन्होंने सबको नमस्कार किया और सबग विदा मागा।

मध परस भीताजी उत्तरा कि मयन उ ह जानका माग ह दिया। बीचमें माताजी थी। उनकी एक पार माता मदोदरी थी तथा दूसरी पार त्रिजगत् भर रही थी। उनका पाछे लक्ष्मण हनुमान और विभीषण गंग गंग थे। इनके पाछे लकाका नगी-भमाज और उसके पीछे पुरय समान चल रहा था। वह कसा अनपम दुःख था। सब राग अनुगामन बड़ बाधम लकाक बाहर आय। हम लकाकी दशनक लिए धारो लिंगागामे मानव-ममदाय उमर पंग था।

जगतक जमुराता अमुग्गता अन जाने लगा देवानी लियताका प्रकाश पन्न लगा। हमों लिंगाज आकाश पवन नयत आमपामकी मूर्तिन अनारा पाभा धारण कर गे।

सतीका अग्नि-प्रवेश

भगवान रामचन्द्रका प्रत्यक्ष दर्शन करनेको एक लम्बा समय हो चुका था। एक क्षणका भी वियोग न सह सकनेके कारण अयोध्याके स्वजनोको छोड़कर सीताजी रामके साथ वनमें आई थी। परन्तु विधाताकी रचनाके सामने किसी मनुष्यका सोचा कब पूरा होता है? यह भी उतना ही सच है कि यदि जगतमें मनुष्यका सोचा होता, तो न मालूम वह क्या क्या कर डालता। केवल रामका नाम ही जो रात-दिन जपा करती थी, रामकी मुद्रिका देखकर भी जिन्हें रामके प्रत्यक्ष दर्शन जैसा हर्ष हुआ था, उन सीताजीको आज अपने प्राणनाथका प्रत्यक्ष दर्शन होनेवाला था। उनके लोचन रामको देखनेके लिए कितने आतुर थे। जब रामका दर्शन सीताको हुआ उस समय चारों आंखें एक-दूसरेमें जैसे एकरूप हो गईं। मानो मिथिलाकी वाटिकाका वह दृश्य फिरसे स्मृतिमें धूम गया, जब स्वयंवरके समय राम मिथिला गये थे और वाटिकामें राम-सीताकी आंखोंका मौन मिलन हुआ था। परन्तु रसका पूरा प्याला जीवनमें किसीको पीनेका सौभाग्य नहीं मिलता।

एकाएक राम बोल उठे : “देवि, तुम्हारे शीलकी शुद्धिका प्रमाण तुम्हें सत्यदेवको साक्षी रखकर जनताके सामने देना चाहिये।”

रामके वचन सुनकर पहले तो सीताको गहरा आघात लगा। उन्होंने सोचा “क्या प्रभु रामको भी मेरे सतीत्वके बारेमें शंका है?” तुरन्त मनमें विरोध किया : “नहीं, स्वप्नमें भी ऐसा नहीं हो सकता। यदि मेरे मनमें रामके चरित्रके विषयमें कभी शंका घुस ही नहीं सकती, तो मेरे चरित्रके विषयमें भी रामको कभी अश्रद्धा हो ही नहीं सकती। तब क्या राम लोगोकी अस्पष्ट शंकाओंका समाधान करनेके लिए मेरी परीक्षा लेना चाहते होंगे? ठीक ही है। लोगोकी अस्पष्ट मनोदशामें उत्पन्न शंकाओं और भ्रमोंका निराकरण कभी शब्दोंकी सफाईसे नहीं

हाना । परन्तु इन सब बानाका विचार मुझ नहीं करना चाहिये ।
गात्रा गड़नाकी बात मुझमें ही सम्भव रहना है इसलिए इन मत्स्यकी
प्रशंसा करने के लिए मुझ गात्राका महारा नही लेना चाहिये ।

और उहान रामसे कहा प्रभु मेरे मन और शीघ्रता प्रमाण
अग्निस्व भी मैं यह मुख अच्छा लगाता ।

भ्रमणन रामकी ओर लेया । भगवान रामका स्वादनि पातर
उहान तुम्हें माताजीकी इच्छाका पालन किया । लक्ष्म्याका क्रूर
लगा लिया गया । उसमें अग्नि प्रज्वलित हुई । माताजीने मरने का प्रयत्न
किया । एक क्षण के लिए उहान ऊपर जागताका आरंभ किया । फिर
अग्निका मरानन करके बागी = अग्निस्व यन्त्र मन बचन और धर्म
रायवक अनिरक्त किसी पर-मुक्तका मन विषयका दृष्टि विचार
किया = तब आप मेरे इस गरीबको भस्म कर देंगे । नहीं तो मेरा
पूरी तरह रक्षा करके जगत्को मेरे मन्त्र गाल और सनातनता प्रमाण
देना । मुझे आपमें संपूर्ण श्रद्धा है ।

तब उगाराम सबकी आँखें और हृदय भीग गया । माताजीके
सच्चे गालव वारमें लागाकी जा श्रद्धा थी उसे इन उगाराम और
दूँ बना लिया । माताजी, जागमें प्रवृत्त न कीजिये य गात्र लगेगी
मुहम निकल न निकले कि जानकाजी लपलपाती आगकी लपटाके
बीच दूँ पड़ी ।

परन्तु कुछ ही देरमें एसी घटना घटी जिस बुद्धिसे समझना
संभव नहीं था । सब जादूचक बाव सीताजी जसी भातर गई थी
वसी ही बिना जल—बिना झुत्स—समुद्र बाहर निकल आइ ।
उनका बाल भी बाल न हुआ ।

करानी है। इसलिए मेरा मन कहता है कि मुझ तुरत जाकर जया
ध्यावा कामकाज अपन हाथमें ले लना चाहिये।

विभीषण समझ गय। उठोन तुरत ही जाभूपणा जीर मुत्र
वस्थामे भरा एक विमान बुलाया। रामन जाना दा ' लक्ष्मण जीर
हनुमानजी तुम दाना जीर विभीषणजा सब सनिकामें य जाभूपण जीर
वस्त्र बाट दें। लनमें जानावाना करनवाल सब सनिकाम रामन प्रमम
कहा आप सबन हृदयस मेरा ओ साथ दिया भृत्यक भय जीर
स्वगके लाभस दूर रहकर आप लोगन जा काम कर लिपाया मका
घाला म या अय कोई कभा धुका नही सरता। परन्तु प्रताकक रूपमें
जापमें स हरएक कुछ न कुछ स्वाकार करक मर मित्र विभाषणका
सम्मान बलामें यह मरी आतरिक डच्छा है।

भगवान रामके स्नेहसिक्त वचन लक्ष्मण और हनुमानका प्रमपूज
जाग्रह तथा राजा विभीषणक मानवतापूज हृदयका दलकर डच्छा न
होने नए भी प्रत्येक सनिकने काई न कोई वस्तु ले ली।

जब आकाशसं दिय पुष्पाकी बटि होने लगी। अयोध्या जानके
लिष्ट पुष्पक विमान आकर उपस्थित हो गया। कुछक मन्त्र दानर रीठ
साधिया परम भक्त हनुमानजी लक्ष्मणजी जानकीजी तथा भगवान
रामको लेकर विमान धररर ररर आवाजक साथ ऊचा उठा
जीर आकाशमें उड़न लगा।

समस्त लकावासा तथा सुग्रीवरत्ना सेना ऊचे गिरि गिरा पर
चक्कर तब तक पुष्पक विमानका चलते रहे जब तक बह आवास
जासल न हो गया। जनमें लकावासिमान लकाकी दिनामें जीर सुग्रीनके
सनिकाने किंकिधाकी लिनामें यह धुन गाते गात प्रयाण किया

राम लक्ष्मण जानकी

जय वोग हनुमानकी।

मनके मनमें यह विचार रह रहकर उठा करता था जा लोग
रामचन्द्रजाके समान जीवभुक्त मंगपुष्पक साथ रात दिन रतन ह
व कितने भाव्यगाली ह। वह ममि धय है जिस पर ऐसी परम
स्मृतियाके चरण पचते ह।

भरतकी व्याकुलता

आज नदीग्राममें दर्भासन पर आसन लगाकर एक महामानव बैठा है। उसके सिर पर जटाओंका मुकुट है। उसका शरीर अत्यन्त कृश हो गया है, परन्तु उसके मुख पर अनोखा तेज चमक रहा है। देखनेवालोंको कभी तो वह योगी जैसा दिखाई देता है और कभी राजपुरुष जैसा मालूम होता है। उसकी आखें बन्द हैं, परन्तु उनमें से आसूकी धारा वह रही है। यह ध्यानस्थ पुरुष आत्माका नहीं, किन्तु किसी देहधारीका चिन्तन कर रहा है। थोड़ी थोड़ी देरमें उसके होठोंसे धीमा स्वर फूटता रहता है “हे राम, हे माता जानकी, .. हे लक्ष्मण कब आओगे ?”

कुछ समय बाद स्पष्ट आवाजमें सुनाई देता है “मैं पापी हूँ, महापापी हूँ। चौदह वर्ष बीतनेको आये हैं। आज निर्धारित अवधिका अंतिम दिन है। परन्तु अभी तक तीनोंके कोई भी समाचार नहीं मिले। क्या रामने मुझे बिलकुल छोड़ दिया है? केवल मुझे सान्त्वना देनेके लिए ही क्या राम वे पादुकाये दे गये होंगे? अहा भाई लक्ष्मण, तुम कितने भाग्यशाली हो? तुम्हें प्रतिदिन राम और सीताके दर्शन होते हैं। रात-दिन तुम रामकी सेवामें लगे रहते हो। मैं ही एक ऐसा अभाग्य हूँ, जिसे वर्षोंसे रामके दर्शन तो क्या, समाचार भी एक ही बार मिले हैं। और वह भी कैसी परिस्थितिमें? वे हनुमानजी भी कैसे उपकारी हैं? इस पापीके वाणका बदला उन्होंने रामके समाचार सुनाकर चुकाया।”

भरतके मनमें रामके विरहकी व्यथाका यह चिन्तन चल रहा था, उसी समय उनके सामने एक आकृति आकर खड़ी हो गई। वे थे रामभक्त हनुमान।

लकाके सागर-तटसे खाना हुआ विमान मार्गमें विश्राम करते करते और ऋषि-मुनियो, तीर्थस्थलो तथा शवरी, जटायु और गुह जैसे

भक्तों के स्मरणीय स्थानों का दर्शन और परिचय प्राप्त करते करते जयोध्या के समीप जा पहुँचा था। भगवान राम ने अपने जागमन के समाचार सुनाने के लिए भवन गिरोमणि हनुमान को पहल से ही भेज दिया था। भरत का स्थिति का देखकर क्षण भर के लिए तो हनुमान गदगद हो गया। उन्होंने सोचा जो वस्तु सदा हमारे पास रहती है वह कितनी ही मूल्यवान क्या न हो, उसकी कीमत हम नहीं समझते। विरही के दुःख को बिरह का दुःख स्वयं भाग बिना हम नहीं समझ सकते। इसके साथ ही यह खयाल हनुमान को चिन्तातुर बनाने लगा कि मैं स्वयं जब भगवान राम से अलग पड़गा तब क्या क्या स्थिति होगी। परन्तु आज जो लाभ मिला है उसे भूलकर कलही बिना क्या की जाय—इस विचार के मन में उत्पन्न ही हनुमान बाल भरतजी आप महा भाग्यशाली हैं। और आज मैं भी अधिक भाग्यशाली आप बन जानेवाला हूँ। राम सीता लक्ष्मण और अन्य मित्र सब प्रातः काल पुनीत जयोध्या नगरी में प्रवृत्त रहेंगे। ये समाचार आपका सुनाने के लिए भगवान राम ने ही मुझे भोजन पान भेजा है।

ये सब सुनते ही भरतजी उठे और हनुमान का उत्पन्न अपने बाहुपाग में बांध लिया। परन्पर हनुमान गिरनाने जाने का कुछ क्षण के लिए तो रुककर मान भुला दिया। फिर दाना पान स्वस्थ मन से बैठ गया। तब समय में अथवा जानना अपना जैसे और हनुमान परलभ में मन की मुद्रा धारण करके दूधरस गन्ध प्रवृत्त कर रहे हैं। फिर क्या पूछना?

मारी अथाध्या में बायरा गति से राम सीता और लक्ष्मण का आगमन का बात पत्र गर्द। गानक दलक दल भरत का पणकुत्तरी आर वल पत्र। भरत और हनुमान जाने कुत्तक बाहर आय। गरर गन्ध में राम का कुत्तक-समाचार सुनकर दाना कौगन्धा माना के भवन में पड़ूँ। माना मुमित्रा और माना कल्या तथा मानवी उमित्रा और धनिरानि भा वल जा पत्रा था। मपुन मानन प्रवृत्त राम-आगमन का आनन्द प्रगममाचारों पर उठा। सर बाई स्वागन्तक जनरतिध तथा रियामें लग गये। बीर बाक बाक राम अथाध्या में पयात्र रत थ। राम का आगमन का रत कमा अमन हाग रत विचारम आवात्र-वृद्ध सर नागरिचार

हृदय नाच उठे। एक समय वह भी था जब पिता दशरथजीको मूर्च्छाकी अवस्थामें छोड़कर और मथरा तथा कैंकेयीके अतिरिक्त सबको रुलाकर रामको वनमें जाना पड़ा था। परन्तु आज पिता दशरथकी आत्मा तथा प्रत्येक अयोध्यावासीका हृदय हस रहा था, हर्षसे नाच रहा था।

स्वधर्मका निरन्तर कठोर पालन अन्तमें सबके निरपवाद आनन्दका रूप लेता ही है।

८३

रामका अयोध्यामें प्रवेश

हजारों लोगोके हर्षनादोंके बीच भगवान रामचन्द्रने अयोध्या नगरीमें प्रवेश किया। ऐसा एक भी मनुष्य नहीं था, जिसे आजका दिन पर्व जैसा पवित्र न लगा हो। रामचन्द्रजी भगवान तो इसलिए कहलाते थे कि वे सबके हृदयों पर समान प्रभाव डाल सकते थे। अपनी मीठी नजर घुमाकर वे अनजान और अपरिचित लोगोकी आत्माके भी स्वामी बन जाते थे। आज तो वे अपनी जन्मभूमिमें आ गये थे। इस कारण सुग्रीव, हनुमान आदि साथियोंको साकेतकी हर्षोन्मत्त बनी हुई प्रजाको देखनेका अलभ्य लाभ मिला था।

सबसे पहले राघवने अपने गुरुदेव श्री वशिष्ठजीके चरणोंमें भक्ति-भावसे प्रणाम किया और उनकी पदरज अपने सिर पर चढ़ाई। भरतका हृदय रामसे मिलनेके लिए अधीर बन गया था। उनका रोम रोम खिल उठा था। उनकी आंखोंसे हर्षके आसू बहने लगे थे। अवकाश मिलते ही भरतने रामके चरण-कमलोंमें दण्डवत् प्रणाम किया। रामने दोनों हाथोंसे भरतको उठाया और दोनोंके हृदयोंका मिलन हुआ। भरत और रामकी भेंटका आनन्द शब्दोंमें कैसे प्रकट किया जाय ? सुग्रीवको दोनों भ्राताओंका यह प्रेम-मिलन देखकर आश्चर्य हुआ। ऐसा उत्कट भातृप्रेम उन्होंने जीवनमें पहली बार ही देखा। संपूर्ण अयोध्यामें और समस्त साकेतमें आज स्नेहका सागर छलक उठा था।

एसे समय भी योगी रामचन्द्रजी अपन स्वधर्मका कते भूल सकते थे ? उहान गुह्येव बगिष्ठ तथा प्रजाजनोमे भरतक राज्य-संचालनके निमामें पटी उल्लेखनाय घटनाओके विषयमें पूछताछ करके सब कुछ जान लिया। भरतन सफलतापूर्वक राज्य-संचालन किया इसकें लिए रामन नागरिकोंकी भरी सभामें अपना हात्तिक सन्तोष प्रकट किया तथा इसमें लिए भरतानी तथा प्रजाजनोकी उहान प्रशंसा की। उहोन यह भी कहा कि यह गुरुत्व बगिष्ठजीकी कृपाका ही प्रभाव और प्रताप है।

गुरु बगिष्ठन सभामें कहा रघुवीर सब कहू तो इस सबके पीछे तुम्हारा ही प्रभाव काम करता रहा है। भरतक विषयमें प्रजाके मनमें अन्तर्भाव था। उन सबको दूर करनेमें भरतक प्रति तुम्हारे उग प्रमत्त मुख्य हाथ रहा जिसका तुमन अरुण्यमें नय दर्शन कराया था। उगक फलस्वरूप प्रजाका सहयोग दिनादिन बढ़ता गया। भरतन साक्षात् समय और आत्मत्यागका जो उत्साहरण प्रजाकें समझ रहा उसका राज्यके अधिकारियों पर बड़ा गहरा प्रभाव पड़ा। उसमें प्रजा पर करका बान घटा दन पर भी गामन-सत्रका बाध-क्षमताका कोई हानि ना पड़ी। राजमाता कबेयीकी सहानुभूतिमें भक्त-शैली माहवीन राज्यक नारी-नमाजका अपना बना लिया। नारीधाममें भरतका स्थायी निवास प्राप्त था। जिस राज्यमें नारी-नमाजका तथा गावोंका साधा हादिक सम्बन्ध था वह राज्य समस्त और प्रजाप्रिय राज्य बन जाय ता इसमें आश्चर्यका कार्य बान नहीं। इस प्रकार तुम्हारे बनवासन सत्रकी अन्तर्गत दुःख ना दिया परन्तु दूसरी ओर उगक कारण अवाध्याय राज्य तनकी अगद जागृति बना रहा। राज-परिवारका एकत्रियता भा बनी रहा। उस निमामें माना कीर्त्याज अन्तर्गत बाध किया है।

“मात्र जम प्रजाराय पर दुनियाका गवमतायागी गतिव्या अपरा भाग प्रदान सगृहिमा आक्रमण कर इसका भय ना अपोष्याकी नहीं रहा था कजाकि यह भय सीता-रामके निमित्तम आरक्ष द्वारा हा दूर हा गया था। आपन बानर प्रतापी पिछरी दुर्ग प्रजामें बनना

उत्पन्न की। यहा भरतने प्रजाके पिछड़े हुए माने जानेवाले निम्न वर्गोंकी शक्तिको प्रकट करनेका प्रयत्न आरम्भ कर दिया। इस प्रकार प्रादेशिक और आन्तर-प्रादेशिक दोनों दृष्टियोंसे सर्वांगीण कार्य हुआ है।”

वशिष्ठजीके इन उद्गारोंसे सुग्रीव और विभीषण दोनोंको अपने अपने राज्यके संचालनके लिए मार्गदर्शन प्राप्त हो गया। सवने सोचा “रामचन्द्रजीने गुरुका चुनाव बहुत सुन्दर किया है। जो धर्मगुरु विश्वके प्रश्नोंके अध्ययनमें पीछे रहता है वह स्वयं तो पीछे रहता ही है, परन्तु अपने साथ धर्मको भी पीछे रखनेका निमित्त बनता है। इसके फलस्वरूप या तो मानवके नित्य जीवन और मानव-धर्मका सम्बन्ध विलकुल टूट जाता है या दोनोंके बीच केवल ऊपरी सम्बन्ध रहता है। ये दोनों ही स्थितियां धर्मों, राष्ट्रों, राज्यतंत्रों और प्रजाओं — किसीके लिए भी कल्याणकर नहीं हैं।”

८४

इनमें राम कहां हैं ?

आज सुग्रीव और विभीषण जैसे मित्र तथा अगद जैसे भक्त सब रघुकुल-मणि रामचन्द्रजीसे अलग होकर अपने अपने प्रदेशकी ओर जानेवाले थे। सबके हृदय रामके वियोगसे व्याकुल बन गये थे। सम्योचित भाषणोंके पश्चात् भेंट-सौगातका बटवारा स्वयं रामके पवित्र हाथोंसे होने लगा। सब कोई रामकी प्रसादी मानकर आनन्दसे सिर नवाकर भेंट स्वीकार करने लगे। कुछ न कुछ सभीको मिला। यदि न मिला तो केवल हनुमानजीको। अपने लाडले पुत्रके समान हनुमानजीको कोई भेंट न मिले, यह जानकीजीसे कैसे सहन होता? उन्होंने सोचा “हनुमान अभी कुछ दिन और यहा रहनेवाले हैं, क्या ऐसा मानकर भगवान रामने उन्हें कुछ न दिया होगा! उनका यह विचार हो तो भी सब लोगोंके सामने हनुमानको कोई भेंट देनेका अवसर फिर कब मिलनेवाला है? क्या राम हनुमानके समान अपने परम प्रिय सेवकको विलकुल

ही भूल गये होंगे ? राम यदि भूल भी गये हो तो रामकी अधागिनी सीताको यह गलती क्या न सुधारनी चाहिये ?" यह साचकर सीताजीने अपने गलती बहुतमूल्य मोतियोंकी माला हनुमानको गोदमें फेंका। संपूर्ण सभा सीताजीके इस समयानुसार व्यवहारसे प्रसन्न हुई। रामचन्द्रजीका मुखारविन्द भी खिल उठा।

भक्त हनुमानन सोचा क्या मोतियोंकी माला देकर सीताजी मुझे भूल जाना चाहती है ? वही जानकीजी मरी परीक्षा तो नहीं ले रहा है कि मेरे मनमें राम-सीताका अधिक मूल्य है अथवा मातियाका इस मालाका ? चट्ट देख कदाचित इस मालामें ही राम-सीता है ! और हनुमान पत्थर लाकर एक एक मोती उससे फोड़ने लग। सारे सभाजन इस कुतूहलको देखनमें लान हो गये। राम हसते रहे।

सीताजीके मनमें विचार उठा सचमुच वानर-द्रोपकल्पक मनुष्य वानरके समान ही भालूम हात है। हनुमान इतना बुद्धिमान है फिर भी वह यह नहीं समझता कि मोती जसी बहुमूल्य वस्तुको पत्थरसे नहीं तोड़ा जा सकता।

एतनमें ही हनुमानके हाथका पत्थर एक मुन्टर मोती पर पड़ा और उसका धूरा हो गया। अब जानकीजीस सहा न गया। व बोले पड़ी जरे जरे हनुमान यह तुम क्या कर रहे हो ? हम पर रामचन्द्रजीन सीतासे कहा देवा इससे पूछो तो सहा कि यह मातिया को तोड़ना क्या है ?

सीताजी पूछें इसका पहले ही रामका वचन सुनकर हनुमान बोले उठे प्रभु भने यह समयकर इस मालाको हाथमें लिया था कि इसमें सीता राम हाथ। मानाकी पवित्र भेंटको मैं हाथमें क्या न लू ? परन्तु इस पर मुझ वही भी साता रामका नाम नहीं दिखाई दिया। इसलिए मन मोचा कि गायत्री मातियाके भीतर दानाके नाम हाथे। ऐसा न होता तो सीतामाता मुझ यह माला क्या देता ? परन्तु मुझ दुष्टके माथ यह कहना पन्ता है कि इसमें सीता रामका नाम वही भा दिया नही दना। इसका अभावमें मानाकी मालाको कामन भरे लिए गूँथ जितनी ही है।

सीताजी सारा रहस्य समझ गई “भगवानके हृदयमे जिस भक्तका स्थान है, उसे हीरे, मोती, माणिक, सोना, चादी अथवा दूसरी सम्पत्ति नहीं मिलती । और कदाचित् मिलती भी है तो उसे ऐसी सम्पत्तिसे कोई वास्ता नहीं होता, जिस पर भगवानका नाम न हो । भगवानके नामके ‘एक’ के सामने भक्तकी दृष्टिमें दूसरा सब ‘गून्य’ रूप ही होता है । धन्य हैं भगवानके भक्त !”

सभाजनोंने भी समझ लिया कि सुनीति अथवा सत्यरूपी धर्मसे विहीन सम्पत्ति एक विपत्ति ही है और नीति तथा धर्मसे युक्त विपत्ति सन्धी सम्पत्ति है । यदि ईमानदारीसे कमाये हुए धनकी सार्थकता भी त्यागमे हो, तो त्यागमय जीवनसे ही जनसेवा करके प्रभुसेवाका लाभ क्यों न उठाया जाय ?

वस्तुतः मानव-जीवनका रहस्य सग्रहमे नहीं है, परन्तु गरीररूपी परिग्रहके भी त्यागमे है । सग्रह चाहे जितना नीतिमय और न्यायपूर्ण हो, उस पर स्वामित्व तो समाजका ही हो सकता है । व्यक्ति तो समाजके अगके रूपमें उस सम्पत्तिके जाग्रत ट्रस्टीकी तरह ही गोभा पाता है । जिस देशके मानव-समाजमे इतनी सावधानी बहाकी धार्मिक सस्थाये न रखवा सके, उस देशका भविष्य अधकारमय है और उस देशकी धार्मिक सस्थाये धन तथा सत्ताकी दासी बनकर अपना और मानव-जातिका सर्वनाश रोकनेमे नहीं, परन्तु सर्वनाश होने देनेमे प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूपसे सहायक होती हैं ।

अफवाह और मनोमन्यन

रामचन्द्रजीन अयोध्याका गगन अपन हाथमें ल लिया, उमक पात्र भरतने मुक्तिवा इवास लिया। परंतु राज्यक कमचारी प्रजाक सबकके रूपमें जचठी तरह काम कर और प्रजा भी अपनी राज्ची जिम्मेदारीको समझ स्तके लिए प्रजा और राज्यक बीच क्का बदनक काम भरत पर विगप रूपग आ पडा था। राज्यतन्त्रम ल्कर प्रजाक प्रत्येक बगके भीतर गुर बगिष्ठकी प्ररणा पन्थ ही जाती थी। राज्यक महाजन भी प्रजाके याय और नतिकताके उच्च स्तरको बराबर बनाय रखनेका सतत प्रयत्न करत थ। इस प्रकार माकेनका राज्य देशभरमें प्रशसाका पात्र माना जाता था। रामराज्य का प्रभाव समृद्ध राष्ट्रमें इस तरह फल गया था कि वह यग राममुगके नामस प्रसिद्ध हो गया।

सब कोई रातमें सुप्तसे जाग थे और प्रभातमें ईश्वरका नाम लेकर जागते थे। दशरथक पुत्र राम लोगारा नष्टिमें केवल राजा ही नहीं थे अधिकांश लोगोके हृदयमें रामने भगवानका स्थान ले लिया था। जिस राज्यमें दुराचारको डरना प और समाजमें चारो ओर सत्ताचारका ही योन्बाला हो उस राज्यको धर्मराज्य कहनसे कौन इनकार करेगा? जिस प्रकार गुर बगिष्ठ जस क्रपिबर तथा भरत जसे नरश्रेष्ठ राज्य और प्रजाके बीचकी स्नेहमाठका मजबूत बनाते थे उसी प्रकार कौतल्या और सुमित्रा जसा मातायें राज-परिवारकी प्रम गाठको मजबूत बनाता था। माता कनेयी तो अब पूणतया पवित्र बन गईं थ। मधरा भी पश्चात्तापकी गगामें स्नान कर चुकी थी। इस प्रकार परिवारमें और परिवारक बाहर सबत्र राम और सीताके लिए पूण गति थी। सीता और राम अपना विरह दुःख भूल गये थे। अगाक बाटिकाके दुःखद अनुभव भी स्मृतिपट परसे मिट चले थे। दोनों दपती प्रणय-सरितामें विहार कर रह थ। परन्तु प्रकृतिकी गति

भी कैमी गहन है। मानो विधाताके मनमें ऐसा भय पैठने लगा कि भावी इतिहासकी करुण-रस-प्रधान रामायणकी रचना कुछ दूसरे ही प्रकारकी हो रही है। राम-सीताके पवित्र श्रृंगार और निर्मल हास्य-रसपूर्ण दिवसोंसे करुण रसको जैसे ईर्ष्या होने लगी। एक दिन सवेरे ही सवेरे एक गुप्तचरने कापते कापते भगवान रामको यह अफवाह सुनाई

“प्रजानाथ, अवनि-प्रभु, विश्व क्या रसातलमें जानेवाला है? क्या अयोध्या पर भयकर सकटका पहाड़ टूटनेवाला है। और अयोध्याका सकट क्या सारे देशका सकट नहीं है? जब सपूर्ण नगरीमें लोग सीता-रामकी रट लगाये रहते हैं, उस समय एक मनुष्य—और वह भी धोवी ।” इतना कहते कहते गुप्तचरका गला रुख गया। श्रीरामने विना किसी सकोचके सारी बात स्पष्ट कहनेका सकेत किया और उसकी पीठ पर हाथ फेरकर उसे ढाढस बधाया। गुप्तचरकी आखे तरल हो आईं। वह धीरे धीरे गद्गद स्वरमें आगे बोला

“प्रभु, एक धोविन पड़ोसमें बातोमें लग जानेके कारण रात अपने घर कुछ देरसे पहुँची होगी। लेकिन धोवीने इतनेसे कारणसे ही उसे बहुत भला-बुरा कहा। वेशक, एक सगिनीके नाते धोविनको अपने पतिसे आज्ञा लेनी चाहिये थी। लेकिन इतनी छोटी गलतीके लिए धोवीका इतना गुस्सा करना क्या ठीक था? रामराज्यके एक प्रजाजनके नाते भी अपनी जिम्मेदारीका उसने विचार नहीं किया। इसलिए जब अमह्य हो गया तो धोविनने पतिसे कहा ‘स्वामिन्, रातमें आपकी आज्ञाके विना मुझे पड़ोसमें अधिक रुकना पड़ा, यह मेरा अपराध है, और इसे मैं स्वीकार करती हूँ। परन्तु आपके मनमें शका तो पैठनी ही नहीं चाहिये। आप रामराज्यके नागरिक हैं। राम वनमें गये तब वे स्वयं तो राजा नहीं थे, परन्तु भरतजी उन्हींके नाम पर राज्य चलाते थे। वनवासके समय सीताजी वपों अकेली रावणके महलमें रही। तो भी रामके समान राजाने उन पर शका करके उन्हें उलाहना दिया तो ऐसा नहीं सुना। आप उन्हीं राजा रामके प्रजाजन हैं। तब क्यों इतनी कड़वी बातें आप मुझे मुना रहे हैं? मैंने किसीके घर

वर्षोंका समय तो नहीं बिताया है। कुछ देर हुई आनमें परन्तु या तो म रामराज्यमें ही न? रावणके घर ता म नहीं गई या रही।

धोबीस पत्नीकी यह बात सहन नहा हुई। वह वाला राम इसे सहन कर सकते ह पर म नहीं कर सकता।' क्या वह धोबी आपसे भी बढ गया? और सीताजीके समान महासतीके बारेमें एक धोबीके घर ऐसी बातें हा सकती ह? एक क्षणके लिए ता विचार आया कि ऐसे लोगकी औम बाहर खीच लेना चाहिये। परन्तु उस बरे विचारका भने मनमे निराश डाला क्योंकि रामराज्यमें दण्डात्मिका नहीं किन्तु जनशक्तिका ही मुख्य आधार रहता है। मनमें उठे उस दुरे विचारके लिए भुग बहुत पश्चान्नाप होता है। परन्तु साथ ही यह सोचकर गहरा दुःख भी होता है कि हमारे ही प्रजाजन अपनी जिम्मेदारीको समय बिना ऐसा बर्ने करते ह। जिस राज्यमें गर जिम्मेदार प्रजाजनोंकी बकवास बढ जाती है उस राज्य और उस प्रजाका नाश हो जाता है। इस बातकी कल्पनासे भी म काप उठता ह। प्रभु ऐसा क्यों होता हागा? आपकी और माता सीताजीकी इतनी अवड जागृतिके रहत भी हमारे ही प्रजाजनोंके मुखस इस तरहकी अनिच्छनीय बातें मुझे क्यों सुननको मिला? इतने दिनोके बाद पहली ही बार और वह भी एक ही घरमें ऐसा सुननमें आया। क्या राम राज्यमें प्राप्त हुआ वाणी-स्वातन्त्र्य ऐसे दुरुपयोगके लिए है? ऐसी वाणी राज्यके प्रति प्रजाजनोकी सत्यनिष्ठाको तथा मानवके प्रति उनकी गाल विषयक श्रद्धाको नष्ट कर दती है।

रामन यह सब गान्त चित्तस मुन लिया। सम्पूर्ण स्वतन्त्रतामें ऐसा हा सकता है यह जाश्वासन देकर गुप्तचरको उ होने बिदा कर दिया और स्वयं गहरे विचारोमें डब गय।

रघुकुल भूषण राम अधिवाधिक गहरे मनोमयनमें डूबते गय। उ होन अपनको जानकीसे अलग करनका प्रयत्न गुरु किया म आज जिस प्रकार एक गृहस्थ ॥ उसी प्रकार एक राजा भी ह। धावा और धोबिनका बात पर म एक सज्जनके नाते सोच तो यह अवश्य कह सकता ॥ कि विश्वास सज्जनताका लक्षण है। यदि सामान्य मनुष्य

पर भी केवल अविश्वास रखकर कोई गृहस्थ नहीं चल सकता, तो अपना अग वनी हुई पत्नी पर तो अविश्वास रखकर वह चल ही कैसे सकता है ? निश्चय ही आर्योकी दृष्टिमें स्त्री-जातिके शील और चरित्रका बहुत बड़ा मूल्य है, परन्तु इससे पुरुष-जातिको स्त्री-जातिके शील और चरित्रकी चौकी करनेका अधिकार नहीं मिल जाता। अपने शील और चरित्रकी सावधानी पति और पत्नी दोनों अपने अपने हृदयसे ही रख सकते हैं, हा, परस्पर सिद्ध हुई आत्मीयताके कारण दोनों इस कार्यमें एक-दूसरेकी सहायता करे यह अलग बात है। सहायता करनेका यह अर्थ कभी नहीं कि एक-दूसरे पर शका रखी जाय। शकाशील रहनेसे ऐसी सहायता की ही नहीं जा सकती। स्त्री स्वभावसे भावनाशील होती है। वह किसी प्रवाहमें वह न जाय, इतनी सहायता जरूर पुरुष उसकी कर सकता है। परन्तु इतनी सहायता भी शकासे परे रहकर ही वह कर सकता है। इस दृष्टिसे देखने पर पतिके नाते सीतासे कुछ भी कहनेका मुझे अधिकार नहीं है। जानकीने रावण-नगरीमें रहते हुए भी जो अखंड जागरूकता रखी, उसके कारण वह जगतकी महासतीका पद प्राप्त कर चुकी है। मेरे मनके सपूर्ण सन्तोषके बाद बात केवल समाजके सन्तोषकी रह जाती है। समाजके सन्तोषके लिए तो जानकी स्वयं ही अग्नि-प्रवेश कर चुकी है। इससे बड़ी परीक्षा और क्या हो सकती है ? क्या धोवी यह बात नहीं जानता होगा ? दूसरी ओर, एक राजाके नाते यह देखनेका काम भी मेरा ही है कि किसी भी प्रजाजनके मनमें मेरे अथवा जानकीके जीवनके बारेमें कोई शका न रहे। यदि एक भी प्रजाजनके मनमें ऐसी शका रहे, तो राजाके नाते मैं सफल हुआ नहीं माना जाऊंगा। विरोध एकका है या अनेकका, यह देखनेकी अपेक्षा सर्वानुमतिसे चलनेवाले सच्चे राज्यतन्त्रमें मुख्यतः यह देखना चाहिये कि उस विरोधमें तथ्य कितना है। जानकी मेरा ही अग है, इसलिए इस सम्बन्धमें तथ्यकी जाच मैं स्वयं अकेला ही करूँ, यह उचित नहीं माना जायगा।”

कुछ क्षण रुककर राम फिर अपने-आपसे कहने लगे “कभी तो ऐसा विचार मनमें आता है कि जिस प्रकार मैंने कैकेयी माताके

लिए राजगद्दी छाडी थी, उसा प्रकार धात्रीके लिए भी राजगद्दी छाड दू। परंतु उस समय पित वचन हथी धमके साथ राजगद्दीका त्याग सुमगत था। आज राजपथके पालनके साथ यह त्याग सुमगत नहीं है। मर राजगद्दीका त्याग करनेसे घोड़ी पर दंडशक्तिका दबाव पड सकता है। परंतु मुझे तो जनशक्तिका विजय दिलानी है। मैं मानता हूँ कि घोड़ाका घातमें जरा भी तथ्य नहा है। फिर भी वह हृदयमें सच्चा घातको समझे इसका एरमात्र माग व्यक्तिगत सहनशीलता तथा त्यागका ही हा सकता है। मैं राजगद्दी छाडू और मर साथ जानका भा सावेल छोडकर चली जाय ता उसका परिणाम हर दृष्टिसे उल्टा हो सकता है। और यदि हम दाना साथ ही रह तब ता उसमें सहनशीलता और त्यागकी भी कोई बात नहीं रहेगी क्योंकि अब मर या जानकीकी दृष्टिमें जगल या वस्त्राका शोषण या महलका कोई नश नहा रह गया है। आज तो यदि हम दानो अलग हो जाय और हममें से एक रह वस्तीमें और दूसरा रहे जंगलमें जयना एक रह राजमहलमें और दूसरा रह पणकुटीमें तो ही सब तरहसे हम दोनोंकी सहनशीलता और हमारे त्यागकी सच्ची परीक्षा हो सकती है।

इस निश्चयके साथ ही रामका हृदय नाच उठा मानो एकाएक जीवनका कोई अश्रुत रहस्य उनका हाथ लग गया हो। उनके मनसे ये उद्गार निकल पडे मैं आनन्द अधिक जाग्रत और एकाग्र बन कर राक्षसकी घुराकी समान और दबी जानकी अरण्य-राजके समान ठाके समान ऋषि मुनियोंकी शीतरू छायामें रहे।

मानो प्रकृति माताका उपकार मान रहे हा उस प्रकार राम फिर जाल जलमें तो मनुष्य केवल एक निमित्त ही है। कुमार वयके दास मुन ऋषिकी जो छाया मिनी और युवावस्थामें जो अरण्य वाम मिला वही ऋषियोंकी छाया और अरण्य वास एकसाथ सीताके साथ उसका पत्रक गमको भा अभीम मिलेगे। यह भी एक सदभाग्य ही माना जायगा। चित्ता केवल जानकीके विरहकी है। स्वयं जानकीको ता मर विरहसे कोई दुख नहीं हागा क्योंकि वह स्वयम-पालनके लिए वस्त्र वस्त्र त्याग भी आमानास कर सकती है। जानकीने उन पहले

पहल मेरे साथ वनमे रहनेकी इच्छा बताई थी, तब मुझे अवश्य शका थी कि वह जमीन पर कैसे सो सकेगी । परन्तु मेरी उस शकाको जानकीने झूठा सिद्ध कर दिया था । यह तो ठीक, परन्तु रावण जैसा शक्तिशाली पुरुष जानकीके सामने विकारपूर्ण दृष्टिसे देख भी न सका । और, जनकके समान विदेह पुरुषकी पुत्री तो अनासक्त ही होगी न ? ऐसी इस महाशक्तिके लिए जगतमे कौनसी बात असभव हो सकती है ? फिर भी जानकीके मनमे मेरी चिन्ता जरूर रहेगी । परन्तु क्या किया जाय ? सबके कल्याणका इसके अतिरिक्त दूसरा कोई मार्ग नहीं है । वनवाससे अयोध्या लौटनेके बाद हम दोनों काफी समय तक साथ रहे । दापत्य-जीवनका आनन्द भी हमने परस्पर खूब भोगा । सन्तानकी प्राप्ति भी हुई । अब हम दोनोंके साथ रहने और न रहनेसे क्या बनता-विगडता है ? विष्व-मानवोके लिए तो कर्तव्य-पालन ही मुख्य वस्तु है । इस कर्तव्य-पालनका प्रेमियोकी सगतिके साथ सुमेल सध भी सकता है और नहीं भी सध सकता है । इसके सिवा, मैं वनमें अकेला रहूँ उस समय सीताको मेरी जो चिन्ता होगी उसमे और उस चिन्तामे आकाश-पातालका अंतर होगा, जो अयोध्यामे माता कौशल्या, सुमित्रा और कैकेयीकी छत्रछायामे मेरे रहते हुए सीताको होगी । ”

इतने हृदय-मन्थनके बाद त्यागवीर रामचन्द्रने अपने मनमे तो निर्णय कर लिया । परन्तु समिति लेनेके लिए उन्होंने भरत और लक्ष्मणको तुरन्त बुलवाया । रामके इस निर्णयसे सारा जगत थर थर काप उठा । भरतजी तो ठीक परन्तु लक्ष्मणजी इस महाकपको कैसे सहन करेंगे ? क्या महापुरुषोका मानव-देहसे सम्बन्धित बहुमूल्य जीवन सिद्धान्तके चक्र पर सदा प्रयोगके रूपमे ही घूमता रहेगा ?

सीताका त्याग

कहिय बटे भया क्या जाना है? कहते कहत दो मूर्तिपाने रामक चरणामें नत शीकर प्रणाम किया। वह कसा दिव्य दृश्य था? एक चरण कमलमें मानो निगुण उपासना और दूसरे चरण-कमलमें सगुण उपासना मूर्तिमन्त बन गई हा। दोनों बन्धुआका रामन उठाकर अपने हृदयस लगा लिया।

क्षणभरके लिए वातावरणमें शांत स्तब्धता छा गई। फिर श्रीराम स्वय ही वाले भाइयो तुम डाना ही जानाकारी हा। साथ ही मेरे वचनमें तुम्हारी पूण श्रद्धा है। फिर भी मने सदा तुमको तक और चर्चाका अवसर लिया है। एबिन आज मुय भय है कि म तुम्ह तक और चर्चाके लिए कोई समय नहा द सकूगा। मन जो निणय किया है वह अतिगय लम्ब मनामयनके पश्चात हा किया है। उस निणयको कायमें परिणत करनेका समय भी निकट आ गया है।

भगवान राम आग कुछ क दमके पहले ही अधीर लक्ष्मणकी गाला बाणा फूट पडी हमारा जा अपराध हो वह हमें मुरन्त बता दीजिये न। हम दोनोंको और विनोपकर मुय आपका कोई निणय नहा सुनना है। बनी कठिमाईमें अयोध्याका जीवन स्थिर और शांत हुआ है इतनमें ही क्या फिरम राम वनवासका निणय आपने कर लिया?"

रघुपति राम हम कर बाल शांत हो लक्ष्मण। मने राम वनवासका निणय नहीं किया है। मने सिवा रामके साथ तो लक्ष्मण सग सगता ही है फिर तुम्ह इमकी क्या चिन्ता? और तुम क्या नहीं जानत कि अयोध्याका देशभाल भरत मगी अपना अधिक कुशलतास कर सगना है?

यह सुनकर लक्ष्मण मुमकरा उठ परन्तु भरतके हृदयमें अनात धनता गान लगी। भरतकी वाणी चाह कूठ न के परन्तु उनका हृदय बाग रिता नहा रहा।

भरतके हृदयको राम भलीभाति जानते थे। इसलिए उन्होंने अपनी बात स्पष्ट कर दी “जानकीजीको सूर्योदयके पहले ही गुप्त रूपमे अयोध्यासे बाहर ले जाना है और लक्ष्मणको उन्हें अरण्यमें ऋषि-निवास-के समीप छोड़कर कुछ कहे बिना तुरन्त अयोध्या लौट आना है।”

ये वचन सुनते ही भरत दिड्मूढ हो गये और लक्ष्मण अवाक् बन गये। लक्ष्मणका शरीर शिथिल पड़ गया। वे रामके चरणोंके पास बैठ गये। कुछ क्षण बाद भरत बोले “आपने जो निर्णय किया है, उसके पीछे दीर्घदृष्टि रही होगी। इसमे हमे कोई शका नहीं है। इस निर्णयका कारण भी मैं जानना नहीं चाहता। जो राम प्रतिक्षण जाग्रत रहते हैं, उनके इस निर्णयके पीछे कोई न कोई अनिवार्य कारण अवश्य रहा होगा। मेरी तो एक यही प्रार्थना है कि पिछले वनवासके समय जिस प्रकार लक्ष्मणजीको सीताजीके पास रहनेका अवसर मिला था, उस प्रकार इस बार मुझे उनके साथ रहकर उनकी सेवा करनेका लाभ मिलना चाहिये। यदि उन्हें अकेले ही अरण्यमे छोड़ आना हो, तो भी यह काम भाई लक्ष्मणके बदले मुझे सौपा जाय, ऐसी मेरी आंतरिक इच्छा है।” लक्ष्मणने अपनी समति भरतके साथ प्रकट की, क्योंकि सीतामाताको अकेले अरण्यमे छोड़ आनेकी बात उनके लिए मृत्युसे भी भयकर थी।

राम थोड़े गभीर होकर बोले “भरत, तुम्हारे भाग्यमे तो केवल निर्गुण उपासना ही लिखी है। उस बार तुमने अयोध्यामे रहकर रामका अभाव दूर किया था, इस बार अयोध्यामे रहकर तुम्हे जानकीजीका अभाव दूर करना है। मेरे पास रहकर माताओकी सेवाका काम तुम्हे करना है।”

इतना सुनते ही लक्ष्मण गद्गद होकर कहने लगे “पहले वनवासमे मेरे ही कारण सीतामाताको राम-विरहका दुःख सहना पड़ा था, क्या इस बार भी मुझे ही उसका निमित्त बनना होगा?”

लक्ष्मणके सिर पर अपने कोमल हाथ फेरते हुए राम बोले : “भाई, तुम तो वीर पुरुष हो। सत्यका मार्ग तलवारकी धारके समान तीक्ष्ण होता है। उस पर शूर और वीर लोग ही चल सकते हैं।”

लक्ष्मण बोले तब तो बटे भया आप भरतकी इच्छा ही पूरा काजिय। वह गूर वीर और धीर भी है।'

इस पर भरत इस दिये परतु राम गभीर हो गया। उह भय था कि लक्ष्मणकी इस बातसे कही भरतके हृदयको चाट न लग जाय।

रामका गभीर च १ देखत ही लक्ष्मणजी सावधान हो गये। उह रामके ये वचन हो आय इस निणयको कायमें परिणत करनेका समय निकल गया है। उहाने खड़े होकर रामके चरणाकी रज माथ पर चढ़ाकर समा मागी और कहा आपकी आत्मा सिर आखा पर है।' रामन लक्ष्मणकी पीठ थपथपाई। लक्ष्मण तब गतिसे बाहर निकल गया। भरतन भी रामसे बिना ली। लेकिन प्रयत्न करन पर भी उनके मनस ये विचार निकल नही पात थे रामचन्द्रनाका और समस्त अयोध्याको जानकीजीका वियोग क्या सहना पड रहा है? किस पापका यह फल है?

इन प्रश्नाने भरतकी रातको लम्बा बना दिया। परतु जिन रामको मीनाना बिरह निरन्तर दुख देनवाला था व सो गम्या पर सैठते हो गाड निद्रामें लीन हो गये। कतब्य पालनका उत्साह मनुष्यमें महात्याग और महातिथिज्ञा उत्पन्न कर ही दता है।

*

रथ द्रुत गतिसे घरघराहुट करता चला जा रहा था। इस आवाजके सिवा भीतर और बाहर सब कुछ ग़ात नारव था। लक्ष्मण विचारामें डूबन उतरान लग कतब्यकी बेदी कसी विचित्र है। कभी वह बुझुम जसी कोमल और कभी बख्खसे भी कठोर बन जाती है। रामचन्द्र और जानकीका यह क्या वियोग है? और वह भी आज भरे ही हाथा होना लिखा है? रामकी जाना भी कितनी विचित्र है। उहाने जानकीसे अपना मिलन भी नष्ट होन दिया। और सीता माना? पतिकी आत्मा ही उनका धम पतिकी आत्मा ही उनका सबस्व है। न ता उहान रघुवुलनायक रामसे मिलनका आग्रह किया न मनमें दुख अनुभव किया और न किसी सखाजनस यह बात कहनकी इच्छा बनाई। स्त्री गतिनको धय है।

इस प्रकार सोचते सोचते उन्हें उर्मिला याद आ गई “राम-चन्द्रजीके साथ वनमें जानेके उत्साहमें उस समय उर्मिलाको मैं विलकुल भूल ही गया था। माताकी अनुमति मैंने ली थी, परन्तु उर्मिलाकी अनुमति लेना तो दूर रहा—मैं उससे मिला भी नहीं था। मीठा सन्देश भी मैंने उसे नहीं भेजा था। फिर भी चौदह वर्षका लम्बा समय कितने धीरज और शांतिसे कर्तव्य-पालन करते करते उर्मिलाने बिताया? सुमित्रा माताको मेरा अभाव न खटके, इस तरह उसने अपने सारे कर्तव्य उत्साहसे पूर्ण किये। आश्चर्यकी बात तो यह है कि अयोध्या लौटनेके बाद मैंने दो मधुर शब्द भी उर्मिलाकी प्रशंसामें नहीं कहे, परन्तु इसका भी उसने कोई दुःख नहीं माना। स्त्रियोंके इस महान त्यागका मूल्य हमारे जैसे पुरुष नहीं आक सकते।”

लक्ष्मण इन्ही विचारोंमें डूबे हुए आगे बढ़ रहे थे। इतनेमें सूर्य-नारायणने पूर्व दिशामें अपना सुनहला मुह निकाला। रथ अब ऐसी जगह पहुँच गया था जहाँसे कलकल नाद करते झरने, वनके उछलते-कूदते हरिण और ऋषि-मुनियोंकी स्वच्छ सुन्दर पर्णकुटिया दिखाई देने लगी थी। रामका बताया हुआ संकेत-स्थल आ गया। रथ खड़ा हो गया। लक्ष्मण नीचे उतरे। अब जानकीजी सब कुछ समझ गईं। वे तुरन्त नीचे उतर आईं। लक्ष्मण सीतामाताकी चरण-रज सिर पर लेकर उनसे विदा मागनेके लिए मौन खड़े रहे। उनकी आँखोंसे आसुओंकी धारा बह चली। वे बालकोंकी तरह सिसकने—रोंने लगे। मनमें अनेक विचार उठने लगे “मेरी माताके समान सीताजी गर्भावस्थामें अकेली इस अरण्यमें कैसे रहेगी? कहा मिथिला, कहा अयोध्या, कहा दण्डकवन, कहा लकाकी अशोक वाटिका और कहा यह अरण्य-वास! अयोध्यामें सर्वत्र आनन्द है, परन्तु सीताजीके लिए यह कंठ अरण्य-वास है! हे विधाता, क्या यह सब न्यायसंगत है?” फिर सोचने लगे “कहीं वह धोबी और धोबिनकी बात तो सीताजीके वनवासका कारण नहीं बनी है?”

सीताजीकी आँखें भी छलछला आई थी। परन्तु लक्ष्मणकी सहानुभूतिमें, अपने दुःखके कारण नहीं। उन्होंने तुरन्त आँखें पोंछ ली और

लक्ष्मणके सिर पर अपना वस्त्र हस्त रखकर आशीर्वाद दिया 'मुसीरों भाई चिरञ्जीव हा'। इससे लक्ष्मण और भा व्यथित हो गये।

सानाजीन कहा प्यारे भैया तुम तो महाराज दशरथके पुत्र और राघवके छात्र भाई हा। उस तरह निश्चित कस बन रहे हो? लक्ष्मण सावधान हो गये। रघुव घोड़ोको यात्राके लिए वे तैयार करने लग।

रामके विचारोंने सीताजीको उन्माद दिया जो राम एक सगव लिए भी मरा वियोग नहीं सह सकते, उनकी मेरे महा रहस्य क्या दंगा होगी? एक ओर जमान्माके राज्यतनका भार बहन करना, दूसरी ओर परिवारके सब मदम्याके सुख-सुखकी चिन्ता रखना और इस बातकी सजा सावधाना रखना कि गुरुजनाके प्रति स्वप्नमें भी अविनम न हो। एक ओर प्रजाजनाका पालन करना और दूसरी ओर मानरके तथा बाहरके अप्रभाम राज्यकी रक्षा करना। ऐसे अनेक प्रकारके बतव्याका बास उठान समय यदि गरीरकी व्यक्तिगत सभाल रहनवाला कोई व्यक्ति पास न हो। तो मर रामकी क्या दंगा होगी? लक्ष्मण और भरत यह सब करण तो जरूर पण्डित व्यक्तिगत प्रेम बरसानवाला कोई समाप हो तो रामका कितना आश्वासन मिले? प्रभु, प्रभु ऐस समय जायका मया करना मर भाग्यमें हो नहीं है।

इस तरह माचन माचने जानकीके श्लोकनाम दा बग गिर पड़ा। परन्तु व तुरन्त ही सावधान हो गये। मर आसू लक्ष्मण दायें और अयाया जाकर बात करण तो राम लक्ष्मण और परिवारके सब सगाका चिन्ता कितना बढ़ जायगा? हो जाय नू ऐसा क्या माचता है? अन्तमें तो मारा चिन्ता उस हरिक हाथमें है। हम मानव तो बस बतव्य हो स्वामा ह। इस तरह मनका समझाकर स्वयं हानमें मागजाका कर न लगी।

अब लक्ष्मणन माताजाम चिन्ता मागा। माताजान उनम कहा प्यारे भैया सबम पण तुम मर रामके पास जाना। उनके घरनामें मरा प्रणाम कहना और मरा आरम उनम दामा-माचना करना। म क्या पारिना ह। एक बार मेरे मनमें मन्द ह उग कि रामका

अभी भी मेरा विश्वास नहीं है। मैं क्या उन घोवी-धोविनसे भी गई-बीती हूँ कि राम मुझसे कुछ कहे या पूछे बिना ही तिरस्कार करके मुझे वनमें धकेल रहे हैं ? ' परन्तु सद्भाग्यसे यह विचार मनमें ज्यादा टिका नहीं। यदि मुझ पर उनका विश्वास न होता, तो अपनी प्राण-प्रिय पत्नी मानते हुए भी मुझे अकेले वनमें भेजनेके लिए राम कैसे तैयार होते ? घोवी और धोविन प्रजाजन हैं, मैं राजाकी रानी हूँ। आदर्श राजाकी दृष्टिमें अपने अंग — अपने स्नेहीजनोकी अपेक्षा प्रजाका महत्त्व अधिक हो तो आश्चर्यकी बात नहीं। घोवी-धोविनकी बात तो केवल एक निमित्त भर है। परन्तु उस निमित्तको भी मैं प्रणाम करती हूँ। अब मैं रामरूपी मेरुको किसी अंशमें समझ सकी हूँ और धन्य हुई हूँ। लक्ष्मण, रामको मेरा वियोग न खले, इसका तुम पूरा ध्यान रखना। उन्हें मेरी चिन्ता विलकुल न करने देना। हनुमान मुझे भी और रामको भी बहुत प्रिय हैं। उनका साथ तुम्हें जरूरी लगे, तो रामकी आज्ञा लेकर उन्हें बुला लेना। रघुपतिसे कहना, 'मुझे उन्होंने जो वस्तु सौंपी है, उसकी (गर्भकी) मैं पूरी सावधानीसे सभाल करूंगी। सन्तानको ऋषि-समागमका लाभ देकर शिक्षित और सस्कारी बनानेका निरन्तर प्रयत्न करूंगी। मेरे शील और सतीत्वकी रक्षा करूंगी और ऋषिजनोकी आज्ञाका पालन करूंगी।' जाओ भाई, अब तुम जाओ। कौशल्या माता, सुमित्रा माता और कैकेयी मातासे मेरा वन्दन कहना, देवरानियोका कुशल पूछना और सबसे कहना कि कोई मेरी चिन्ता न करे। परम कृपालु प्रभु मेरी प्रिय अयोध्याकी और अवधेशकी सब प्रकारसे रक्षा करे। "

कैसा अपूर्व सन्देश था वह ! लक्ष्मणको अरण्य छोड़ना अच्छा नहीं लग रहा था, परन्तु कर्तव्य उन्हें बुला रहा था। रथको उन्होंने आगे बढ़ाया तो सही, परन्तु धोड़े और लक्ष्मण दोनों ही बार बार पीछे मुड़कर देख लिया करते थे। सीताजी अपनी दिशामें आगे बढ़ रही थी। चलते चलते एक शीतल स्थान आया। वहाँ कगारके नीचे उतरकर वे एक वृक्षके नीचे बैठ गईं और अपने भावी कार्यक्रम पर सोचने लगी। कलकलके मधुर नादके साथ झरने बहते आ रहे थे,

मानो सीताजीकी सहायतामें दौड़े चले आ रहे हों । झरनाका यह बल्बल नाट् क्या कहना होगा ? कहा राम और कहा सीता ? जहा मिलन है वहा वियोग निश्चित है ।

८७

लक्ष्मण अयोध्या लौटे

लक्ष्मण जिसा तरह मनको ममझाकर अयोध्या लौट जाये । परन्तु व सीताजीके लिए अत्यन्त चिन्तित थे जानकीजीका अरण्यमें क्या हुआ होगा ? प्रातःकाल ही मन ही मानाआका पता चला कि जानकाजी रामने अरण्यमें भज लिया है । सभी विलाप करने लगी

अन् सीता फिर तुम्हारा यह वियोग । इस वियोगको हम कस सहन कर सकगा ? मानाआका स्नान सुनकर राम दौड़े दौड़ जाय । उह सान्त्वना दन हुए बाट् पूज्य माताआ रघुकुलका इतिहास त्याग और बलिदानका इतिहास है । इस आप क्या भूल जानी ह ? श्रुनिया आत्माका ही मान जानी ह । गरीर तो बबल एक साधन है वह माध्य न्ना है । आत्मा ही हमार माध्य ह । कभी कभी आत्माकी वन्ना पर गरीरका आगति भा दना पडती है ।

रामक आध्यात्मिक वचन सुनकर माताये धीर धीर स्वस्थ होय

लक्ष्मण गद्गद कंठसे बोले : “ बड़े भैया, चिन्ता करनेवाला मैं कौन हूँ ? आप यदि जगत्पिता हैं, तो मेरी भाभी जगन्माता हैं। दृढ़ मनवाले लोग भी जहाँ घबरा जाय, उस बीहड़ वनमें जानकीजीको मैंने वनराजीके समान विचरते देखा। मैं बार बार पीछे घूमकर देखता था। दोनों घोड़े भी ममतासे सीताजीकी ओर बार बार मुड़कर देखते थे। परन्तु सीतामाता तो बिना किसी घबराहट या चिन्ताके अपने कर्तव्य-पथ पर आगे ही बढ़ती जा रही थी। उनकी वीतरागताका मैं किन शब्दोंमें वर्णन करूँ ? उनकी व्यवहार-दक्षता भी कैसी अनोखी है। आपके और माताओके साथ अपने देवरो तथा देवरानियोंको भी याद करना और सूचनाये देना वे न भूलें। ”

लक्ष्मणकी बात सुनते सुनते रघुकुल-मणि राम जानकीके ध्यानमें मग्न हो गये।

इतनेमें तीनों माताओंने आकर रामसे कहा “ राघव, तुम्हारे पिता कर्तव्यका पालन करते हुए विलीन हो गये। और तुम स्वयं तो सदेह होते हुए भी जीवन्मुक्त योगीके समान कर्तव्यकी वेदी पर दिन-रात तपते ही रहते हो। प्रिय जानकी फिरसे अयोध्या लौटे और उसे देखकर हम अपनी आँखोंको तृप्त करे, यह हमारे लिए अब बहुत दूरकी बात मालूम होती है। अपने शरीरोंसे हम पूरा काम ले चुकी हैं। अपनी छोटी-बड़ी गलतियोंका हमने उचित चिन्तन और प्रायश्चित्त भी कर लिया है। अब तो तुम्हारे जैसे सुयोग्य पुत्रोंके जीते जी हमारा शरीर छूट जाय, यही हम तीनोंकी अंतिम महत्वाकांक्षा है। ”

एकाएक माताओंके ये वचन सुनकर राम थोड़े विचारमें पड़ गये। फिर बोले “ जिस प्रकार कर्तव्य-यज्ञमें स्वेच्छासे अपनी आहुति देना, उत्साहसे प्राणार्पण करना मनुष्यका धर्म है, उसी प्रकार कोई समय ऐसा भी आता है जब कर्तव्य पूरा हो जाने पर आत्मामें मग्न रहकर देहकी केचुल छोड़ देना भी मनुष्यका धर्म हो जाता है। आप तीनोंके लिए ऐसा समय आ गया है या नहीं, यह तो मैं नहीं कहूँगा। आप स्वयं ही इसका विचार करें। परन्तु यदि केवल जानकीके विरहके कारण आप ऐसा करना चाहती हो, तो आपके इस कार्यमें

दोष होनेकी सम्भावना है। दापयुक्त मृत्युको बुलानमें आत्मपारा भय रहता है।

तीना मातायें रामका वान मुनार कुछ मानमें पड़ गई। परन्तु अन्तमें अपन अंत करणानो उहान स्वच्छ कर डाला। तुरन्त पागालि प्रकट हुई। अग्निकी ज्वालायें तीनारो अगाना भ्गन करन लगी। जय दगरथ जय राम! ये उच्चारारो साथ उनक गरीर अग्निमें मिगान हो गये।

ये समाचार विसम छिग रह गरन थ? गुर वगिण्ट ता पहलम ही उपस्थित न चुने थ। अज प्रजाजनारा भीड जमा हान लगा। उमने सभाका स्थ ल लिया। गर वगिण्टन मज लागसि कहा यह बात दुखकी नहीं परन्तु हपनी है। जो मनुष्य जम लेना है उमरा मृत्यु निश्चित है। जो मनुष्य आत्माका जीवनमें प्रमुख स्थान न्तर जाने जीर मरत ह थ सचमुच अमर नो जाते ह। हमारी दृष्टिमें राजा दशरथ अमर ह। उसी प्रकार दशरथ राजाकी ये ताना महारानिया तथा रामरायकी राजमातायें भी सन्व अमर ह।

गुरु वगिण्टके पश्चात रामचन्द्रजीने भी समयाचित कुछ बातें कही। सब लाग माताआका स्मरण करते करते अपने घर गय। प्रजामें धागे जोर थ बातें होने लगा रामके वियोगने राजा दशरथके प्राण लिये। जानकीके वियोगने तीनो माताआका अन्त कर लिया। केवल एक क्वेयीके कारण दशरथ राजाकी मृत्यु हुई तथा राम लक्ष्मण सीताका वियोग जयाध्याको सहना पडा। और आज केवल एक धोबीके कारण तीन राजमाताओका विलय तथा जानकीजीका वियोग हुआ।

इम प्रकार जितन मुह उतनी बातें। ससारा लोग तो निमित्ताका ही दोष देने लगत ह। परन्तु अन्तमें निमित्त केवल निमित्त ही ह। वेगक एक समय जसे क्वेयीका निमाण खराब हो गया उसी तरह धोबीका दिमाण भी खराब हो गया। परन्तु रामके वनवासमें राज परिवारका कलह सदाके लिए गत हो गया। उसा प्रकार सीताजीके वनवासमें मानो रामके रायतश्वकी छोटी बडा मारी कमिया सदाके

लिए दूर हो गई और रामराज्यकी विजय-पताका लोगोके हृदयरूपी आकाशमें 'यावच्चन्द्रदिवाकरौ' फहराती रही ।

८८

वाल्मीकि-आश्रममें सीता

महर्षि वाल्मीकि आज अपने आश्रमसे बहुत दूर प्रातःकालकी हवामें घूमते घूमते निकल आये थे । हाथ-मुह धोकर ज्यों ही वे वनकी शोभा निहारने लगे, त्यों ही उनकी दृष्टि अचानक जानकी पर पड़ी । उनके आसपास दूसरे नर-नारियोंको न देखकर महर्षिने अपनी आखें वहासे हटा ली । मुनिको यही शोभा देता है । यौवनमें प्रवेश करनेके बाद तो सगी पुत्रीकी भी मर्यादाओंका पालन होना चाहिये । इस बीच सीताजीका ध्यान भी महर्षिकी ओर गया । विदेह जनककी पुत्री अब कैसे बैठी रहती ? सयत्न गतिसे जानकी वाल्मीकिके पास आई और आदरपूर्वक उन्हें दण्डवत् प्रणाम किया ।

महर्षि बोले “बेटी, तू कौन है और कहासे आई है ? ऐसे वनमें तू अकेली क्यों है ? ”

महर्षिकी सौम्य वाणीमें अगाध वात्सल्यका अनुभव करके जानकी गद्गद हो गई । उनकी आखोंमें हर्षके आसू चमकने लगे । वे धीमे स्वरमें बोली “महर्षि, मेरा नाम जानकी है । मैं जनकराजकी पुत्री हूँ, महाराज दशरथकी पुत्रवधू हूँ और वर्तमान अवधेश रामकी अर्धांगना हूँ । मैं अयोध्या-नरेशकी आज्ञासे इस वनमें आयी हूँ और दूसरा आदेश न हो तब तक मैं इस वनमें ही रहनेवाली हूँ । रामचन्द्रजीके भाई लक्ष्मण स्वयं मुझे यहाँ छोड़ गये हैं । अभी अभी वे अयोध्याकी ओर लौटे हैं । मैं थोड़ा चिन्तन करती यहाँ बैठी थी, इतनेमें वात्सल्य-मूर्ति पिताके समान आप गुरुजीके दर्शन हुए । आपके दर्शनसे मैं पवित्र हो गई हूँ, मेरा जीवन धन्य हो गया है । ”

सीताजीके फूलके समान कोमल वचन गुनकर महर्षि वामाकिव
जानका पार न रहा। उनकी आप्ताने सामन सीताजी सगुण जीवन
चक्र घूम गया 'कहा मिथिला कहा अयोध्या कहा वनवास और
कहा लकाजी अगोब बाटिका कहा अयोध्यामें पुनरागमन और कहा
पुन यह वनवास।' महर्षिन मन हा मन बीर नारी सीताका अभि
वादन किया और स्वगत कहा कौन कहता है नारी अबला है।
नारी डरपोक है।'

कुछ क्षण बाद जानकीस उहान कहा पुत्रा म तुम अच्छी तरह
पहचान चुका ह। तेर पूज्य पिताजी मुप अपना गुरु मानते ह। मरा
नाम वाल्मीकि है। मुझे तरे अद्भुत जीवनका भा पूरा ज्ञान है। श्रीराम,
लक्ष्मण और दूसर सब महा वनमें ही तुमसे मिलेंग। बल बेटा, हमार
आश्रममें चल और आश्रमका सब कामकाज अपने हाथमें ल ले।

वाल्मीकि जैसे सबया नि स्पही और पूण समयी ऋषिके हात्कि
वात्सल्यस आतप्रोत वचन मुनकर सीताजीकी सारी चिन्तामें दूर हो
गद। तेर हृदय-स्वामी रामचन्द्र तुम्हे यहा मिलेंग महर्षिके इन गद्दान
सीताके अन्तरक सारे दुख हर लिये। जिन महर्षिके नामस व परि
चिन थी जिनकी बीतरागताके विषयमें अनक बानें उहाने सुनी था
उही परम तपस्वी वाल्मीकिका नित्य सत्सग अपार वात्सल्यके साथ
प्राप्त हो इसस अधिक उह क्या चाहिय था ?

जानकी अपन पिता स्वरूप महर्षिके पीछ पीछ गइली बालिकाकी
तरह आश्रमकी दिशामें चलने लगी। बचपनका प्यार और दुलार आज
जानकीजीको आश्रमके अत्यन्त पवित्र वातावरणमें जीवनके लगभग २०
वषके बाद अनायास मिल गया। प्रकृतिन वाल्मीकिजीकी भी दीप
तपस्याके बाद रससात जसी पुत्री सातासे आज अनायास भेंट करा दा।

*

जानकीके वियोगमें रामचन्द्रकी अनेक रातें जागते जागते बीती।
व विचारामें डूब जाते 'जानकी कहा हागा? क्या करता हागी?
मर विकासक साधन एस शगरकी उसे वनमें भी कितनी चिन्ता रहती
होगा?' कभी व साचन लगते क्या सगर्भा सीताको अकेले वनमें

भोजनेके सिवा राज्यधर्मके पालनका दूसरा कोई मार्ग नहीं था ? राज्य धर्म-पालनके अति उत्साहमे आकर मैंने पत्नीके प्रति पतिके धर्म-पालनमें कोई भूल तो नहीं की ? मैंने जल्दीमे तो सीताको वनमे भोजनेका निर्णय नहीं कर डाला ? ” परन्तु इस मन्थनके अतमे उनके अन्त करणसे एक ही आवाज आती “ अपने साथ तथा अपने अगभूत व्यक्तियोंके साथ अन्याय करके भी दूरके लोगोके प्रति अधिक न्याय करनेमे अन्ततः सब लोगोके हित ममाया हुआ है। शर्त केवल इतनी है कि अपने आपसे तथा अपने अग वने हुए प्रियजनोसे अन्याय सहन करानेके पहले दोनोंको सहनक्षम बना देना चाहिये तथा साधारण समयमे दोनोंके प्रति प्रेमपूर्ण हृदयसे कर्तव्यका पूर्णतया पालन किया गया है इसका विश्वास खुदको और अपने अग वने हुए प्रियजनोको हो चुकना चाहिये। ”

इस कसौटी पर राम जब अपनेको कसते तब उन्हें अपने व्यवहारसे सतोष होता था और इस गहरे मन्थनके समयमे भी सच्चा आश्वसन मिलता था।

कभी कभी परिवारके प्रति अपने कर्तव्यो तथा राज्यके कर्तव्योका पालन करते समय भी सीताजीका वियोग रामको दुःखी बना देता था। इसके अतिरिक्त, माताओके स्वर्ग-गमनके बाद सीताजीकी छायाके अभावमे माडवी, उर्मिला और श्रुतिकीर्तिको भी सीताजीका वियोग सतत खटका करता था। लक्ष्मण भी कभी कभी एकान्तमे आसू बहाकर मन हलका कर लेते थे। यह सब भी रामचन्द्रजीको परेशानीमे डाल देता था। परन्तु अतमे सबको स्वयं रामकी सान्त्वनासे ही शांति मिलती थी। स्वधर्मके पालनमे निहित कठोरताका स्मरण करके सब कोई शांत और स्वस्थ बने रहते थे और अपने अपने दैनिक कार्योंमे जुटे रहते थे। सारा वातावरण आनन्द और उल्लासमय बना रहता था।

इस प्रकार रामराज्यके सुनहले दिवस बीत रहे थे। रघुपति रामचन्द्र स्वयं भी अधिकतर प्रजाकी उन्नति, शांति और सुखकी ही बातें सोचा करते थे। सद्भाग्यसे गुरु वशिष्ठकी छत्रछायामें अनेक ऋषि-मुनि सेवाभावसे राज्यकी प्रजामें सस्कार-सिंचनका कार्य करते थे और राज्यतंत्र पर भी अपना और प्रजाके महाजनोका प्रभाव डालते थे। वैसे

तो राज्यमें अपन-आप ही गौ-ब्राह्मणका भलीभांति आदर और पालन पोषण होता था। फिर भी राज्यसत्ताके साथ थोड़ी बहुत त्रुटियाँ तो लगी ही रहती हैं। इसलिए यदि राजा स्वयं अथवा राज्यके प्रमुख अधिकारी जरा भी असावधान हो जाय तो उनके कतव्य मागसँ च्युत होनामें देर नहीं लगनी।

एक बार राघवको ज्ञानक पता चला कि केवल यज्ञ करनेके कारण एक पवित्र गन्धको राज्यतन्त्र द्वारा भारी दंड मिला है और यह आरोप लगाया गया है कि उस शूद्रके यज्ञके कारण ही एक ब्राह्मणका इकलौता जवान पुत्र मर गया है। इस समाचारसे रामको गहरा दुःख हुआ। सबसे पहले उन्होंने उस गन्धके आप्तजना तथा राज्यकी सारा शूद्र जातियोंको बुलाकर राज्यतन्त्रकी ओरसे उनसे क्षमा माँगी। फिर दंड पाये हुए गन्धका हस्तसँ लगाकर मात्स्वना दी। इस दण्डमें किसका मन द्रवित न होता?

रामने कहा, 'शूद्र मेरे सबसे ज्यादा प्रिय प्रजाजन इसलिए हैं कि उनका काम समाजकी ऊँची सेवा करना है। उन्हें हम सबसे पवित्र मानते हैं। गुरु ऋषिपुत्र ने कहा, 'शूद्रका काम स्वयं एक यज्ञ है, इसलिए उनके सिर अथ किसी यज्ञकी जिम्मेदारी हम नहीं डालते। परन्तु इसका अर्थ यह नहीं है कि उन्हें यज्ञ करनेका अधिकार नहीं है। इसके विपरीत, उनका प्रतिनिधि चल्तनाला महान मन्त्रालय ही हम सबको यज्ञ करनेकी प्रेरणा देता है।

जिसका पुत्र मर गया था उस ब्राह्मणसे रामने कहा, 'आजसे आप मुझ अपना पुत्र समझ लें। ब्राह्मण गन्धद हा गया और अपने पुत्रका मत्पुसँ गन्ध साथ जा गया है हुआ था उसका कारण अपनको मानकर बड़े शत्रुके सामने पश्चात्ताप करने लगा। राज्यके मुख्याध्यक्ष और महाजन यह कहकर पश्चात्ताप करने लगे कि यदि हम लाकमनको मर्तव्य जाग्रत रखकर अच्छे माग पर लगाय रहते तो ऐसी घटना न घटती। इसका बाद दण्ड दनवाले राज्य-अधिकारियोंके पश्चात्तापका तो कोई पार ही न रहा।

इस घटनाके निमित्तसे सब कोई ऊचे उठे। घन्धेके आधार पर ऊच-नीचका भेद करनेवाले स्थूल चक्षुओ पर गुण-दोषके आधार पर मनुष्यकी उच्चता तथा नीचताका निर्णय करनेवाले सबके आंतरिक चक्षु-ओने पुन विजय प्राप्त की। सस्कृतिके इतिहासके ऐसे प्रसंग इस बातके प्रमाण हैं कि बार बार पुराणवादिका की दिशामे झुक जानेवाला लोक-मानस ऐसे आघातोसे स्थिर खड़ा होकर उन्नति और प्रगतिकी ओर बढ़ता है।

८९

वाल्मीकिका वात्सल्य

वाल्मीकि-आश्रमका निवास सीताजीके लिए सतत ज्ञानामृत पान करानेवाला बन गया था। आश्रमकी छोटीसे छोटी घटना भी आध्यात्मिक ज्ञान करानेवाली सिद्ध होती थी। वैसे तो रावण द्वारा अपहरण होनेके पूर्व रामके साथ भी जानकीको दण्डकारण्यमे तथा यात्रामे अनेक ऋपियो और ऋषि-पत्नियोंका समागम प्राप्त हुआ था। परन्तु इस आश्रममे उन्हें कोई अनोखी वस्तु मिलती थी। संभव है, सीताजीकी आजकी आयु तथा आजकी स्थितिके कारण उनकी अपनी जिज्ञासा ही अद्भुत बन गई हो। वाल्मीकि ऋषि मूलतः वनवासी भील और घोर पापी थे। परन्तु हृदयका परिवर्तन होनेके बाद वे महासन्त बन गये थे। ऐसे महापुरुषके सतत सहवासका प्रभाव भी इसमे कारण बना हो। किसी समय वनराज — सिंह — का परिवार आश्रमके सुरभित वातावरणसे आकर्षित होकर वहां आ पहुँचता और हरिणोंके झुंड भी आकर उनके पास बैठ जाते। जानकीके मनमे भय और आश्चर्यका भाव पैदा होता न होता कि इतनेमे महर्षि हरिणोंके बीच पहुँच जाते और उनके शरीरो पर अपने कोमल हाथ प्रेमसे घुमाने लगते। हरिण चले जाते तो वाल्मीकि उनकी प्रतीक्षामे बैठे वनराजके पास पहुँच जाते। उनके बैठते ही सिंह भी बैठ जाता और उसकी केशावली पर

ऋषिराजका प्रमल हाथ धूमन लगाता। गिर और बाधम न जगता वान ता ममगी जा मरती है परन्तु गिरव माय तेमा बागम्य भी अनुभव लिया जा मरता है यह कपना बुद्धिसे दायम पर है। यह वान सीताका जोर भा विचित्र माडूम हाता कि बागम्यक एम वातावरणमें पशु अपना प्रवृत्तिगत वर और विरोध भा भूल जान थे। वेदोच्चारके समय पत्नी भी श्रानाआर ममान एवम न जान तत्र ता सीताजीके आनन्द और आश्चर्यका पार न रहता।

एक बार अवसर देखकर उहान गुर घरणामें भग्नर नगारर जाधमक इस रहस्यको जाननकी इच्छा प्रगट की। वाल्मीकि बाल बेटो इसमें कोई चमत्कार नहा है। किसी प्रकारकी अम्वाभाविरता भी हममें नहा है। प्राणीमात्रमें जा धनना निवास करती है उस दृष्टिम प्राणीमात्र एक-दूसरक मित्र ह। बाहरका विराधा दियाई दन वाली प्रवृत्तिकी अपेक्षा यह प्रवृत्ति जविक गहरी और मौलिन है। हरिणमें जो चेतना है वही सिंहमें भी है जो चेतना सपमें है वही चालमें भी है। उस हरी मरी वनस्पतिमें भी वही धनना निवास करती है। दव दानव और मानवमें भी वही चेतना विद्यमान है। विश्वमें पाये जानेवाले छोट-बड़े मभा जीव जन्तुआमें उसका तेज निखाई पटता है। इस विज्ञानको समझकर प्राणीमात्रके साथ तमय धनना ही मानव-जीवनका परम लक्ष्य है।

जानकाके मनमें सुनते सुनते हा एक प्रश्न उठा। महर्षिने पूछनेकी अनुमति दी इसलिए उहोन पूछा ऋषिराज यह बात अच्छी तरह मेरी समझमें जा गई कि मनुष्य-जातिके साथ ही नहीं परन्तु विश्वकी प्राणीमष्टिक साथ भी हमारा इस प्रकारका अभिनव सम्बन्ध है। इस दृष्टिम दम्बे तो पुरुष और स्त्राके बीच भी कोई सात्त्विक भेद नहीं है। परन्तु एक प्रश्न मनमें उठता है कि वनमें रहनेवाले ऋषि मुनि श्रेष्ठ ह अथवा वस्तीमें धूमन या स्थिर रहनेवाले ऋषि मुनि श्रेष्ठ ह ? इन दोनोंमें किनकी साधना श्रेष्ठ मानी जाय ?

वाल्मीकिजीने हसकर उत्तर दिया ' तू ही बता बेटो तुझे कौन श्रेष्ठ लगते ह ? '

सीताजी मुसकराती हुई बोली - “परम पिता, मैं क्या बताऊँ ? परन्तु आपकी आज्ञा है इसलिए मैं कहती हूँ कि मुझे तो वनवासी ऋषि ही श्रेष्ठ लगते हैं। जब मैं अनेक दृष्टियोंसे जाच करके देखती हूँ, तो मुझे वनवासियोंमें ही अधिक वीतरागता, स्वाभाविक त्याग और अविरत तपस्या दिखाई देती है।”

महर्षि पहले तो छोटे बालककी तरह जोरसे हसे और फिर गंभीर होकर बोले “बेटी, कुदरत और चन्दनकी परीक्षा कसौटी पर चढ़नेके बाद ही होती है। हमारे जैसे वनवासियोंके जीवनमें कसौटी पर चढ़नेके अवसर विरले ही आते हैं, इसलिए हम श्रेष्ठ दिखाई देते हैं। यदि मैं अपनी ही बात कहूँ तो मुझे गुरु वशिष्ठ अयोध्यामें स्थायी रूपसे रहते हुए भी कहीं अधिक श्रेष्ठ लगते हैं। प्रतिदिन जीवनमें आनेवाले महान् प्रलोभनोंके सामने वे योगवीर कैसे अटल खड़े रहते हैं। ये केवल शिष्टाचारके शब्द नहीं हैं, परन्तु मेरे हृदयके शब्द हैं।”

सीताजी “आपके जैसे महर्षिको तो यह नम्रता ही शोभा देती है। अब मैं समझ गई। मूल स्वभावको देखते हुए न तो कोई ऊँचा है, न नीचा है। जिस प्रकार बाह्य स्वभाव-भेदके कारण स्त्री-पुरुषके कार्यक्षेत्र अधिकतर अलग अलग होते हैं, परन्तु अपने अपने स्थान पर दोनों ही एक-दूसरेसे श्रेष्ठ और सच पूछा जाय तो समान हैं, उसी प्रकार वनप्रिय ऋषिगण और ग्राम तथा नगर-प्रिय ऋषिगण भी वस्तुतः समान हैं।”

महर्षि वाल्मीकिने सीताजीकी बातका समर्थन करते हुए जोड़ा - “दोनों एक-दूसरेके पूरक हैं। इतना ही नहीं, कई बार वनवासियोंको अपने विकासके लिए ग्रामवासी ऋषियोंके बीच जिज्ञासु बनकर रहना पड़ता है। यही बात ग्राम तथा नगरवासी ऋषियोंके लिए भी सच है। वास्तवमें भीतरसे जो सद्गुणोंमें उत्तम हैं वही श्रेष्ठ हैं। बाह्य परिस्थिति मनुष्यका मूल्य आकनेमें सहायक तो होती है, परन्तु वह मूल्यांकनका अंतिम मापदण्ड नहीं है। गृहस्थो और सन्यासियोंको भी यही नियम लागू होता है। उनके विषयमें भी निश्चित रूपसे यह नहीं कहा जा सकता कि कौन ऊँचा है और कौन नीचा।” -

मना मीताना महर्षिके इन वचनो द्वारा जीवनका अनायास पामय प्राप्त हुआ। मत्स्यकी अगाध महिमारा उह स्पष्ट दान हुआ।

९०

‘प्रजा राज्यसे बड़ी है’

जिस प्रकार व्यक्तिके विवाहके लिए धन और तप आवश्यक है, उसी प्रकार राष्ट्रके विकासके लिए भी धन और तप आवश्यक है। रामचन्द्रजी महान धार्मी थे। फिर भी एक आत्म गामकके माने अयोध्याकी महान प्रजाके प्रति अपने महान उत्तरदायित्वका उह सदा ध्यान रहता था। उस ध्यानसे माथ ही साथ रामकी अपना मर्यादाआका भी गान था। अपने दायित्वका समझनवाले शासककी ऐसी जागृति और नम्रता उनका अनुमरण करनेवाली प्रजाको तथा स्वयं गामकोंको भी सदा ऊँचा उठाती है।

जिस तरह एक धोबीके जिना साबुन-समझे कह गये वचनमें भी रामने मत्स्यको ही लाजा और उसका फलस्वरूप अंतमें धोबीका परिहार जयोध्याकी प्रजा तथा स्वयं राम भी अधिक उन्नत और अधिक शुद्ध बन उसी तरह एक झूठे मनके कारण राज्यतंत्र तथा प्रजाके विभिन्न वर्गोंन जो एक अपनाया उसमें से भा रामने महत्त्वकी वस्तु राज की। उह लगा कि साकेतका राज्य दान और तपकी प्रक्रियाआमें से ता निकल चुका है अब उस यज्ञका प्रक्रियामें से भी निकलना चाहिये। परंतु गुरु वशिष्ठका समतिके अभावमें राम अपने सुविचाराको भी अपूर्ण मानते थे तब राज्यकी प्रजास सम्बन्ध रखनवाली बातमें तो प्रजाके ध्येष्ट प्रतिनिधि गुरु वशिष्ठको पूछे बिना वे कदम उठा ही नसे मकत थे। पहले उन्होंने अपने भाई भरत लक्ष्मण और गनुष्मकी समति प्राप्त की। वानमें चारा भाई गुरुजाके पास गये।

रामके नम्र अभिवादनके साथ ही वशिष्ठजी बोले ‘प्रिय राम, साकेतके राज्यतंत्रका इतना बड़ा भार तुम्हारे कंधो पर है। तुम्हारी

कार्य-व्यस्तताका कोई पार नहीं है। फिर भी तुम हर अवसर पर मेरे पास आनेका कष्ट करते हो। इसकी अपेक्षा तुम मुझे ही क्यों नहीं बुलवा लिया करते ? ”

गुरुकी चरण-रज माथे पर चढ़ाकर रामने कहा - “गुरु महाराज, आपकी अतिशय नम्रता आपसे यह कहला रही है। परन्तु मैं नम्र भावसे कहना चाहता हूँ कि मेरी दृष्टिमें प्रजा सदा राज्यसे बड़ी है और प्रजासे सत्य बड़ा है। आप मेरे, राज्यके तथा प्रजाके गुरु-स्थान पर विराजते हैं। आज मैं केवल गुरु वशिष्ठके रूपमें आपके पास नहीं आया हूँ, परन्तु राज्यके तथा प्रजाके महान गुरुपद पर आसीन महर्षिके रूपमें आपके चरणोंमें आया हूँ। इसमें मेरे समयका प्रश्न ही नहीं उठता, क्योंकि मैं राष्ट्रका ही एक प्रश्न लेकर इस समय आया हूँ, जो राज्यतंत्रका भी एक अंग है।”

गुरुजी “अवधेश, तुम्हारी बात ठीक है। अब बताओ, तुम्हारा प्रश्न क्या है ? ” रामने यज्ञके सम्बन्धमें अपने विचार गुरुके सामने रखे। गुरु वशिष्ठ बोले - “तुम्हारी बात सत्य है। दशरथकी मृत्यु, राम-सीताका वनवास, जटाधारी भरतका राज्य-संचालन, सीताका वन-गमन तथा माताओंका स्वर्ग-प्रयाण — ये सब घटनायें राज्यतंत्रके तपको बताती हैं। प्रत्येक अवसर पर राज्य और प्रजाने जो त्याग किया है, वही न्याय और दान है। अतः अब राज्य तथा प्रजाको यज्ञ अवश्य करना चाहिये। उसमें भी आज जब व्यक्तिके रूपमें एक राजाके शासनकी प्रथा है तब तो प्रजाकी-ओरसे स्वयं राजाको ही ऐसी बातोंमें उदाहरण प्रस्तुत करना चाहिये। हमारे शास्त्रोंमें ‘राजा कालस्य कारणम्’ और ‘यथा राजा तथा प्रजा’ वचन इसी दृष्टिसे कहे गये हैं। और मुझे यह भी लगता है कि राज्यको अब अश्वमेध यज्ञ करना चाहिये। यज्ञका अर्थ केवल इतना ही नहीं है कि पंच महाभूतोंसे लिया गया ऋण चुकाया जाय। इस यज्ञसे विश्वमें आदर्श अनुशासनका प्रचार और परीक्षा भी होगी। एक सर्वोत्तम अश्वकी पीठ पर राम-राज्यका छत्र रखकर उसे विना किसी वन्यवनके छोड़ा जायगा। उस अश्वको यदि कोई पकड़े नहीं और वह सकुशल अयोध्या लौट आये,

तो माना जायगा कि रामराज्यकी सबत्र विजय है, उससे यह भी माना जायगा कि सारे विश्वमें राजा रामसे श्रेष्ठ कोई राजा नहीं है। इसके फलस्वरूप चारों दिशाओंमें बिना किसी सघपक रामराज्यका झका बजने लगेगा। परन्तु यदि कोई उस सर्वोत्तम अश्वका पकड़ेगा तो न केवल रामराज्यकी परीक्षा हागी परन्तु इसकी भी प्रतीति होगी कि विश्वमें राजा रामसे श्रेष्ठ कोई राजा अवश्य है।'

रामको इस अश्वमघ यज्ञकी अंतिम बात बहुत अच्छी लगी। उत्तम पुस्तिकाकी विशेषता ही इस बातमें होती है कि वे अपनसे श्रेष्ठ व्यक्तिके बारेमें जानकर बहुत खुश होते हैं और अपना अधिक विकास करनेको तत्पर रहते हैं। अपनी इस विशेषताके कारण कोई उनसे श्रेष्ठ न निकले तो भी वे अहंकार अथवा ईर्ष्याकी आगसे जलते नहीं। वे यह भी समझते हैं कि समाजको प्रेमपूर्ण अनुशासनकी जरूरत होती है। परन्तु जो स्वयं अपने पर बड़ा अनुशासन रख सकते हैं वे ही समाज पर प्रेमपूर्ण शासन करनेका अधिकार प्राप्त कर सकते हैं। इस प्रकार अपने साथ वे समाजको भी उत्तरात्तर अधिक उंचा उठा सकते हैं। इसकी प्रतीति रामके जीवनके अनेक प्रसंगोंमें ही जानी है।

‘‘स अश्वमेध यज्ञमें एक महत्त्वपूर्ण प्रश्न यह खड़ा हुआ ‘‘किस यज्ञमें पति-पत्नी (राजा और रानी) दोनोंको साथ बैठकर यज्ञ स्थापित करना चाहिये। राजा राम तो यह था परन्तु रानी सीताका साथ क्या बटाया जाय? सीताजी तो अरण्यमें रहती थीं। कबल यज्ञके लिए उन्हें बुलाया भी कैसे जाय? जब रामचन्द्रजी बाबमें वनवाससे जयाध्या नहीं कर पाते तो सीताजी भी क्या कर सकती थीं? वे भी तो अपनी देवकी प्राणपणसे रक्षा करनेवाले पतिका ही वीरगुणों पर भरोसा करती थीं न?

मग कोई विचारमें पड़ गया। जिन रामने माता पिताका वचन पालन के लिए वनवास स्वीकार किया उनका रामका पिता अत्यन्त पुनः सुमन मारणिक द्वारा जाना भगा कुछ समय वनमें घूमकर मग जमाया गेला आशा। इस आशाका स्वयं रामने भी जब मानने में तैयार हो लिया तब रामके अनुयायी भाता और लक्ष्मणका ता बहना भी क्या? जिन वक्त्या मानाने नापस-वन्द कारण करवाकर रामका

वनमें भेजा, उन्होंने वनमें आकर रामसे राजगद्दी पर बैठनेके लिए अयोध्या लौटनेकी विनती की, फिर भी रामने उनकी बात नहीं मानी। राम अच्छी तरह समझते थे कि सत्य माता-पितासे अधिक महान है। सत्यको आच न आये और त्याग तथा वलिदानकी भावना बढती हो, तो माता-पिताके वचनका मूल्य सबसे अधिक माना जायगा। परन्तु यदि सत्यको आच आनेका भय हो और त्याग व वलिदानकी भावना मद्ध पडती हो, तो माता-पिताके वचनका भी कोई मूल्य नहीं है। ‘सत्यदेवो भव’ सूत्र यदि नीवमें हो, तो ही ‘मातृदेवो भव’, ‘पितृदेवो भव’ तथा ‘अतिथिदेवो भव’ जैसे सूत्र महत्ता प्राप्त करते हैं। जहा सत्यका सर्व-प्रथम महासूत्र न हो वहा दूसरे सब महासूत्र अल्प ही नहीं, परन्तु निरर्थक भी हो जाते हैं। यही सूत्र सीताके बारेमें भी सत्य था। अब धोबीका परिवार भी आकर सीताजीको वापिस बुलानेकी रामसे प्रार्थना करे और स्वयं राम सीताजीसे लौट आनेकी प्रार्थना करे, तो भी उद्देश्य पूरा होनेसे पहले सीताजीके अरण्यसे अयोध्या लौटनेकी कोई सभावना नहीं थी। ऐसी स्थितिमें बहुत सोच-विचारके बाद ‘दूसरा विवाह करने’ की सूचना मिलना स्वाभाविक था। ऐसी सूचना अयोध्याके लिए नई भी नहीं थी। राजा दशरथकी तीन रानिया थी। फिर राम यदि दूसरी पत्नी लाये, तो कौन इसका विरोध कर सकता था? और करता भी क्यों?

परन्तु रामको तो राज्यमें और राज्यकी प्रजामें नयी नयी परंपराये स्थापित करनी थी। जिस क्रांतिमें त्याग नहीं है, जिस क्रांतिमें वर्षों पुराने अन्यायोको मिटानेकी अहिंसक और परिणामकारी शक्ति नहीं है, वह क्रांति सच्ची और संपूर्ण हो ही नहीं सकती। जिन सुधारोंमें सुविधाका लचीला बहाना छिपा रहता है, वे सुधार न तो स्थायी होते और न सुनिश्चित होते हैं। राम पगु क्रांतियों और पगु सुधारोंके प्रवाहमें बहनेवाले नहीं थे। उन्होंने दूसरी पत्नीकी सूचनाका स्पष्ट किन्तु नम्र और तेजस्वी उत्तर दिया “यदि सीता रामके सिवा अन्य किसीको अपना पति नहीं मान सकती, तो राम भी सीताके सिवा अन्य किसी स्त्रीको अपनी पत्नी नहीं मान सकता। यदि जीवनके व्यवहारोंके लिए

दूसरी पत्नी नहा हो सकता, तो धर्मरूपी यज्ञ के लिए भी दूसरी पत्नी नहा हो सकती।

कितना सुंदर उत्तर था यह ! उस शम क्षणमें विश्वकी स्त्री गतिने राम पर कितने जागीरान् वरसाय हाम ! जो नियम व्यवहारमें सुनियम हो वह धार्मिक क्रियामें तो दुगुना सुनियम होना चाहिये। और जिस जातिशक्ता जावनके व्यवहारक साथ कभी मत न हो वह जाति जगत्में कोई मूल्य नहीं रखता। भगवान राम इसी कारणसे भावान माने गए।

एक आर प्रजानिष्ठ राजा राम धोबी और धोबिनके जावेशपूर्ण वचनानो सर्वानुमतिके अनुरागनमें स्थान देते हैं और दूसरी ओर वही राम सर्वानुमतिके दूसरी पत्नी करो क अनुशासनको स्वीकार नहीं करते यह कमे आश्चर्यकी बात है। परन्तु गहरा विचार किया जाय तो इसमें नया ओर आश्चर्यजनक कुछ नहीं है। जहां मृत्यु और 'यापको हानि न पहुँचे और त्याग तथा विलिप्तकी भावना बत वहा एक प्रजाजनका वचन भा राम और सीताके लिए सबधृष्ट महत्त्वका वचन बन जाता है। परन्तु मृत्यु और 'यापना हानि पहुँचनेके भयक साथ नहा सुविधाका लक्ष्य वहांना मित्र जाता है वहा राम समस्त प्रजा ओर गरजनका वचनका भी विनयपूर्वक भग वरनेकी गति रखते हैं। धर्म = धाराम ! व्यक्तिसे समष्टि अधिक महान है, परन्तु व्यक्ति और समष्टि सबका मूल सत्य तो सबसे महान है ही। गुरु वणिष्ठनी अन्तरात्मा गमका 'म मन्त्रनाम प्रमन्न हो गई। तब प्रजापति प्रसन्नतारा पूछता थी क्या ? अयोध्या निर्मित नारी समाजमें सीताके वन-नामनरा

सूक्ष्म देहमे तो वे रामके मनमे ही रहती है। अब राम यदि समत हो तो रामके मनको जाननेवाला कोई कलाकार उनके मनमे वसी हुई सीताको प्रतीकके रूपमे किसी प्रतिमामे अंकित कर दे। ”

राम गुरुजीके इस मानसशास्त्रीय हलसे बहुत प्रभावित हुए। रामने इस प्रस्तावको स्वीकार किया और सबके मन हर्षसे भर गये।

एक रामभक्त कलाकारने सीताजीकी प्रतिमा बनानेका बीडा उठाया। इस कार्यमे हनुमान काफी सहायता कर सकते थे। इतना निश्चित हो जानेके बाद एक ओर प्रतिमा-निर्माणका कार्य आरम्भ हुआ और दूसरी ओर अश्वमेध यज्ञके निमन्त्रण जहा-तहा भेजे जाने लगे। इन निमन्त्रणोमे जनकराजका स्थान तो होना ही चाहिये। गर्भवती सीताके वनवासकी कल्पना मिथिला नगरीमे किसीको नहीं थी। इसलिए राम और सीता तथा अन्य तीन पुत्रियोसे मिलनेका उल्लास मुनयनाजीके मनमे छा गया।

९१

लव और कुश

वाल्मीकि ऋषिके आश्रममें जानकीजीको एकसाथ दो पुत्र जन्मे। वे दिनोदिन बढने लगे। वानप्रस्थ आश्रमका पालन करनेवाली ऋषि-पत्नियोने पुण्यकार्य मानकर दोनो बालकोके पालन-पोषणमें बडा रस लिया। रामको भी बाल्यावस्थामें जो लाभ न मिल सका, वह राम-पुत्र लव-कुशको मिलने लगा। दोनोको गर्भसे ही नये सस्कार प्राप्त हुए थे। गुम्मे शिष्य सवाई और पितासे पुत्र सवाई इसी प्रकार बन सकता है। सकुचित और एकागी दृष्टिमे देखनेवाले मनुष्य इस रहस्यको कैसे पा सकते हैं? उनकी आखे तो राम और सीताके वियोगके आँसू ही देख सकती हैं।

लव और कुश दोनो एक-दूसरेमे बढकर थे। दोनो साथ दूध पीते, नाथमें खाते नाथमे खेलते-कूदते और साथ साथ ही विकास

दूरसे देखकर क्षण भरके लिए तो स्वयं जनकराज भी भ्रममें पड़ गये, यद्यपि जानकीके अरण्यवासकी बात व अयोध्या आन पर श्रीरामके मुखसे ही जान चके थे । उन्होंने यह भी जान लिया था कि राम उनके लिए दूसरा विवाह नहीं करनेवाले ह । फिर भी प्रतिमाको देखकर ऐसा लगता था मानो उनके लिए ही सीताजी विमानमें उड़कर वनसे अयोध्या आ पहुँची ह ।

अयोध्याका वह धोड़ी प्रतिमाके पास जाकर दृष्टवन प्रणाम करता और क्षमा मागता था । यह दृश्य देखकर सबको ऐसा लगन लगा कि सबकुछ ही सीताजी अरण्यसे लौट आई ह । इसके बाद ता जो लोग रामचन्द्रजीकी प्रणाम करते थे व सीताजीकी भा करते थे । यह देखकर राम चकित हो गये और कलाकारकी तात्कालिक कलाकृतिमें बहुत प्रभावित भी हुए । परन्तु जब जानकीकी माता सुनयनाजी उस जोर आइ तब रामन छट होकर कहा 'पूज्य भगवन्तो गरजनो ध्यानप्रस्थो आमन्त्रित सज्जता और नगरजना मरे पास बठा हुई जानकीजी नहा ह परन्तु उनकी प्रतिमा है । कलाकारने ऐसी कलाकृति निर्माण की है जा हम सबको मग्न कर रही है ।

यह सुनकर सब स्तब्ध हो गये 'क्या ये सीताजी नहा ह ? केवल उनकी प्रतिमा है ?

रामने फिर एक बार कहा 'सबकुछ य सीताजी नहीं ह सीताजीकी प्रतिमा है । कलाकारन सीताजीकी तात्कालिक प्रतिमा निर्माण करनेमें जा कुशलता प्रकट की है 'उसके लिए मैं अपनी ओरसे तथा सभाकी ओरसे उह हार्मिक अभिनन्दन दता ह ।

कलाकार सभामें खड़ा हुआ और रामचन्द्र जनकराज जादि सबका उसन अभिवादन किया । समान तालियास उसका सम्मान किया । कलाकी पारखी जनताको कलाकारन नमस्कार किया और कहा 'यह काम मने भगवान रामका दयासे आरम्भ किया था । मैं तो केवल एक निमित्त ही हू । इस कलाकृतिका थय भुम नहा परन्तु भगवान रामको और उनका साधियाको मिलना चाहिये । कलाकार गुणनि अनुसार अपनी कलाकृतिको रंग रेखा और आवार तो दे

सकता है, परन्तु गुणोका ज्ञान करानेवाला कोई अवश्य होना चाहिये। सीतामाताके गुणोका यथातथ वर्णन करनेवाले तथा मुझमें सच्ची ऊर्मि उत्पन्न करनेवाले भगवान रामके चरित्रवान साथियोका मुझ पर बहुत बड़ा उपकार है।”

लोगोको इस बातका भी पता चल गया कि इन सब गुणोका तथा वन्य वातावरणको अपनी कल्पना-सृष्टिमें आकार प्रदान करनेके लिए कलाकारने कई दिनो तक तपस्या करके एकाग्रता सिद्ध की थी। इससे सभाको इस बातका विश्वास हो गया कि सच्चे कलाकारमें पहले चरित्रका जन्म होता है और उसके बाद कलाका जन्म होता है। सच्ची कला चरित्रका अनुसरण करती है। इस प्रकारकी कला सरल, भव्य और लोकव्यापी हो सकती है।

सब लोग कला और कलाकारके विचारोमें तन्मय थे, इतनेमें यज्ञका घोड़ा आ पहुँचा। उसका शरीर श्वेत और सुन्दर था। कान ब्यामवर्णके थे। अपने तेज और रूपसे वह मोहक लगता था। अब सभाके ध्यानका केन्द्र वह अश्व बन गया। सिर पर उसके मणियुक्त मोरपखकी कलगी सुशोभित थी और पीठ पर रत्नजडित जीन चमक रही थी। एक सेवक रेगमकी सुन्दर डोरीसे बांधकर उसे सभामें लाया। उससे कुछ दूर हजारो सुसज्ज सैनिक खड़े थे। राजा रामने अश्वका पूजन किया। यह विधि ऋषि विश्वामित्रजीने कराई। इसके बाद हजारो हाथोसे दान बाँटा गया। सूर्याश्वके समान इस घोड़ेके मस्तक पर एक अभिषिचित पत्र लगाया गया, जिस पर लिखा था “जिसमें युद्ध करनेकी शक्ति हो वही राजा रामचन्द्रके इस घोड़ेको बाँधे। जिसमें यह शक्ति न हो वह या तो रामचन्द्रजीकी अधीनता स्वीकार करे या वनमें भाग जाय।”

यज्ञके इस अश्वके साथ शत्रुघ्न तथा हजारो सैनिक रामके आज्ञा लेकर रवाना हुए।

यज्ञका अश्व पकड़ा गया

आज सब ओर कुत्रा पशुचमक निकलकर मवेशी गरीये गिराव
जगहमें निकल गया था। राजा कुमारान राजा हाथ धनुषियाता गावना
में गय था। दाता बड़ उत्साहमें आता आता लखना भजनमें मग्न थे।
परन्तु राजा इस जगह मन्त्र मारता जाता गया था कि राजा गरीये जगह
पग उनका बाणारा गिराव न बन जाय।

इतनेमें अयाध्याग छाड़ा गया जगहमें बाणारा बड़ माटार अश्व
उड़ गिराई दिया। राजा कुमारान उम मुन्त्र धारता पशुचमक एत
छाड़के साथ बाघ दिया। कुत्रा घाड़क माप बल रत्ता एत गनित
जागे जातर मन्त्रतास वाला त्रिपुत्रा यह मन्त्रा घाड़ा है। यह
देवा जगके मुकुट पर यह पत्रिगा ल्या हुई है।

कुत्रहलस दोना कुमारान उम पककर कहा अच्छा ता अर हम
आपका गनितका ही माप निकालग। अर हम घाड़का नहीं छाड़ेंग।

एक दूसरे सनिकन अधिक नरमीम कहा तुम वनक बामी
हा। वनवासीका युद्धमें क्या सम्बन्ध? बालूठ न करा घोड़को छोड़
दा। तीसर सनिकन हसते हसते कहा य बघार बालू रावणक
समान गनिताला राजाका बघ करनबालू आरामको क्या जानें?
चौथा सनिकन बोला लो म ही घाड़का छाड़ लता हू। अनेक
योद्धाओंको पराजित करके यग जाये नूण हम लोगोकी बहादुरीको ये
नूण कुमार कस जान सकत ह?

कोई सनिकन घाड़के पास जाकर गिरा पर उठाये इतनेमें ता
भावधान। बहकर लखन एत बाण पन न न गद्वे साथ
छोटा। वह अपने लक्ष्य-स्थान पर होता नूणा आगे बड़ गया। धरती
हिल उठी। कसी जगहमें घी बल धनुष-बला। सब जगहमें मुग्ध
हा गये साथ ही कापने भी लग।

अब कुश चुप न रह सका . “आप सब क्षत्रिय हैं या और कोई ? इतने काप क्यों रहे हैं आप ? हम तो वनमें पैदा हुए हैं, इसलिए वनवासी हैं । परन्तु देखना, कहीं आप लोग स्थायी रूपसे वनवासी न बन जाय । हम जिन ऋषि-मुनियोंके चरणोंमें रहते हैं, उन्होंने हमें सिखाया है ‘अहिंसा अवश्य ही सर्वोत्तम वस्तु है । परन्तु कायरतासे हारकर जीवित रहनेकी अपेक्षा कायरताको त्यागकर शस्त्र-युद्धमें लड़ते लड़ते मर जाना हजार गुना अच्छा है ।’”

अब तो रामचन्द्रकी सेनाको दोनों कुमारोंके साथ युद्ध करना ही पड़ा । परन्तु दोनों कुमार युद्धकलामें इतने कुशल थे कि सारे सैनिक हार गये । शत्रुघ्न भी पराजित हो गये । सूचना पहुँचते ही लक्ष्मण और भरत अपनी शक्तिशाली महासेनाओंके साथ युद्धके मैदानमें आ पहुँचे । अयोध्याकी सेनाके हत और आहत सैनिकोंको चारों तरफ देखकर उन्हें बड़ा दुःख हुआ और विरोध पक्षमें केवल दो बल्लधारी किशोरोंको देखकर उनके आश्चर्यका पार न रहा ।

९४

लव-कुशका पराक्रम

अयोध्यामें अश्वमेध यज्ञकी विधि धूमधामसे चल रही थी । ऋषि-मुनियों तथा वानप्रस्थोंके मार्गदर्शनमें भूदेवोंके अनेक दल उच्च स्वरमें शुद्ध वेदोच्चारणसे वातावरणको गूँजा रहे थे । अनेक प्रकारकी औपधियोंकी आहुतियाँ दी जा रही थी । अग्नि, वरुण तथा अन्य देवताओंकी पूजा तथा अजलि-क्रम चल रहा था । प्रजाजनो, महाजनो, क्षत्रिय-वीरो, आमत्रितो, द्विजवरो तथा मुनिवरोकी साक्षीमें भगवान् राम यज्ञकी समग्र विधिमें सक्रिय भाग ले रहे थे । इस प्रकार यज्ञका रंग पूरा पूरा जमा हुआ था ।

उसी समय चार दूत आकुल-व्याकुल होकर यज्ञस्थान पर आये । उनके विह्वल मुखों पर सबकी आँखें टिक गईं । ‘दौड़िये दौड़िये, सहायताके लिए दौड़िये ।’ एक श्वासमें चारों दूत चिल्ला रहे थे ।

सभाके गभीर जीर गान लोगान उनसे कहा भाइयो समयका तो पहचानो। शात हो जाओ। गतिमें सब बात आदिसे जत तर कहा।” परंतु दूताक आत्मे सभाक शान वातावरण क्षुब्ध हो गया। लोग उठने-बठने लगे सबत्र भाग दौड़ मच गई। जहा गुरु वशिष्ठजीका बात भी सुननको कोई सवार न हो कहा अय जोगासी बात बोन मुनता? अतमें स्वय रामने खड हाकर कहा गात हो जाये गान हो जाइये। सारा सभामें फिरसे गति छा गई। जब राम चारा दूतसे बात करने लगे। दूताने जो कुछ कहा उसका सार इस प्रकार है

हमारे विराधमें केवल दो ऋषि-कुमार ह। हमारा समस्त सना धरागायी हो गई है। गुह्यजी भरतजी और लक्ष्मणजी तीना युद्धमें मूर्च्छित हो चुक ह। अब युद्धस्थल पर आपकी उरम्विनि अनिवार्य हो गई है। दबने हम पर मानो आपतियाका पहान गिरा दिया है।’ इतना कहते कहते चारो दूत बालकाका तरह राने लग। सारा सभा भा सहानभतिस रा पनी। रामचंद्रजान सबका गात करत हुए कहा

इसमें काई नद हाना चाहिय। ऋषि-कुमार ऐसा युद्ध लड़ें नकी तो म कल्पना भी नहीं कर सकता। इस बातको म मान ही नहीं सकता कि लक्ष्मण जिस बहादुरको कोई युद्धम पराजित कर सकता ह। और भरतका स्थायी रूपमें मूर्च्छित करनवाला विश्वमें कोई हो ही नहीं सकता क्याकि भरा यह विश्वास है कि जिस भरतन बमका उसके सच्चे स्वरूपमें समझकर अपन अणु अणम समा लिया है उस भरतजी वृच्छाके त्रिना इस प्रकार काइ उसका नाग कर ही नहा सकता।’

रामने ऐसे परब वचनास सभाक सब लोगोकी ध्याकुलता दूर हुई गौर उट थोड़ी सात्वना मिली।

अन्तमें रामने कहा जो कुछ भी हुआ हो, परंतु जब दूत य मभाचार लाय ह तब तो म एक क्षणक लिए भी बहा रर नहीं करता। म आप मत्रमें यनस्वल् छात्रनकी अनुमति मागता हू। और म्त्रका संपूण अनुमति तथा गुमेच्छात्राके साथ रामन अपने विभीषण जाति मित्रा तथा साकेतकी सनाको लेकर बनजी ओर प्रयाण किया।

अश्वके न होनेसे यज्ञकी सपूर्ण पूर्णाह्ति तो सम्भव नहीं थी। फिर भी रामके जानेसे अमर्यादित समयके लिए यज्ञकार्यको स्थगित करना पड़ा।

भगवान राम अपनी विशाल सेनाके साथ निर्धारित समय पर युद्धस्थान पर पहुच गये। अपने सामने उन्होंने योद्धाओके समान सुसज्ज दो मुनि-पुत्रोको देखा। प्रथम रामने दोनो कुमारोको अभिवादन किया और फिर पूछा “हे सुन्दर मुनि-किशोरो, तुम दोनोके भाग्यशाली माता-पिता कौन है? तुम अरण्यमे क्यों रहते हो? क्या तुम किसी प्रदेशके राजा बनना चाहते हो?”

दोनो कुमारोने नम्र किन्तु दृढ वाणीमे कहा “वाल्मीकि ऋषि हमारे पालक पिता है। विदेह जनकराज हमारे मातामह है। हमारी माताजी ऋषि-आश्रममे वर्षोंसे रहती है, इसीलिए हम मुनिपुत्र कहलाते हैं। हम वनकी प्राकृतिक शोभाका आनन्द ले रहे हैं। हमारे पालक पिताने हमें जो शिक्षा-दीक्षा और प्रशिक्षण दिया है, उसमे भौतिक राज्यका कोई महत्त्व नहीं है। केवल आध्यात्मिक राज्यका ही महत्त्व है। इस मार्गमे जहा जहा अहंकार सिर उठाता है, वहा वहा उससे युद्ध करना हमारा पहला कर्तव्य है। इस अश्वके मुकुटके साथ जो पत्र लगा है, उसमे हमें अहंकार दिखाई दिया। इसलिए उस अहंकार-का विरोध करनेकी इच्छा हो आई। आप इस तरह पूछताछ करनेके वजाय धनुष-बाण हाथमे लीजिये और हममे युद्ध करनेके लिए तैयार हो जाइये। तब हमारे माता-पिताकी सही कल्पना आपको हो जायगी।” कैसी वाक्छटा और कैसा तेज!

कौन महान पिता अपनेसे श्रेष्ठ पुत्रोको देखकर आनन्दित नहीं होगा? रामचन्द्रके हृदयमे इन ऋषिपुत्रोको देखते ही वात्सल्य उमड़ आया था। पूर्वजन्मके रक्तके सम्बन्धियोको देखकर भी जब स्नेह उमड़ आता है, तब इस जन्मके सम्बन्धियोकी तो बात ही क्या कही जाय? योगी होते हुए भी राम वात्सल्यकी भावनासे अभिभूत हो गये। अब तो दोनो कुमार बड़े हो गये थे, परन्तु माता-पिताको तो प्रौढ़ हो जानेवाली सन्तान भी बालक ही मालूम होती है। क्षणभरके लिए तो

कि वह्रादुरीमें भा गहरा विवेक और गुरुजनाका भाग्यशन आवश्यक होना है।

इस प्रकार आंतरिक पश्चात्तापसे दाना कुमारके मन और हृदय रो रह थ तभा महर्षि वाल्मीकि वहा आय। उस समय तक जानकीजीका मूच्छा दूर हो चुका था।

९५

पिता-पुत्रका परिचय

मूच्छा दूर होते ही जानकीजी बोली कुमारो तुम्हारी धनु विद्याका तुमने यह उपयोग किया? जा हनुमान मेरा धर्मपुत्र है और तुम्हारे पिताजाका परम विश्वम्भ तथा अन्य भक्त है उसकी तुम दानान यह दगा कर डाली है?

महर्षि वाल्मीकि कहन लग बटी सीता जो होनेवाला था वही हुआ है। अधिक चिंताकी कोई बात नहीं है।

इतनमें हनुमान कुछ इस तरह उठ माना गहरी नीन्क बाग जालस्य लते हण जाग हा। उठन ही सीताजाके चरणामें उट्टोन अभिवादन किया। सीताजीने उनके मस्तक पर हाथ रखा। हनुमान और सीताजी दोनोंका आसामें हृपके आसू धमकने लगे। वाल्मीकिजा और स्व-पुत्र एतद्वय कम दृश्यका दानन हा रन।

इतनमें जाम्बवत भा खड हण। हनुमान और जाम्बवन्त दोनोंने महामुनिरा प्रणाम करके पूछा भगवान राम कहा ह?

कुमार पूरा क्या मुनायें डमके पल्ल हा वाल्मीकिजीने सब कुछ जान लिया था। वस ता जगतका सारी धानाम निर्लिप्त मादूम हान बाउ भगामुनि अरण्यमें ही रहकर अपना अधिकतर समय बिताने थे परन्तु प्रयः और परोक्ष दोनों प्रमाणाम जगतकी छोटीसे छोटी बातें जानकर वे उन् भयने तराज पर नीन्क लन थ। जहा जहा भाग्यशन न्न जमा लगता वहा हरणक क्षत्रमें वे भाग्यशन जकर दत थ, परन्तु

यह आग्रह कभी नहीं रखते थे कि उनके कहे अनुसार ही सबको चलना चाहिये । स्वयं अपने प्रति वे अत्यन्त कठोर रहते थे, परन्तु अन्य लोगोंके प्रति उतने ही कोमल और वात्सल्यमय रहते थे । यही कारण है कि गुरु वशिष्ठ जिस प्रकार समाज-गुरु थे, विश्वामित्र जिस प्रकार राष्ट्रगुरु थे, उसी प्रकार वाल्मीकि उस युगमें सबके धर्मगुरु स्वभावतः बन गये थे ।

जाम्बवन्तकी पीठ थपथपाते हुए विश्वगुरु वाल्मीकिजीने विनोदमें कहा . “तुम सैनिक तो पूरे हो, लेकिन ऐसे असावधान सैनिक लगते हो जिसे इसका भी पता नहीं कि सेनापति कहा है । आदर्श सैनिकोंको जैसे लडना और मरना जानना चाहिये, वैसे ही मिलना और चौतरफा सावधानी रखना भी जानना चाहिये ।”

इतना कहकर वाल्मीकिजी आगे बढ़ गये । जानकीजी, दोनों कुमार, हनुमान और जाम्बवन्त भी उनके पीछे पीछे चलने लगे । थोड़ी देरमें ही वे रामके रथके पास पहुच गये । सबने रथ पर सोये हुए रामके दर्शन किये । रामको देखकर सीता कहीं विह्वल न हो जाय, इसलिए समयको पहचाननेवाले वाल्मीकिजी बोले “कोशल-नाथ, नाराज हो गये हैं क्या ? नाराज तो जानकीको होना चाहिये, क्योंकि अंतिम समयमें आपने उन्हें मिलने देनेकी भी उदारता नहीं दिखाई । जाने दीजिये, अब बहुत हुआ, उठकर बैठ जाइये । देखिये, ये आपकी अद्भुत प्रतिकृतिके समान 'दोनों कुमार आपकी गोदमें बैठनेके लिए आ पहुचे हैं ।”

उसी क्षण रामने स्मितके साथ आखे खोली । राम और सीताकी चार आखे हुईं । सीताजी लज्जित हो गईं । आखे नीची करके कुछ समयके लिए वे सोचमें पड़ गईं । इस लज्जाका कारण केवल लम्बे समयके बाद हुआ पति-मिलन और पुराने प्रणय-स्मरण ही नहीं थे, महर्षिके समयोचित वचन इस लज्जाका मुख्य कारण थे । वर्षोंसे गृह-स्थाश्रमके स्मरण-मात्रसे सर्वथा मुक्त और निरासक्त तथा अनेक वीतरागियोंके प्रेरणा-मूर्ति वाल्मीकिजी दापत्य-विज्ञानके और गृहस्थ-धर्मसे सम्बन्धित शिशुप्रेमके ऐसे ज्ञाता हैं और महासयमी होते हुए भी इतने

बड़ा रस भंडार है — उसका भान पत्ते-पहल होनेसे सीताजीका लज्जा और विस्मय भर जाता स्वाभाविक था ।

९६

सीताजी पृथ्वीमें समा गईं

जब रामने रथसे उतरकर वाल्मीकि ऋषिको भस्तर नवाकर अभिवादन किया तो वाल्मीकिजीने रामको हृदयसे लगा लिया । इस जालिगनने स्वयं ही अनक बातें कह डाली । वाल्मीकिजी अधिकतर वनमें रहते थे । महान विरागा थे । फिर भी उनके भीतरकी रस वक्तिका अनुभव तो इसके पूर्व कहे गये उनक वचनोसे वहाँ उपस्थित लागावा हो ही चुका था । प्रसन्न रस गति और जानद जातरिक वस्तुएँ हैं । अन्तरकी अनासक्ति जितनी तीव्र होगी उतना ही इन आतरिक वस्तुआका अनुभव मनुष्यको होगा ।

वाल्मीकिजीने सीताजीकी सारी कथा रामचन्द्रजाको कह सुनाई । उसमें लक्ष्मणजी वनमें सीताजीको अकेली छोड़कर अयोध्या गेट तजसे त्वर अतिम क्षण तककी सारी बातें आ गई । कुछ बातें तो महर्षिने तब-बुगको जा मनोहर गीत सिखाय थे उनमें गुथी हुई थी । वे बातें दोना कुमारोंके मुहमें हा ऋषिन रामको सुनवाई । बीणा-वादनक साथ बालकाने तालवद्ध जो नास्त्रीय मधुर संगीत गाया उसे सुनकर रामचन्द्र वृत्त प्रमत्त हुए । स्वयं वाल्मीकिजी तथा सीताजीको भी बालकाकी इस संगीत-कलासे बड़ा आश्चर्य हुआ — जानना तो हुआ हा ।

राघवन अत्यंत प्रमत्त होकर कहा ऋषिवर आप तो बान राग और अपरिग्रही हैं । आपम भला भ क्या कहूँ ? परन्तु इन पुत्रा का भ क्या द ? इन नामें भगवान रामने अपने हृदयक भाव प्रकट किये । परन्तु त्यागका द्य पीयर बन हुए कुमारोंका राज्य अथवा संपत्तिका लाभ तो स्वीकार ही नहीं सकता था । अतः जबसर दमकर दोना कुमाराने भागा पिताजा हमारे अविवकपूर्ण व्यवहारस

अनेक सैनिकोको दुःख हुआ और आपको भी हमने कष्टमें डाल दिया। इसके लिए आप हमें क्षमा कर दे, यही नम्र प्रार्थना है।”

भगवान रामने दोनों पुत्रोंको हृदयसे लगा लिया और उनके सिर पर अपना प्रेमल हाथ घुमाते हुए कहा “पुत्रो, तुम तो अपने इस पितासे भी अधिक भाग्यशाली हो, क्योंकि तुम्हें गर्भसे ही महामुनिका सत्संग और ज्ञान स्वाभाविक रूपमें मिल गया है।”

वाल्मीकिजी बोले उठे “अवश्य ही पितासे पुत्र बढ़कर है। उतावले भी कहीं ज्यादा हैं, मानो लक्ष्मण काक्यकी छूत लगी हो।”

रामचन्द्रने पूर्ति की “वीरता क्षत्रियोका सुलक्षण है, परन्तु उसमें दुस्साहस और अविवेक नहीं होना चाहिये। दोनोंकी आयुको देखते हुए ऐसी गलती होना स्वाभाविक है। किन्तु जो कुछ होता है वह भलेके लिए ही होता है।”

अब रामचन्द्र महर्षि वाल्मीकिजीकी ओर देखकर बोले “भगवन्, इन घायल सैनिकोको अपना आशीर्वाद दीजिये।” उसी समय आकाशसे वर्षा होने लगी, मानो अमृत-वृष्टि हो रही हो। एकके बाद दूसरा सैनिक आलस्य ले लेकर उठने लगा। वे उठते जाते थे और क्रमसे महामुनि वाल्मीकि, रामचन्द्रजी तथा सीताजीको प्रणाम करते जाते थे।

अब सीताजीके मनमें विचार उठा “मेरा अवतार-कृत्य अब पूरा हो चुका है। ससुरजी पहले ही चले गये। तीनों सासे भी चली गईं। यदि मैं बिना किसी रोग-शोकके सदेह चली जाऊँ, तो कितना अच्छा हो?” अपने माता-पितासे मिलनेकी इच्छा भी अब उनके मनमें नहीं रह गई थी। जीवन यदि कर्तव्य-यज्ञ ही हो, तो जो क्रिया स्वाभाविक प्रयत्नसे हो सके बड़ी होती रहे। गलतियाँ हो तो उनका परिणाम भी ऐसे साधक और साधिकायें प्रसन्नतासे सहती रहे। ऐसा स्वाभाविक जीवन कितना धन्य है।

राम सीताजीके मनके भावोंको ताड गये। उन्होंने स्वयं ऐसा निमित्त पैदा करनेका निर्णय मनमें कर लिया। लक्ष्मणजीको बुलाकर उनके कानमें रामने कहा “भाई, जानकीजीसे कहो कि ‘वर्तमान

अल्प — निराकार है, इसलिए उसे देखा नहीं जा सकता। वायुका स्पर्श हो सकता है, परन्तु वह भी आखोमें दिखाई नहीं देती। जल भी अनेक स्थानों पर अगम्य रहता है। परन्तु पृथ्वी ही एकमात्र ऐसी है, जिस पर मानव जन्म लेता है, चलता-फिरता है और मरता है। विमानमें और नौकामें भी मानव धरतीको भूल नहीं सकता।” इतना कहकर सीताजी आखे बन्द करके एकाग्र हो गईं। फिर बोली : “हे धरती माता, लकावासके समान मेरे अरण्यवासकी भी तू सदा साक्षिणी रही है। सचराचर सृष्टिको तू इस बातकी प्रतीति करा दे कि सीताके लिए एकमात्र राम ही सर्वस्व है, और रामके लिए एकमात्र सीता ही सर्वस्व है।”

देखते ही देखते धरती हिलने लगी। वह फट गई। भीतरसे एक मातृ-स्वरूपा आकृतिका मुख बाहर निकला। चारों ओर प्रकाश फैल गया। आकाशसे दिव्य पुष्पोंकी वर्षा हुई। पातालसे वाणी फूटी : ‘रघुपति राघव राजा राम, पतित-पावन सीताराम।’

वाल्मीकि ऋषि तथा रामचन्द्र भी यह देखकर चकित हो गये। क्षणभरमें उस आकृतिकी भुजायें फैल गईं। फैलती फैलती वे सीताजीके समीप पहुँच गईं। और माताकी गोदमें जैसे बालक छिप जाता है, उसी प्रकार जानकीजी उस मूर्तिकी गोदमें छिप गईं। कुछ क्षण गये और देखनेवालोंको न तो वहाँ मातृ-स्वरूपा आकृति दिखाई दी, न सीताजी दिखाई दी। फटी हुई दरार पट गई। धरती फिर पूर्ववत् हो गई। विदेह जनकको हल चलाते चलाते धरतीमें से प्राप्त हुई जानकी धरतीमें ही विलीन हो गई।

अब तो सबकी आखोमें केवल आसू रह गये थे।

भगवान् रामचन्द्र स्वयं तो जीवित थे, परन्तु उनके भीतरकी तेजशक्ति चली गई थी। आकाश-वाणी चारों ओर गूँज उठी “वर्तमान विश्वका अवतार-कृत्य पूरा हो चुका है। कोई खेद न करो। अवतार-कृत्य सफल हुआ है।”

सीताजीके सदाके वियोगसे रामको भी गहरा आघात लगा। उनकी आखोमें आसू छलछला आये। ‘शक्तिके चले जानेके बाद

शक्तोश्वरका क्या उपयोग रह जाता है — इस विचारने ऋषि मुनिया को भी दुःखा बना दिया। केवल लव कुश ही ऐसे थे जिनके चेहरे पर स्मिन् फला हुआ था। प्रिय भाताके सदाके वियोगसे वे दुःखी नहीं हुए। उनके मुख पर प्रकट हो रहा भाव मानो सबसे बह रहा था।

अतमें तो सभीको इस संसारसे जाना है। जो सफलतासे स्वधर्मका पालन करके जाता है उसके लिए रोनेका कोई कारण नहीं रह जाता। उसके जीवनसे तो हमें पवित्र प्रेरणा ग्रहण करनी चाहिये।

यन्वा अश्व ऋषिमण भगवान राम लक्ष्मण, भरत, शत्रुघ्न लव कुश और समूचा सना — सब अयाध्याके यन् मंडपके समीप आ पहुँचे। बबल सीताजी ही अनुपस्थित थी। सभाजनाके नेत्र सीताजीके दर्शनाके लिए व्याकुल थे। ऋषि वाल्मीकिन सबका बुतूल्ला सात किया। जब सीताजीके दर्शन सभी न हाँगे यह जानकर सब स्नान अत्यंत निराशा हो गये। परन्तु जब लव-कुशन सभाके सामने संपूर्ण रामायण छन्दोबद्ध रूपमें मधुर स्वरमें गा गुनाई तब सबके हृदयमें आत्माके नय प्राणाका मंचार हुआ। सबका विश्वास हो गया कि राम और साताजी जीवित प्रतीकाने समान ही बालक जगतको प्राप्त हो गये हैं।

घारी और घाबिनके हृदय रो रहे थे। उन्हें भी बाला बाला बोन आत्मानन लिया। मनुष्य तो केवल एक निमित्त है। अनुभूति निमित्त बननेवाला मानवका चान्चि कि वह व्यक्तिगत और सामाजिक गुण्डित करनेवाला जावन ध्यनात कर और संसारका इस घातका विश्वास करता है कि वह ता अनक कारणोंमें न प्रवृत्ति निमित्त एक कारण ही था। एसा जावन जाना हो मन्था और सफ़्त प्रापश्चित्त हागा।

रामक वनवागमन ककया और मथराका जगाया। साताजीप वनवागमन घारा और घाबिनका सीत मिन्नी। साताका त्याग करने का भरत मानाव स्नेहका परिगुद बना लिया। और गीतामानाके नारायणगमन घारा और घाबिनका आत्मयदाका पूण रूपम गुद कर लिया। गुद मनाका स्थान रात्रगदा नहीं परन्तु मानव हृदय है। एसा प्रकार गुद नील और मनावका मूत्र गरीर नहीं किन्तु मानव चेतना है। जहा राम है वहा अयाध्या है — गारा प्रजार मन और

मस्तिष्क हैं, उसी प्रकार जहा सीता हैं वहा आत्मनिष्ठ चेतना अवश्य है — फिर भले वे एकाकी लकामे रहे अथवा अरण्यमे रहे। महर्षि वाल्मीकि और गुरु वशिष्ठ परस्पर मिले। विदेह जनक, मुनिगण, राम, लव-कुश, हनुमान तथा प्रजाजन भी एक-दूसरेसे मिले। वन्य सस्कृति, ग्राम-सस्कृति तथा नगर-सस्कृतिका सुन्दर समन्वय हुआ। धन और सत्ताके स्थान पर सर्वत्र नीति, धर्म, स्नेह तथा सेवाकी प्रतिष्ठा पुनः स्थापित हुई।

९७

लक्ष्मणकी जल-समाधि

अश्वमेध यज्ञ समाप्त हुआ। जनकराज मिथिला लौटे। वनके ऋषि-मुनियोने वनकी ओर प्रस्थान किया। ग्राम-प्रतिनिधि अपने अपने गावके लिए विदा हुए। असुरों पर मुरोका अधिकार स्थापित हुआ। असत्यके स्थान पर सत्यकी प्रतिष्ठा हुई। जिस प्रकार सीताका कार्य पूरा हुआ, उसी प्रकार रामका कार्य भी अब पूरा होनेको आया। रामकी एक महान सगिनी तो चली गई, परन्तु दूसरा महान साथी अभी जीवित था। वह था लक्ष्मण। हम अच्छी तरह जानते हैं कि रामके बिना सीता गायद रह सकती थी, परन्तु लक्ष्मण तो रामके बिना रह ही नहीं सकते थे। लक्ष्मण थे सगुणोपासक परम भक्त। मन माने कि न माने, तो भी रामकी आज्ञाका पालन करने और सदा उनके साथ रहनेमे ही लक्ष्मण अपने जीवनकी सार्थकता मानते थे। अपने ऐसे भक्तसे भगवान भी दूर कैसे रह सकते थे? वनवासमें तो रामने लक्ष्मणको अपने साथ रखा ही था, उसके पश्चात् भी उन्हें अपनेसे कभी अलग नहीं किया। रावणके साथ लड़े गये युद्धमें लक्ष्मण जब मूर्च्छित हो गये तब राम फूट-फूटकर रोये थे। यह भक्तके प्रति भगवानका अपार प्रेम बताता है। सीताको जिस प्रकार रामने पहले ममारसे चले जानेका निमित्त मिल गया, उसी प्रकार लक्ष्मणको भी रामसे पहले जानेका एक निमित्त मिल गया।

एक बार एक जनात व्यक्ति के साथ रामचन्द्र अत्यन्त गुप्त रूप से बातें कर रह थे। उस व्यक्ति ने पहले से एकांत में बातचीत करने का राम से वचन ले लिया था। राम ने लक्ष्मण से कहा था 'लक्ष्मण इस बात का ध्यान रखना कि मेरा कोई आन न पावे फिर जानेवाला व्यक्ति कितना ही मन्त्रान बयो न हो।'

एक तो लक्ष्मण का कडा पहरा। उस पर राम की ऐसी कठार आना। फिर पूछना ही क्या? अथ सबका तो लक्ष्मण ने टाल दिया परन्तु दुर्वासा ऋषि का टालना असम्भव था। ऋषि ने स्पष्ट भाषा में कह दिया 'मुझ रावणवाला तू कौन हाता है? यदि तू राम से पूछने नहीं जायगा और मुझे राखेगा तो मेरा क्रोध भड़क उठेगा। और एक बार क्रोध भड़का तब तो मैं तेरे साथ सबको — अयोध्या मगरी के साथ सारे राज्य का क्षण भर में जलाकर भस्म कर दूंगा। लक्ष्मण दुर्वासा ऋषि का वाधको जानत थे। जो लक्ष्मण परशुराम के शोधकी हसी उड़ा सके व लक्ष्मण दुर्वासा के शोधके सामने टिक नहीं सके। उह इस बात का ध्यान न रहा। कतव्य का पालन ही सेवा निष्ठ मनुष्य का परम धर्म है। इस परम धर्म का पालन करते हुए सारा जगत भी यदि भस्मीभूत हो जाय तो उसमें सबानिष्ठ मनुष्य दोषी नहीं माना जा सकता। इसका विपरीत स्वधर्म का पालन करने वाला सबका सारे विघ्न में पूजा जाता है।'

लक्ष्मण डरते डरते राम के पास गये और बोले 'भगवन दुर्वासा ऋषि पधारे ह। व आपस मित्रने आ सकते ह? उहे मैं महा जाने दू?' राम ने साक्षात् 'जब मनुष्य का काय जगत में पूरा हो जाता है तब सचमुच काल बलवान हो जाता है। जिस लक्ष्मण को मैं अपना अन्तय आनाकारी सेवक मानता था, वह भी अपना धर्म भूत गया। लेकिन हानहार हाकर ही रहती है। मानव तो केवल एक निमित्त बनता है। केवल मनुष्य विषय परिस्थिति में ही निमित्त बनता है। परन्तु जो कुट्ट होता ■ अच्छे के लिए हा होता है।

इस विचार का व लक्ष्मणम कहन लगे 'लक्ष्मण मने तुम्हें आ आना दो था उमर पीछे एक महान हेतु था। मेरे साथ एकान्त में

ज्ञात करने जो आया था, वह कोई व्यक्ति नहीं था। वह साकार वैश्व-नियम था। वरना मैं ऐसी कठोर आज्ञा तुम्हे देता ही नहीं। लेकिन चिन्ता नहीं, जो कुछ हुआ अच्छा ही हुआ। अब काल भगवानकी आज्ञा मेरे लिए हो चुकी है। दुर्वासा ऋषिको भीतर आने दो।”

ऋषि आये। रामने आदरपूर्वक उनका स्वागत किया। प्रेमसे उन्हें भोजन कराया। उसके बाद दुर्वासा चले गये। अज्ञात व्यक्ति भी चला गया। तब रामने लक्ष्मणको बुलाकर गभीर आवाजमें कहा : “भाई, अब मेरा इस जन्मका कार्य पूरा हो गया है। अब मैं दुनियासे विदा हो जाऊंगा। तुम तो केवल इसमें निमित्त बन गये हो। परन्तु यदि स्नेहीजन भी मुझे अपना परम श्रद्धेय व्यक्ति मानते हुए मेरी आज्ञाको न समझ सके और अन्य किसी भयके वश हो जाय, तो दूसरे लोगोका तो कहना ही क्या? सामान्य मनुष्य यदि ऐसा करे, तो उसे क्षमा किया जा सकता है, क्योंकि उसकी दृष्टिमें तो जीवित रहना ही जीवन है। परन्तु आज जब मैं रामके नाते विश्व-मानवकी प्रतिष्ठा प्राप्त कर चुका हूँ, तब कर्तव्य-निष्ठाकी दृष्टिसे तुम्हारा यह व्यवहार मैं सहन नहीं कर सकता। मेरी आज्ञा केवल देहधारी रामकी आज्ञा नहीं थी, परन्तु जीवनके नये मूल्योकी स्थापना करनेवाले धर्म-स्थापककी आज्ञा थी।”

लक्ष्मण परिस्थितिकी गभीरताको समझ गये। उनकी समझमें यह रहस्य भी आ गया कि ‘रामकी अपेक्षा रामनाम अधिक महान है।’ अब हनुमानजीकी अखंड आज्ञाकारिताका रहस्य भी उन्होंने जान लिया। वे खूब पश्चात्ताप करने लगे “मेरे कारण जगतको रामके प्रत्यक्ष दर्शनसे वंचित होना पड़ेगा।” इस कल्पनासे ही लक्ष्मण काप उठे। उनकी आखे भीग गईं। परन्तु निरुपाय बन जानेके कारण ही उनसे यह अकार्य हो गया। वरना एक बार दुर्वासा मुनिसे न डरनेवाले लक्ष्मण आज दूसरोकी कल्पित आपत्तिसे क्यों डर जाते?

रामने लक्ष्मणकी मनोदशाको समझकर उन्हें ढाढस बघाया। परन्तु लक्ष्मणने कहा : “बड़े भैया, यदि जगतके आधार आप ही जानेकी तैयारी कर रहे हैं, तो मैं आपसे पहले ही क्यों न चला

जाऊ ? जाय किना म एन टण भी जीवित नहीं रहूंगा । तब फिर आरव विद्यागता दुःख भागकर परतार जातर बन्ध आरव । उद्विग्नचित्तों ही आपके आगारवाँ पातर स्वच्छाग जावन अवस्थामें प्राण छानना क्या बुरा है ?

गमस्त वातावरण करुणाग आनयान हो गया । परन्तु गमती मूक समति उह मिल गई । इगणित शरयू-नर पर जातर लम्पाने जलवे बोध ध्यानम्य हातर योगित पडनिग प्राण त्याग गिय ।

९८

भरतको उपदेश

लक्ष्मणक जानव पश्चात् रामक लिए कोई नतिर बंधन नहीं रह गया । भरतका मन इतना दुःख था कि वे रामक विद्यागता सह सकत थ । हमसे भी आग मठवर यह कहा जा सकता है कि व रामक रिक्त स्थानकी पूर्ति भरीभाति कर सक एस कुशल पासक थे । उहान समारको यह दिवा दिया था कि सावेतवे महाराजको बलानेवाला पुरप नदाग्राम जस एक छोट गावमें रहकर भा सरलतासे शासन-सत्रका सारी व्यवस्था कर सकता है । उहाने तुनिपारो यह भा सिखा गिया था कि सादगीमें जा महता जीर भव्यता है बत ठाट बाट तडक भडक अथवा बभब विलासमें नहीं है शापडामें रहकर और जटाधारी तापसका बेग धारण करव भी सुन्दर रूपमें राज्यका संचालन किया जा सकता है और जनताने हृदय पर मटरी छाप डाली जा सकती है, यद्यपि सवमाय सत्ताका राजदंड धारण करत हुए भी लोक हृदयमें एतना ऊँचा स्थान प्राप्त करना बहुत कठिन था । भर जवानामें सुंदर और आकर्षक पत्नीने रहते हुए भी विषम वासनाका वशमें रखना संभव नहा था । सत्ताके स्थान पर बठवर जाताक अगाध सागर जस हृदयमें प्रवेश करके सेवकके नामको साधक करना अतिशय कठिन था । दिन रात वैभव विलासके बीच रहकर मयासाका सांग

जीवन विताना असभव-सा था । परन्तु भरतने यह सब प्रत्यक्ष कर दिखाया था । विदेह जनककी निर्लेपतासे भी कुछ वातोमे भरतने अधिक निर्लेपता सिद्ध कर ली थी । इसीलिए तो रामायणकारने भरतके विषयमे रामसे कहलाया है “जो न होत जग जन्म भरतको, सकल धर्म धुर धरणी धरत को ? ” शायद इसीसे इस देशका नाम भारतवर्ष पडा होगा । रामके नामसे भरतने अयोध्याका शासन चलाया, इसलिए वह ‘रामराज्य’ कहा गया । परन्तु ‘रामराज्य’ की परम्परा डालनेवाले भरतका मूल्य ‘रामराज्य’ मे थोडा भी कम नही आका जा सकता ।

रामको तो भरत इतने प्रिय थे कि जब जब राम प्रेमसे भरतका आर्लिगन करते थे, तब तब देवोको भी उनसे ईर्ष्या होती थी । यह थी राम और भरतकी जोडीकी अद्भुतता ।

ऐसे प्रिय भ्राता भरतसे रामने कहा “प्रिय भरत, सीताजी गई, लक्ष्मण गये । अब मेरा सारा कार्य पूरा हो चुका है । अब मैं अपने मूल स्थानमे जाऊंगा । मेरे वनवासके समय तुमने जिस उत्साह और लगनसे साकेतका राज्य चलाया था, उसी तरह मेरे जानेके पश्चात् भी चलाना । ”

यह वाक्य सुनते ही भरत व्यथित होकर गिर पडे । कुछ क्षण पश्चात् जब स्वस्थ हुए तो बोले . “प्रभु, सीताके विना यदि राम नही रह सकते, तो रामके विना भरत कैसे रह सकता है ? सीता और लक्ष्मणके वियोगके बाद यदि राम जायगे, तो रामके वियोगके बाद रामका प्रिय भाई भरत कैसे रह सकेगा ? ”

वात सच थी । भरत निर्गुणोपासक अवश्य थे, परन्तु वे रामके परोक्ष आश्रयमे जीनेवाले निर्गुणोपासक थे । मनुष्यके जानेके बाद मनुष्यकी जड छवि तो रह सकती है, परन्तु उसका चेतन प्रतिबिम्ब एक क्षणके लिए भी नही रह सकता । इस प्रकार रामयुगकी स्नेही-जनोकी पीढीका मानो अन्त आ गया और लवयुगकी नई पीढीका नवयुग आरभ हुआ ।

भरतको हृदयसे लगाकर रामने कहा “जो महापुरुष किसी सिद्धान्तके लिए अपना वलिदान देते हैं अथवा अपना जीवन-कार्य पूरा

हो जाने पर स्वच्छाम गातिपूर्वक प्राण छोड़ते ह उनही स्थूल बायाग भले हा नाग हा जाय परन्तु मूर्ख बाया गग अमर रहती है। एमा मृत्युका म आत्महत्या नहीं मानता परन्तु अक्षय धामक लिए किया गया सदेह प्रयाण मानता ह। भाई तुम दुःखी क्या होने हा ? तुम्हारा अथवा दूसरे लागारी दृष्टिमें म बीतराग याग हाऊ ता भी गरीरके स्वाभाविक बधनास तो म भी बधा हुआ ह। जो मनुष्य जन्म लता है उसका मरना निश्चित है। जिस प्रकार तुम्ह अपने गरीर पर कोई ममता और मोह नहा है उमी प्रकार मरी सग उपन्यतिका मोह भी जब तुम्ह छोड दना चाहिये। एक समय जा धान साधन बनती है वही दूसरे समय बधन बन सकती है। इस विषयको यदि भरत भा भू जायगा ता जगतमें मूल्यवान धम टिकना कसे ?

रामके ये वचन सुनकर भरतका बड़ी गाति मिला। थ बोले

बड भया आपकी बात सही है। सच्चा प्रतिबिम्ब कभा इस बातका दुःख नहा मानता कि मूल वस्तुके बदल जानक बाद उसका क्या होगा। वह अच्छी तरह जानता है कि मूल वस्तुके कारण ही मेरा अस्तित्व है उस वस्तुके बदलते ही म भी अपन-आप बल जाऊगा। इस प्रकार सीचें ता रामके विलयके बाद भरतका विलय अपन-आप हा जायगा। तब फिर हमकी चिन्ता म क्यों कर ? मुझे सीता और लक्ष्मणमे बोध ग्रहण करना चाहिये कि आपके बिना एक क्षण भा जीवित न रह सकनवाल वे दोना आपसी छोडकर अकेले ही चले गये। वे जल्दी समज गय कि सच्चे राम बाहर नहीं किन्तु भीतर ह। किन्तु म स्वय इस मूलभूत बातको भूल गया। आपके असाम अनुग्रहसे म अपना यह भूल समझ गया ह। आपने जो कुछ कहा वही परम सत्य है। मुझ अपना आत्मामें ही राम मिल चुके ह। अब आप अपने धाम जा सकने ह।

इतनमें परम भक्त हनुमानने आगे आकर रामके चरणोंमें प्रणाम किया। रामने हाथ पकडकर उठ सडा किया और कहा 'प्रिय हनुमान अभी तो तुम्ह लम्बे समय तक इस नेामें रहना है। तुम्हारा विजय-गान चिरकाल तक इस विश्वमें गाया जाता रहेगा।'

रामचन्द्रजीका यह वरदान आज भी भारतके कोने कोनेमे यथार्थ सिद्ध हो रहा है। 'राम, लक्ष्मण, जानकी, जय वोलो हनुमानकी।' यह धुन आज भी भारतवासी गाते हैं। 'हनुमानकी जय' यानी वजरगवलीकी जय। वजरग जैसा तनवल कैसे आयेगा? निष्ठापूर्ण ब्रह्मचर्यसे।

९९

विभीषणसे

जब विभीषणने जाना कि भगवान राम इस विश्वसे अतिम विदा लेनेवाले हैं, तब वे तुरन्त लकासे रामके चरणोमे आ पहुँचे। प्रणाम करके वे बोले-

“भगवन्, आपके सद्गुणोका मुझ पर इतना गहरा प्रभाव पडा है कि मन होता है सदा आपके चरणोमे ही रहकर जीवनको सफल बनाऊ। परन्तु आपने लकाका राज्य चलानेका कर्तव्य मुझे सौपा, तबसे आज तक आपकी आज्ञाको शिरोधार्य मानकर मैंने अपना यह कर्तव्य किया है। अब मेरी आंतरिक इच्छा यह है कि आप मुझे अपने साथ चलनेकी अनुमति दें।”

राम बोले- “भाई विभीषण, कोई किसीके साथ कभी जा नहीं सकता। मनुष्यके शुभ और अशुभ कर्म ही परलोकमे उसे शुभाशुभ गति दे सकते हैं। तुम्हारे समान मित्रोको मुझसे प्रेरणा भले मिली होगी। परन्तु अन्तर्मैं तो मैं भी कर्मके नियमसे बंधा हुआ एक देहवारी ही हूँ। इसलिए सुग्रीवसे मैंने जो बात कही, उसमे भिन्न तुमसे कहूँगा। तुम्हे तो अभी लम्बे समय तक लकाका राज्य चलाना होगा। राज्यतत्र चलाना कठिन जरूर है। उसमे भी जब राज्यकी प्रजाको उलटे रास्ते पर चलनेकी आदत हो गई हो, तब प्रजाके कल्याणकी दृष्टिसे राज्यतत्र चलानेका काम अधिक कठिन हो जाता है। परन्तु किमी न किमीको तो यह कठिन काम करना ही होगा। हमारा भारत आध्यात्मिकताके मार्ग पर चल्नेवाला देश है।

परन्तु आध्यात्मिक मनुष्या की आध्यात्मिकता का बनाय रखना ही और उस विकसित करने के लिए देना राजनीतिक वातावरण बनना और तक पवित्र होना चाहिये। अर्थात् विधि और लक्ष्य देना इन मुख्य भाग की राजनीति यदि पवित्र होगा तो देना आध्यात्मिक और आर्थिक सम्पत्ति अच्छी तरह सुरक्षित रहेगा। इस वातावरण में रखकर जिस प्रकार ऋषि मुनियों के तप त्याग और आत्मिक समाज में प्रतिष्ठित करने का मने प्रयत्न किया है उसी प्रकार देना मुख्य राज्यतन्त्रों की भी पवित्र बनाय रखने की पूरी वांछना है। लक्ष्य युद्ध के समय और उसके बाद एक परम सत्ता के रूप में तुमने मद साथ रहने हुए यह सब देखा और जाना है।

राम के ये वचन सुनकर विभीषण ने कहा भगवान आपका कहना यथाथ है।

जब विभीषण ने लक्ष्य राज्य भलीभाँति चलान और देना की दृष्टि से अर्थात् विधि तथा लक्ष्य और राजनीतिक एकात्मता बनाये रखने और शांति की रक्षा करने की जिम्मेदारी अपने सिर पर ली तो राम की बड़ा सन्ताप हुआ। अन्त में एक बात की ओर भगवान राम ने फिर से विभीषण का ध्यान खींचा प्रिय विभीषण रावण की मृत्यु के बाद तुरन्त जिस बात की ओर मने तुम्हारा ध्यान नहीं खींचा उसकी ओर अब मैं तुम्हारा ध्यान खींचना चाहता हूँ। लक्ष्य का प्रजा जीवन अब स्वतन्त्र बन गया है यह जानकर मुझे अतिशय आनन्द हुआ है। लक्ष्य की जनता निरनुशासितता के अधीन रहने की आदी हो गई थी इसलिए प्राप्त स्वतन्त्रता की उस पर जो प्रतिक्रिया हुई उस भी तुमने मुश्किलता से समझा यह भी मेरे लिए सतोष की बात है। परन्तु तुम्हें अब व्यक्तिगत रूप में भी अधिक शुद्ध बनना प्रयत्न करना होगा। भारत की जनता की यह एक बड़ी कमजोरी है कि वह अपने राजा के बुरे व्यवहार का अनुकरण करने के प्रयोग में तुरन्त पस जाती है। इसीलिए भारत में कहा गया है यथा राजा तथा प्रजा और राजा कालस्य कारणम्। इस कारण राजा का कर्तव्य बहुत बढ़ जाता है। तुम जानते ही हो कि राज्य के प्रत्येक नागरिक का चरित्र विकसित होता रहे इसके लिए मने

जाम्बवतसे

जाम्बवन्तसे भगवान् रामने कहा भाई जिस प्रकार कुग एवं, अगद और विभीषणके समान राज्यतन्त्रका संचालन करनेवाले राज-पुरपाकी देशको आवश्यकता है उसी प्रकार बात्मीवि वशिष्ठ और विश्वामित्रके समान विविध प्रकारसे निरन्तर घमकायमें रत रहनेवाले साधु-पुरुषाकी भी देशको आवश्यकता है। हनुमान और जाम्बवन्त जसे सेवकाकी राष्ट्रको इनसे भी अधिक आवश्यकता है। मैं मानता हूँ कि मेरी अनुपस्थितिमें तुम लोग सबसे बड़ा काम करनेवाले हो। एक बात अवश्य है कि तुम्हारे जसे सेवकाके नाम ससारमें प्रसिद्धि नहीं पायेंगे। बहुत कम लोग तुम्हें जानेंगे। बदाचित्त तुम्हारे जसे लोगोको अप्रिय धननका खतरा भी उठाना पडगा। फिर भी भरी दृष्टिसे देशके महत्त्व पूरा भग तो तुम्हें धननवाले हो क्योंकि देशके समस्त शुद्ध परिवलोको एकसाथ जोड़नेका काय जानें या अनजाने तुम्हीं सब करोगे। देशके शुद्ध परिवलाको जोड़कर एक करनेका काय जब तक चलता रहेगा तब तक परराष्ट्रका कोई भय भारतको नहीं रहेगा। राष्ट्रको आंतरिक बुराईयाका जो बड़ेसे बड़ा भय हो सकता है वह भी तुम लोगोके द्वारा सरलतासे दूर हो सकेगा। इस कारणसे मैं तो देश विदेशके सच्चे राजदूत तुम लोगोको ही मानता हूँ। तुम्हारे जसे पुरुष ही देश विदेशके साथ स्थूल और सूक्ष्म संपर्क भी अधिक मात्रामें रख सकते हैं। सबसे बड़ी बात तो यह है कि ऐसे लोगोको साधु कहा जाय या न कहा जाय परन्तु वे ही सबत्र साधुताका प्रसार कर सकते हैं। तुमसं भुन चार मुख्य बातें कहनी हैं जो मैं जानसे पहले बता दूँ। दत्तना कहकर राम कुछ क्षण रुक गये।

परन्तु जाम्बवन्तके हवायुजान उनका सकोच मिटा दिया। रामकी वाग्धारा फिर बहने लगी प्रिय मित्र किष्किचामें हमारा मिलाप

हुआ तबसे आज तक तुम मेरे साथ ही रहे हो। केवल सीता ही नहीं, परन्तु मेरा सारा परिवार तुमसे अच्छी तरह परिचित है। इसी प्रकार किष्किन्धाके राजनीतिक परिवर्तनके बाद लकाके युद्धमें सम्मिलित होने तथा वहासे अयोध्या आनेके कारण तुम मेरे राष्ट्रीय महत्त्वके कार्योंके भी साक्षी रहे हो। इस बातको भी तुम अच्छी तरह समझ चुके हो कि सच्चा और मूलभूत कार्य तो आत्मबलसे ही होता है। हनुमानके जितना आत्मबल तुममें चाहे न हो, परन्तु हनुमानके नेतृत्वमें तुम सबकी श्रद्धाका होना पर्याप्त है। विवेक-बुद्धि तथा सक्रियताके गुणोंके कारण तुम और तुम्हारे जैसे दूसरे लोग अधिक काम कर सकेंगे। फिर भी तुम सब मेरी इन बातोंको ध्यानमें रखकर ही काम करना

१ नेताका अधःश्रद्धासे अनुसरण न करना। साथ ही नेताका त्याग भी न कर देना। आपसमें चाहे जितने मतभेद तुम्हारे बीच हो, परन्तु सगठनको कभी टूटने न देना।

२ जिस प्रकार तुम अपने सगठनकी रक्षा करोगे उसी प्रकार विविध प्रकारके साधु-सत्तो, राज्य और साधारण जनताके बीचका सम्बन्ध न टूटे इसका भी ध्यान रखना। भारतको साधुओंकी सस्थाकी सदा ही आवश्यकता रहेगी। इसलिए भारतकी यह सस्था समाजसे अलग पड़ जाय अथवा स्थान-भ्रष्ट हो जाय, तो भी उसे पुनर्जीवित किया जा सकता है। यह कार्य बड़ा महत्त्वपूर्ण है, जिसे तुम लोग ही करनेकी सामर्थ्य रखते हो।

३ मुहसे कम बोलना, तुम्हारे कामको ही बोलने देना। अर्थात् किसी क्षेत्र, सस्था, व्यक्ति अथवा भावनासे बंध मत जाना और फिर भी तुम्हारी सस्थाके अग वने रहकर उस तटस्थ सस्थाको मजबूत बनाना। अपने व्यक्तित्वको उसमें विलीन कर देना।

मैंने जिन नये मूल्योंकी स्थापना की है उन्हें मेरे ही उत्तराधिकारी यदि हानि पहुंचाएँ, तो उनका भी तुम विरोध करना। यह बात मत भूलना कि इन मूल्योंका देशके प्रत्येक गांवमें प्रचार और प्रसार करनेका काम अभी बाकी है। यह काम तुम लोग और पुनर्जीवन प्राप्त किये हुए सन्त पुरुष ही कर सकते हैं।” -

जाम्बवत, नल नील आदि सब साधियाने नतमस्तक होकर भगवान रामका उपदेश ग्रहण किया। सबन माना कि भगवान रामफ चले जानके पश्चात् उनका काय हनुमान जस परम भक्तक नतत्वमें सगठित होकर हमें ही मुख्यत करना होगा। हम साधु नहीं ह, परन्तु साधुओंसे भी बड़ा चढा समय हमें ही पालकर दुनियाको िखाना है। यह बात भी उन सबको स्पष्ट समझमें आ गई कि सत्ता, धन और प्रसिद्धिने दूर रहे बिना ऐसी तटस्थ सस्थाका अग नहीं बना जा सकता।

१०१

कुशको राजगद्दी

गुरु वशिष्ठको अभिषादन करके रामचन्द्र बोले म अयोध्याका राजगद्दी लवको नहीं परन्तु कुशको सौंपता हू।

इसके बाद कुशकी जोर देखकर रामने कठा मरी अनुप स्थितिमें भरतके द्वारा बलाय गय राज्यकी तथा बनवासके बाद अयोध्या लौटकर मरे द्वारा बलाय गय राज्यकी मुख्य राजनीतिकी तुम अच्छी तरह रक्षा करना। म उत्तराखण्डका महान समद्विगाली राज्य प्रिय पुत्र लवको देता हू। भरतके पुत्राको दक्षिण दिगाकी राज्यश्री सौंपता हू। भाई लक्ष्मणके सुपुत्रास पश्चिमके कुछ राज्यभागकी देखभाल करनेका आग्रह करता हू। गन्धर्वके पुत्राको तो ममुरा और विद्रव नगरके राज्य पहल्ले ही साप जा चुके ह। हे कुश राज्यको म बहुत बड़ दायित्वकी वस्तु मानता हू। जिस प्रकार म अपने पुत्राको और अपन भाइयके पुत्राका विमाकी दया पर जीनके लिए नहीं छोड जाता और चाहता हू कि व अपनी अपनी गतिका उपयोग अपन विमागाके प्रजाजनाकी सवामें कर, उमी प्रकार तुम सबम म यह अपेक्षा रखता हू कि सामान्य जनता तथा राज्यनत्रक कमचारिया तथा अधिकारियोंके साथ भी एकवाक्यता बनी रह। इसक लिए तुम सब त्यागके मंत्रको मामन रखकर जावन व्यनीत करना।

“परन्तु हे प्रिय पुत्र, तुमसे यह बात विशेष रूपसे कहता हूँ, क्योंकि ये सब राज्यभाग स्वतंत्र रूपसे चले, तो भी उनका लक्ष्य तो अयोध्याकी ओर ही रहेगा। किष्किन्वा और लकाके राज्य भी अयोध्याके राज्यको अपने सामने रखकर ही अपना राजकाज चलायेंगे। हे कुश, यह बात सदा ही याद रखना कि राजा सत्तावीश नहीं है, परन्तु प्रजाका एक नम्र सेवक है। ‘एक मनुष्य या एक वर्ग जो कहता है, उसकी परवाह क्यों की जाय?’ ऐसा अभिमान प्रजाका नम्र सेवक कभी नहीं रख सकता। जैसे राज्यका धन प्रजाका धन है, वैसे ही एक मनुष्य अथवा एक वर्गकी आवाज भी प्रजाकी आवाज है — ऐसा मानकर ही राजाको चलना चाहिये। सभी लोगोको एकसाथ प्रसन्न नहीं किया जा सकता। लोकप्रिय बननेके लिए राजा कभी सत्यको हानि नहीं पहुँचा सकता। परन्तु इस बातका तो उसे सदा ध्यान रखना ही चाहिये कि राज्यके एक भी मनुष्यके मनमें राज्यके सत्य और न्यायके बारेमें शका न बढे।”

गुरु वशिष्ठ हसकर बीचमें बोल उठे “परन्तु बड़े पुत्र तो लव ही माने जायेंगे न?”

रामचन्द्रने नम्रतासे उत्तर दिया “गुरुदेव, आपका कहना सत्य है। परन्तु बड़े पुत्रको ही राज्यकी सारी जिम्मेदारी नहीं दी जानी चाहिये। मैंने अपने विषयमें भी आपसे यही निवेदन किया था। पिताजीने जब राज्यकी सारी जिम्मेदारी मुझे सौंपी तब भी मैंने आपके समक्ष अपनी शका रखी थी। आज मैंने अपने उत्तराधिकारियों तथा अपने कुटुम्बीजनोमें उस जिम्मेदारीको बाँट दिया है। इसी प्रकार कुश छोटा है तो भी उसे अयोध्याकी राजगद्दीकी जिम्मेदारी मैंने सौंपी है। वैसे तो लव-कुश दोनों समान हैं। और मेरे नम्र मतसे तो दोनों ही धर्म्य पुत्र भी हैं, क्योंकि दोनों एकसाथ एक ही समय पैदा हुए हैं। फिर भी यदि कुश छोटा माना जाय, तो भी प्रचलित परम्परामें यह परिवर्तन आज आवश्यक हो गया है। भविष्यमें किसी भी लिंगके अथवा किसी भी वर्णके मनुष्य भी राज्यकी जिम्मेदारियाँ

समाप्त मकेगे क्याकि अन्तमें तो गुण और कमस ही वण और लिंगक वापभन निधारित हान चाहिये ।'

गुरु वशिष्ठन अत्यन्त प्रसन्न होकर जोन ' जो बात वणकि लिए सच है वही चार आश्रमाके लिए भा सच होगी । कमस न तो साद आश्रम ऊचा है न नीचा है । जा आश्रमा गुण-कर्मोंस ऊचा उठना, वहा ऊचा माना जायगा, और उस आश्रमाका आश्रम भी उतना ही ऊचा माना जायगा । '

१०२

अतिम सन्देश

भगवान रामन परिवारक सदस्या मिथा तथा भारतक राज्याके लिए अपना जा अन्तिम सन्देश दिया वह मुन्तर प्ररक और मागल्लक था । उनके बाप दवगण और ऋषि मुनि भी आ पहुचे । रामने ऋषि मुनियाक चरणामें भक्तिभावसे नमस्कार किया तथा दवताआना धन्य था दिया । दवताभान वहा आपन मानव-जगतका उद्धार करनवाला सर्वोच्च वाप पूरा कर दिया और मगलमय भविष्यका सूचक सन्देश भी दिया । अब हमें कुछ कहिये ।'

रामचन्द्र बाप अब तक आप सब मानव-जगत और प्राणी जगतक परम शिष्टिष्टु मिता मान जानवाल ब्रह्माजीक प्रति शान्तर और विश्वास रखेंगे तब तक आप सबक लिए भी परम कल्याणका माग सुन सग्या । परन्तु यदि बमव विलासमें जामक होकर आप उनकी आज्ञाका अवगणना करण तो आप स्वयं भा नाच गिरण और समारको भा पतनके माग पर ल जानक कारण बनैंगे । अब आप सबस मरी प्रायना है कि बमव विश्रमका जा भा मामसा आपका मिता है या भविष्यमें मिथ्या श्रमका ब्रह्माजीका समस्त प्रसाद लिए सग्य उपयोग काजिये । समस्त प्रसापति ब्रह्माजी भा आपस प्रमण हान और समस्त आशाधिक आशास भा आपका मिथ्य । माधक जावनमें जम जम

ऋद्धि, सिद्धि, समृद्धि और कीर्ति बढ़े, वैसे वैसे उसे अधिकाधिक त्यागी, तपस्वी, नम्र और सहनशील बनना चाहिये।” देवताओं पर रामके वचनोंका गहरा प्रभाव पड़ा।

इसके बाद ऋषि-मुनियोंकी ओर देखकर राम बोले “पूज्य मुनिवरो, आपके चरणोंमें तो मैं बार बार प्रणाम ही कर लू।” ऋषि-मुनियोंकी आँखोंमें हर्षके आसू उमड़ आये। ससारके महापुरुष रामको बार बार नमस्कार करते देखकर वे सब बोले “आप गृहस्थाश्रमी हैं, फिर भी अन्य लोगोंके समान हम सबके भी आप उतने ही पूज्य भगवान रामचन्द्र हैं। अतः अंतिम विदाके समय हम लोगोंको भी आप अपना सन्देश देते जाइये।”

भगवान रामचन्द्रने कहा “पूज्य मुनिवरो, आप तो हृदय तथा देह दोनों दृष्टिसे पूजनीय हैं। आप भारतीय सस्कृतिके प्राण हैं और भविष्यमें आप अपने इस स्थानकी शोभा अधिक बढ़ायेगे, क्योंकि आप सबके मनमें सच्चे गुणोंका अतिशय आदर दिखाई देता है। आपसे भला मैं क्या कहूँ? मुझे लगता है कि जब तक यह देश ऋषि-मुनियोंके त्याग और तपकी सच्ची पूजा करके चरित्रका ही मूल्य अधिक आकेगा, तब तक इस देशके भाग्यमें विश्वका गुरुपद सदा लिखा ही रहेगा। त्यागी और तपस्वी मुनियोंको भी इस देशमें सदा सद्गुणोंके उपासक रहनेकी तथा विविध प्रकारके मतभेदोंके बीच जनताके जागतिक प्रश्नोंमें अहिंसक मार्गदर्शन देते रहनेकी सतत सावधानी रखनी होगी। यदि वे सकुचित सीमाओंके भीतर बन्द हो जायेंगे और विश्वके जैसा विशाल हृदय न रखकर व्यक्तिगत अथवा समूहगत अहंकारमें आनन्द मानते हुए सद्गुणोंकी पूजाको भूल जायेंगे, तो उनकी उज्ज्वल कीर्ति लुप्त हो जायगी। इसके फलस्वरूप भारतको और सारे जगतको बहुत बड़ी हानि पहुँचेगी। परन्तु भारतका तेज ही कुछ ऐसा है कि उसके ऋषि-मुनि यदि स्वयं सावधान न रहे, तो यथासम्भव उन्हें सावधान करनेवाली विभूति भी इस देशमें उत्पन्न हुए बिना रह नहीं सकती। ऐसी परिस्थिति पैदा हुई तो इतना अन्तर अवश्य पड़ेगा कि जनतामें पुनः ऋषि-मुनियों,

धम जीर ससृष्टिके प्रति थढ़ा पग्न करनके लिए थोडा त्याग और बलिदान करना पड़गा और इस काममें विलम्ब नो होगा।

उपस्थित ऋषि मुनियोंने थढ़ापूवके गमचढ़की यह बात वाणा सुनी। सरयू नदीके पवित्र तट पर एतना सद्गुरु भगवान रामन सबको लिया कि घर-र-र आवाज करता एक जलौकिक विमान मानो जाकर वहां टहर गया हो, इस प्रकार सब उपस्थित लोगका प्रयत्न-वन दिया देने लगा। एक ओर भरत जल समाधिमें लान हुए और सुग्रीव मृग विष्णामें विलीन हो गये। दूसरी ओर राम विमानसे बैठे विमान आनागकी ओर उठा और नुरत लुप्त हो गया। अब तट पर खड़े हुए लोगोंका आवागमन बरमनवाली पुण्यकण्ठि हो लिया देती थी दूसरा कहा कुछ लिखाई नहीं पड़ता था। देव, ऋषि मुनि मानव और पशु सब एक समय तक आवागमने मानव एकटक देखत रहे और अंतमें अपन अपन स्थानका चले गये। सबके अंत करणसे भगवान रामके अनेक पवित्र स्मरण दन्तासे अतिवृत्त हो गये।

*

रामायणका यह पवित्र सवाल जिस प्रकार निबन्धावलीके वाच चला उसी प्रकार वाचमगुण्ठी और गान्धर्वे बीच भी चला था। अब यह सवाद मानव और मानवके वाच चल्ता है। हम जाना रखें कि हम गाथापनमें थोड़ा रुपांतर प्राप्त करके सत्य अहिंसासे आनमोत यह रामायण शुद्ध जनताके द्वारा ससारमें पुन अभिनवमें आयगी और राम कालके सच सबजन माय जावननका प्रत्येक गाव प्रत्येक घर और प्रत्येक व्यक्तिका पुन अभिनवपूर्ण परिचय करायेगा।

